Ph.D. Thesis

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में राष्ट्र संकल्पना

Navjagarankaleen Hindi Kahaniyom Meim Rashtra Sankalpana

Thesis Submitted to

Cochin University of Science and Technology

for the award of the Degree of

Doctor of Philosophy

In

HINDI

Under the Faculty of Humanities

By

जेस्ना रहीम

JESNA REHIM

Dr. R. SASIDHARAN
Professor
Head of the Department

Dr. K. VANAJA
Professor
Supervising Teacher

Department of Hindi
Cochin University of Science and Technology
Kochi - 682 022

January 2020

CERTIFICATE

This is to certify that this thesis entitled **"Navjagarankaleen Hindi Kahaniyom Meim Rashtra Sankalpana"** is a bonafide record of research work carried out by **JESNA REHIM** under my supervision for **Ph.D.** (Doctor of Philosophy) Degree and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any university. All the relevant corrections and modifications suggested by the audience during the pre-synopsis seminar and recommended by the Doctoral committee of the candidate has been incorporated in the thesis.

Dr. K. VANAJA
Professor
Supervising Teacher

Department of Hindi
Cochin University of Science &
Technology
Kochi - 682 022

Place: Cochin
Date : .01.2020

DECLARATION

I hereby declare that the work presented in this thesis entitled **"Navjagarankaleen Hindi Kahaniyom Meim Rashtra Sankalpana"** based on the original work done by me under the guidance of **Dr. K. VANAJA**, Professor, Dept. of Hindi, Cochin University of Science and Technology, Cochin - 682022 and no part of this thesis has been included in any other thesis submitted previously for the award of any degree in any other university.

JESNA REHIM
Department of Hindi
Cochin University of
Science and Technology
Kochi - 682 022

Place: Cochin

Date : .01.2020

पुरोवाक्

पुरोवाक्

स्वतंत्रता से पहले जिस राष्ट्र की माँग भारतवासी कर रहे थे, उस राष्ट्र की ज़रूरतें स्वतंत्रता के 71 वें वर्ष के बाद भी पूर्ण नहीं हुई हैं। 2007 में भारत के पहले स्वतंत्रता संग्राम के रूप में जानने वाले 1857 की लडाई का 150 वर्ष पूरा हुआ था, तब से भारतीय साहित्य में तथा भारतीय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नवजागरण के महत्व की चर्चायें प्रबल होने लगीं। नवजागरणकाल में राष्ट्र संकल्पना रूपायित होने के पीछे का प्रमुख लक्ष्य था 'भारत की स्वतंत्रता'। उस लक्ष्य तक पहुँचने केलिए स्वदेशी भावना की महती भूमिका रही थी। उस स्वदेशी भावना को 'राष्ट्र संकल्पना' नाम से अभिहित किया जा सकता है। स्वतंत्रता तक की सफर में अनेक पड़ावों से गुज़रना पडा। उसका पहला पड़ाव रहा '1857 की लडाई'। जाति, वर्ग, वर्ण, धर्म, अर्थ, अधिकार, शिक्षा आदि अनेक भेद-भाव भारत में मौजूद थे। लेकिन देश में पहली बार समन्वय की भावना जगाने में 1857 की लडाई समर्थ हुई। इसमें राष्ट्रीय भावना का अभाव था और इसका स्वरूप क्षेत्रीय था। एकता का भाव सिर्फ अपने दुश्मन को याने अंग्रेज़ों को पहचानने में मात्र था। इसलिए 1857 के विद्रोह की पराजय ने यह सिखाया कि औपनिवेशिक शक्तियों से लडने केलिए अपने आप विभिन्न क्षेत्रों में मौजूद भेद-भाव मिटाना ज़रूरी था। उस संदर्भ में साहित्य का योगदान विशेषतः ध्यातव्य है। इसलिए राष्ट्र निर्माण में अहं भूमिका निभोनेवाली सामाजिक,

धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थितियों को नवजागरणकालीन कहानियों में तलाशना समय की माँग है।

प्रस्तुत शोध का विषय है **नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में राष्ट्र संकल्पना**। अध्ययन की सुविधा के लिए विषय को पांच अध्यायों में विभाजित किया गया है:-

प्रस्तुत शोध का पहला अध्याय है, **'राष्ट्र': एक अवधारणा**। इसमें भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों की राष्ट्र संबंधी परिभाषायें देकर आधुनिक राष्ट्र की अवधारणा और राष्ट्र रूपायति के लिए ज़रूरी तत्वों पर विचार किया गया है। साथ ही भारत की परंपरा, संस्कृति और समाज, उपनिवेश के भारत में राष्ट्र संकल्पना की रूपायति, विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक आंदोलनों और साहित्य के माध्यम से उसके क्रमिक विकास पर भी विचार किया गया है।

दूसरा अध्याय है, **नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियाँ: एक परिचय**। इस अध्याय में नवजागरणकालीन वैविध्यपूर्ण कहानियों का परिचय दिया गया है। प्रारंभिक कहानियों से लेकर, पौराणिक, ऐतिहासिक, व्यंग्य, तिलस्मी-ऐय्यारी, जासूसी, राष्ट्रीय चेतना की कहानियाँ, प्रतिबंधित कहानियाँ, अचर्चित कहानियाँ और उस समय की महिला कहानिकारों की कहानियों की भी चर्चा की गयी है। ये कहानियाँ भारत की राष्ट्र संकल्पना का नया मार्ग दिखा रही थीं। यह समझकर अंग्रेज़ों ने कई कहानियाँ प्रतिबंधित की गयी थीं। इन

कहानियों का उल्लेख अध्येताओं के लिए फायदामंद निकलेगा।

तीसरा अध्याय है, **नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में राजनैतिक संकल्पना।** भारत की राजनैतिक संकल्पना की शुरुआत गुलामी से पीडित जनता की स्वतंत्रता बोध से हुई थी। इस अध्याय में जनता के व्यक्ति स्वातंत्र्य, राष्ट्रीय क्रांति और अंग्रेज़ों का अत्याचार, सुदृढ़ राजनीतिक, प्रशासनिक व्यवस्था, व्यापार की प्रधानता, औद्योगीकरण का खुला चित्रण आदि पर चर्चा करके राष्ट्रीय भावना और राष्ट्रीय एकता पर विचार किया गया है। परतंत्रता से पीड़ित स्वाभिमान जनता ने अपने देश के स्वशासन की माँग की । भारत की राजनैतिक संकल्पना की इस शुरुआत ने देश का बाहरी ढाँचा दृढ़ बनाने में सहायता प्रदान की।

चौथा अध्याय है, **'नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सामाजिक संकल्पना'।** व्यक्ति विकास से शुरु होनेवाली भारत की सामाजिक संकल्पना परिवार और फिर समाज के विभिन्न स्तरों में समन्वय का संदेश देता है। समाज में व्याप्त लिंग, वर्ग, वर्ण, धर्म, जाति, भेद-भाव आदि को मिटाने से यह संकल्पना सफल होगी। इस अध्याय में शिक्षा का महत्व, स्त्री, दलित और बच्चों की उन्नति, विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं जैसे सामंतीय, ज़मींदारी, पूँजिपति, महाजनी सभ्यता, अमीर-गरीब द्वन्द्व आदि की चर्चा की गयी है। मानवीय मूल्यों पर आधारित यह सामाजिक समन्वय ही भारत की सामाजिक संकल्पना का मूल स्वर है।

पाँचवाँ अध्याय है, **'नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सांस्कृतिक संकल्पना'**। इस अध्याय में प्रस्तुत कहानियों के माध्यम से भारत की लोक संस्कृति, प्रकृति की संस्कृति, समन्वय की भावना, वेश-भूषा, भाषा, त्योहार-मेला, प्रकृति और मानव का रिश्ता आदि पर विचार प्रस्तुत किया गया है।

अंत में उपसंहार है। इसमें राष्ट्र संकल्पना संबंधी जिन निष्कर्षों को प्राप्त हुआ उसको प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की प्रोफसर डॉ. के. वनजा जी के निर्देशन एवं निरीक्षण में संपन्न हुआ है। उनकी विद्वता, आत्मीयता, असीम ज्ञान, बहुमूल्य सुझाव एवं मार्ग निर्देशन से ही मेरा यह शोध प्रबन्ध संपन्न हुआ है। ज़िन्दगी की विभिन्न चुनौत्तियों को आत्मबल के साथ सामना करने का तरीका उन्होंने ही मुझे सिखाया। उनके गंभीर व्यक्तित्व का प्रभाव हमेशा मेरे जीवन का आशीर्वाद रहेगा । मेरे शोध कार्य की ही नहीं, बल्कि मेरे जीवन में भी आप मार्ग निर्देशक रही है। प्रिय गुरुवर वनजा जी, आपके सामने मैं असीम आभार प्रकट कर रही हूँ।

मेरे शोध कार्य के विषय विशेषज्ञ कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के आचार्य डॉ. एन. मोहनन जी के प्रति मैं आभारी हूँ। यह मेरा अनुग्रह है कि आप जैसे स्नेहपूर्ण, ज्ञानी और आदर्श गुरुवर को विषय विशेषज्ञ के रूप में प्राप्त हुआ। शोध कार्य को संपन्न बनाने में आपके

निदेशन आद्यंत सहायक बना है । प्रिय मोहन सर, आपको मैं तहेदिल से कृतज्ञता अदा करती हूँ।

विभाग के अन्य अध्यापकों को भी इस समय स्मरण करती हूँ और आभार प्रकट करती हूँ।

इस शोधकार्य की पूर्ति में हिन्दी विभाग के पुस्तकालय, विश्वविद्यालय के पुस्तकालयों एवं वहाँ के कर्मचारियों के प्रति मैं कृतज्ञता अदा करती हूँ।

मेरे शोध के सभी मोडों पर उपस्थित दोस्तों को इस वक्त स्मरण कर रही हूँ। डॉ. प्रत्युषा, राधिका, रेवती, शिल्पा, अभिरामी आदि के प्रति विशेष आभार प्रकट करती हूँ। मेरे अन्य सभी मित्रों को भी इस वक्त स्मरण कर रही हूँ।

मेरा यह शोध प्रबंध मेरे माँ-बाप की प्रार्थना एवं प्रोत्साहन का फल है। 'उम्मी', 'अबी' आपके स्नेह मेरी ताकत है, खुशी मेरी प्रेरणा है। यह शोध प्रबंध आप लोगों को समर्पित करती हूँ। मेरे बच्चे 'लीज़ा' और 'ज़ारा' को भी इस वक्त स्मरण कर रही हूँ। उनके प्रति मेरे दायित्वबोध ने मुझे यह शोधकार्य जल्दी पूरा करने केलिए प्रेरणा दी। मेरी बहन जम्ना और जीजू सहीर, भाई जाज़िर और शेफू, निया सबके प्रति मैं आभारी हूँ, जिनकी असीम प्रेरणा इस शोधकार्य को सार्थक बनाने में सहायक रही है।

इन सबके आगे इस शोध प्रबंध को गतिशील बनाने में मुझे हिम्मत और ताकत देनेवाले परमेश्वर से मैं कृतज्ञ हूँ।

मैं यह शोध प्रबंध विनम्रता के साथ विद्वानों के सामने प्रस्तुत कर रही हूँ। इसकी कमियों और गलतियों केलिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

सविनय

जेस्ना रहीम

शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग
कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
कोच्चिन - 682 022

तारीख : .01.2020

विषयप्रवेश

पृष्ठ संख्या

पहला अध्याय 1-74

राष्ट्र एक अवधारणा

1.1 राष्ट्र शब्दः अर्थ और परिभाषा

1.1.1 व्युत्पत्तिपरक अर्थ

1.2 आधुनिक राष्ट्र की अवधारणा

1.3 राष्ट्र की रूपायति केलिए आवश्यक तत्व

1.3.1 इतिहास

1.3.2 भौगोलिक सीमा

1.3.3 राजनीति प्रशासन और अर्थ व्यवस्था

1.3.4 संस्कृति

1.3.5 भाषा

1.3.6 जाति

1.3.7 धर्म

1.4 राष्ट्र और देश

1.5 राष्ट्रीयता

1.6 भारत में राष्ट्र संकल्पना

1.6.1 गाँधीजी

1.6.2 टागोर

1.6.3 नेहरू

1.6.4 अंबेडकर

1.6.5 भारत की परंपरा और संस्कृति

1.6.6 भारतीय समाज

1.6.7 उपनिवेश भारत

1.6.7.1 भारतीय परंपरा को शून्य दिखाने की कोशिश

1.6.7.2 व्यापार की शुरुआत

1.6.7.3 कृषि, व्यापार, कुटीर उद्योगों का नाश

1.6.7.4 ब्रिटिश पूँजीवाद का उदय

1.6.7.5 प्रशासनिक केन्द्रीकरण और अंग्रेज़ी की प्रतिष्ठा

1.6.8 भारतीयों में राष्ट्रीयता का उदय

1.6.8.1 संचार माध्यमों का आरंभ

1.6.8.2 नवजागरण

1.6.8.3 1857 का विद्रोह

1.6.9 नवजागरणकालीन सामाजिक और धार्मिक आंदोलन

1.6.9.1 बंगाल से शुरुआत

1.6.9.1.1 राजाराम मोहन राय और ब्रह्म समाज

1.6.9.2 थियोसफ़िकल सोसाइटी

1.6.9.3 महाराष्ट्र से नवजागरण

1.6.9.3.1 केशव चंद्र सेन और महादेव गोविन्द रानडे

1.6.9.3.2 ज्योतिबा फुले

1.6.9.3.3.महाराष्ट्र के अन्य प्रवर्त्तक

1.6.9.4 उत्तर से दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज

1.6.9.5 स्वामी विवेकानंद और रामकृष्ण मिशन

1.6.9.6 केरल में नवजागरण

1.6.9.6.1 नारायण गुरू

1.6.9.6.2 अय्यन काली

1.6.10 धार्मिक उन्नति

1.6.11 व्यक्ति स्वातंत्र्य पर बल

1.6.12 स्त्री की प्रतिष्ठा

1.6.13 दलितों की उन्नति

1.6.14 किसान विद्रोह

1.6.15 नवजागरणकालीन राजनैतिक आंदोलन

1.6.15.1 इल्बर्ट बिल से असहमति

1.6.15.2 वेर्नाक्युलर एक्ट

1.6.15.3 भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस

1.6.15.4 बंग-भंग आंदोलन

1.6.15.5 असहयोग, स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन

1.6.15.6 रौलत बिल और जालियानवाला बाग

1.6.15.7 किसानों की उन्नति और अखिल भारतीय कम्यूनिस्ट सम्मेलन

1.6.16 नवजागरण और आर्थिक उन्नति

1.6.17 नवजागरण में मुसलमानी योगदान

1.6.18 नवजागरणकालीन सांस्कृतिक उन्नति

1.6.18.1 भारतीय कला, संगीत और नृत्य की प्रतिष्ठा

1.6.18.2 भारतीय भाषाओं की प्रधानता

1.6.18.3 हिन्दी - उर्दू

1.6.18.4 हिन्दी भाषा की प्रतिष्ठा और राष्ट्रीयता की मांग

1.6.18.4.1 पत्र-पत्रिकाओं का योगदान

1.6.18.4.2 साहित्य का आविर्भाव और राष्ट्रीय अस्मिता का रूपायन

निष्कर्ष

दूसरा अध्याय 75-113

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियाँ: एक परिचय

भूमिका

2.1 कहानी: अर्थ और परिभाषा

2.2. हिन्दी की प्रारंभिक कहानियाँ

2.2.1 सरस्वती पत्रिका का योगदान

2.2.1.1 अन्य पत्रिकाएँ
2.3 बीसवीं सदी की प्रथम कहानी
2.4 अनूदित कहानियाँ
2.5 पौराणिक आख्यानों पर आधारित कहानियाँ
2.6 ऐतिहासिक कहानियाँ
2.7 व्यंग्य कहानियाँ
2.8 राष्ट्रीय उन्नति की कहानियाँ
2.9 घटना प्रधान और जासूसी कहानियाँ
2.10 आदर्शोन्मुख और यथार्थवादी कहानियाँ
2.11 रोमानी कहानियाँ
2.12 मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
2.13 उपदेशात्मक कहानियाँ
2.14 अन्य मौलिक कहानियाँ
2.15 अन्य प्रमुख कहानियाँ
2.15.1 प्रेमचन्द की कहानियाँ
2.15.2 प्रसाद की कहानियाँ
2.16 अचर्चित कहानियाँ
2.17 महिला कहानिकारों की कहानियाँ
2.18 प्रतिबंधित कहानियाँ
निष्कर्ष

तीसरा अध्याय 114-141

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में राजनैतिक संकल्पना

भूमिका
3.1 राष्ट्रीय क्रांति और अंग्रेज़ों का अत्याचार

3.2 विदेशी क्रान्ति से प्रेरणा

3.3 विज्ञान का महत्व

3.4 औद्योगीकरण बनाम पूंजीवाद

3.4.1 बाज़ारीकरण की जड़

3.5 धर्म और राजनीति

3.5.1 सांप्रदायिकता का प्रतिरोध

3.6 गुलामी से मुक्ति

3.6.1 व्यक्ति स्वातंत्र्य

3.6.2 आर्थिक स्वतन्त्रता

3.7 देश प्रेम

3.7.1 अहिंसा

3.7.2 अंग्रेज़ी षड्यंत्र का खुला चित्रण

3.73 अशिक्षित शासकों पर व्यंग्य

3.8 भौगोलिक सीमा

निष्कर्ष

चौथा अध्याय 142-191

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सामाजिक संकल्पना

भूमिका

4.1 व्यक्ति विकास

4.1.1 शिक्षा का महत्व

4.2 पारिवारिक दृढ़ता

4.2.1 माता-पिता-संतान

4.2.2 पती-पत्नी

4.2.3 भाई-भाई

4.2.4 भाई - बहन

4.2.5 विमाता

4.26 माँ-बेटा

4.3 समाज

4.3.1 स्त्री की उन्नति

4.3.1.1 अनमेल विवाह

4.3.1.2 विधवाओं की उन्नति

4.3.1.3 पर्दा-प्रथा

4.3.1.4 वेश्या जीवन

4.3.1.5 दहेज प्रथा

4.3.1.6 वृद्धाओं की समस्या

4.3.2 दलित जीवन

4.3.2.1 जाति व्यवस्था का विरोध

4.3.2.2 छुआछूत और ब्राह्मणवाद का विरोध

4.3.3 बालकों की प्रतिष्ठा

4.3.3.1 बाल विवाह

4.3.3.2 बाल श्रम

4.3.4 सामाजिक व्यवस्था

4.3.4.1 सामन्तीय व्यवस्था

4.3.4.2 महाजनी सभ्यता

4.3.4.3 पूँजीवादी व्यवस्था
4.3.4.4 ज़मीन्दारी प्रथा
4.3.4.5 किसानी जीवन
4.3.4.6 मध्यवर्गीय जीवन
4.3.4.6.1 मज़दूर जीवन
4.3.5 धर्म और समाज
4.3.5.1 धर्म निरपेक्षता
4.3.5.2 पुरोहित वर्गों का खोखलापन
4.3.5.3 भाग्यवाद का विरोध
4.3.6 साहित्यकारों का दायित्व
निष्कर्ष

पाँचवाँ अध्याय 192-219

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सांस्कृतिक संकल्पना

भूमिका
5.1 परंपरा और आधुनिकता में द्वन्द्व
5.2 लोक संस्कृति
5.2.1 उदारता की भावना
5.2.2 रीति-रिवाज़
5.2.3 लोक गीत
5.2.4 अतिथि देवो भवः
5.2.5 वेश भूषा
5.2.6 त्योहार और मेला

5.2.7 कला का महत्व

5.2.8 प्रकृति एवं मनुष्य के बीच की अवस्थिति

5.2.8.1 स्त्री और प्रकृति की रिश्ता

5.3 भाषा

5.3.1 लोक भाषा

5.3.2 मुहावरे और लोकोक्ति

निष्कर्ष

उपसंहार 220-222

सन्दर्भ ग्रंथ सूची 223-248

परिशिष्ट 249-250

पहला अध्याय

'राष्ट्र': एक अवधारणा

'राष्ट्र': एक अवधारणा

भूमिका

किसी भी देश के इतिहास में विभिन्न परिस्थितियों से कभी न कभी रूपायित होने वाला एक विशेष क्रम विन्यास है राष्ट्र। इसलिए एक एक देश में राष्ट्र की अवधारणा उस देश की संस्कृति, अर्थव्यवस्था, राजनीति और समाज से संबंधित है। अतः हर एक देश के इतिहास से 'राष्ट्र' का गहरा संबंध है। अर्नेस्ट बार्कर के अनुसार, "राष्ट्र मानव संगठन का मूल रूप में वह परमोत्कृष्ट समुदाय है, जिसकी रचना ऐतिहासिक क्रम के परिणाम स्वरूप तथा आधुनिक परिस्थितियों के अंतर्गत हुई है।"[1] अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रांति के समय से एक आन्दोलन और विचारधारा के रूप में इसका प्रभाव महसूस किया जाने लगा। इस प्रकार एक अवधारणा के रूप में रूपायित होकर एक विचारधारा के रूप में परिवर्तित होने वाली इस संकल्पना का आज गंभीरतापूर्वक अध्ययन हो रहा है। 'राष्ट्र' रूपायति की ज़रूरतों पर होने वाले अध्ययन और चर्चायें, राष्ट्र के पुर्नपाठ करने केलिए प्रेरणा देते हैं, किन्तु अधिक प्रचलित शब्दों की व्याख्या में जिस तरह मुख्य सिद्धांतों को अपवाद धूमिल कर देता है, उसी तरह 'राष्ट्र' में भी होता है। 'राष्ट्र' वास्तव में आधुनिकता की उपज है। सामंतवाद के बाद पूँजीवादी समाज में रूपायित होने वाली इसकी प्रवृत्तियाँ आधुनिक जगत में वसुधा केन्द्रीय राजनीतिक तत्व के रूप में स्वीकार की जाती है।

1.1 राष्ट्र शब्दः अर्थ और परिभाषा

'राष्ट्र' शब्द केलिए सर्वमान्य परिभाषा खोजना कठिन कार्य है।

1. आर्नेस्ट बार्कर, प्रिंसीपल ऑफ सोस्यल एण्ड पॉलिटिकल साईंस, पृ. 12

आधुनिक जगत में इसको एक राजनीतिक तत्व के रूप में स्वीकार किया जाता है। मध्यकाल में 'राष्ट्र' उसे कहते थे, जिस पर राज्य किया जाता था अर्थात् जो भूभाग, जिन पर राजा द्वारा शासन किया जाता था, उसे राष्ट्र कहलाता था। वैदिक युग में 'राजनीतिक रूप से संगठित जन ही राष्ट्र या जनपद कहलाता था।"[1]

संहिताओं में 'राष्ट्र' शब्द का प्रयोग भूभाग केलिए किया गया है। विभिन्न धर्मग्रन्थों में 'राष्ट्र' शब्द का प्रयोग 'जनता' केलिए प्रयुक्त किया गया है। जनता के आपसी मेल-जोल और पारस्परिक सहयोग से समाज या देश की उन्नति मानते हुए ऋग्वेद का उद्धरण है,

"संगच्छध्वं संवद्धवं, सं वो मनांसि जानताम
देवा भागं यता पूर्वे संजानाना उपासते।"[2]

अथर्ववेद में भी भूमि के प्रति सम्मान दिखाते हुए राष्ट्र को माता के रूप में माना गया है। 'ऑक्सफार्ड अड्वांस्ड डिक्षनरी' में राष्ट्र की परिभाषा इस प्रकार दी गई है, "Large community of people, sharing a common history, language etc, and living in a particular territory under one government."[3] अर्थात् एक सरकार के अधीन एक निश्चित भूभाग में समान इतिहास और भाषा के साथ रहने वालीं जनता को राष्ट्र कहा जाता है। इसी प्रकार 'इन्टर्नोन्नल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशियल साइंसस, भाग- II और 'विश्वविख्यात कोशम' में भी राष्ट्र को समन्वय के साथ रहने

1. डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार - प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था और राजशास्त्र, पृ. 35
2. ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 191, मंत्र 2
3. ऑक्सफार् अड्वांन्स्ड जिक्षनरी, 4th edition, A.P. Chowle (सं) पृ 823

वाली जनता के रूप में प्रस्तुत है।

1.1.1 व्युत्पत्तिपरक अर्थ

वैदिक वाङ्मय में 'राष्ट्र' शब्द की व्युत्पत्ति 'राज्' धातु में 'ष्ट्रन्' प्रत्यय जोड़ने से होती है। पश्चिम और पूर्व में भी 'राष्ट्र' विभिन्न अर्थों से भरा है। पश्चिम में 'राष्ट्र' केलिए अंग्रेज़ी शब्द 'नेशन' (Nation) का प्रयोग किया जाता है। वह लैटिन भाषा के 'नेशियो' (Natio) से है, जिसका अर्थ है 'जन्म' या 'प्रजाति'। ग्रीस में इसे 'Civilized people" और रोम में 'Gens" एवं 'populus' कहा जाता था। उत्तर मध्य युग में जर्मनी और फ्रांस में 'राष्ट्र' शब्द उच्चशासक वर्ग केलिए प्रयुक्त होता था। अयरलैण्ड में 'कुल प्रमुख' को राष्ट्र प्रमुख कहा जाता था। सोलहवीं-सत्रहवीं सदी तक आते-आते 'राष्ट्र' शब्द किसी राज्य की स्वतंत्र अस्मिता को रेखांकित करने केलिए प्रयुक्त होने लग। फ्रांस की राज्यक्रांति ने 'राष्ट्र' शब्द को नया अर्थ प्रदान करके 'नेशन' शब्द को अपार लोकप्रियता दी और देशभक्ति से भी जोड दिया। इसप्रकार राष्ट्र की वर्तमान अवधारणा एक लंबा सफर का परिणाम है। "राष्ट्र ऐसे व्यक्तियों का समूह है, जो एक निश्चित स्थल के निवासी हों, जो सामान्यतः विभिन्न जातियों के हों, किन्तु समान इतिहास से ग्रहण किए विचारों एवं भावनाओं के परिपोषक हों, समग्र रूप से जो वर्तमान की, अतीत की स्मृतियों के कारण अधिक संबद्ध हों, जिनके धार्मिक विश्वास तथा विचार प्रकाशन की भाषा एक हो, समान विचारों तथा भावनाओं के साथ जो एक सामूहिक इच्छा में विश्वास करते हो...."[1]

---

1. शान्ति बाला - अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक सिद्धांत, भाग 1, पृ. 142

हिन्दी विश्वकोश के अनुसार, "राष्ट्र समाज का वह भाग है, जो प्राकृतिक, भौगोलिक सीमा द्वारा अन्य से पृथक है, जहाँ के लोगों का जातीय मूल एक है और जो एक भाषा बोलते हैं, जिनकी सभ्यता एवं संस्कृति एक-सी हो जिनके रीति-रिवाज़ तथा साहित्य एक हो।"[1] यहाँ राष्ट्र की व्याख्या देते वक्त प्रकृति और एक भूभाग के सब के सब को जोडने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार की परिभाषायें दी हैं।

शिवकुमार मिश्र के अनुसार राष्ट्र मात्र भूमि से ही नहीं, बल्कि वहाँ की जनता की राजनैतिक और सांस्कृतिक एकता से बनता है - "भूमि अर्थात् भौगोलिक एकता और जन, जनगण की राजनैतिक एकता और जन संस्कृति अर्थात् सांस्कृतिक एकता इन तीनों के समुच्चय का नाम राष्ट्र है।"[2]

राष्ट्र की अवधारणा में इतिहास की प्रधानता व्यक्त करके पाश्चात्य चिंतक एर्नेस्ट रेनान कहते हैं, "It is not the race, religion, language, state civilization or economic interests that make a nation... The National idea is founded on a heroic past, great men, true glory, common experience leads to the formation of a community of will".[3]

अर्थात् 'प्रजाति, धर्म, भाषा, राज्य, सभ्यता से राष्ट्र का निर्माण नहीं होता। राष्ट्रीयता तो वीर युग एवं गैरवशाली अतीत तथा महापुरुषों पर

---

1. हिन्दी विश्वकोष, खण्ड 10, नागरी प्रचारिणी सभा, 1968, पृ. 119
2. शिवकुमार मिश्र - हिन्दी काव्य, पृ. 43
3. एर्नेस्ट रेनान - वाट इस नेशन, पृ. 19

आधारित होती है। विधियों से कहीं अधिक सामान्य संकट और कष्ट राष्ट्र को एकता के सूत्र में आबद्ध कर देते हैं।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार, "राष्ट्र केवल सीमाओं और जनसंख्या के समुच्चय का नाम नहीं है। उसके साथ परिस्थितियों के एक विशिष्ट आयाम और एक विशिष्ट इतिहास का भी योग होता है। राष्ट्र एक व्यक्ति के सदृश्य ही है।"[1]

रैम्नेम्योर कहते हैं, "राष्ट्र ऐसे लोगों का समुदाय है जो कुछ घनिष्ट संबंधों के कारण आपस में स्वभावतः आबद्ध अनुभव करते है। ये संबंध उनकेलिए इतने सुदृढ़ और वास्तविक होते हैं कि वे मिलकर सुखपूर्वक रह सकते हैं। वियुक्त होने पर दुःखी होते है।"[2]

नगेन्द्रनाथ के अनुसार, "भूमि विशेष के प्रति रागात्मक भाव रख कर चलने वाले समाज से राष्ट्र बनता है।"[3]

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों की परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि राष्ट्र एक भूभाग के अंतर्गत, एक सत्ता के अधीन आने वाले लोगों के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक समन्वय की भावना है। इसमें सिर्फ मानव ही नहीं बल्कि सभी जीव-जन्तुओं और प्रकृति भी शामिल हैं।

---

1. नंददुलारे वाजपेयी - राष्ट्रीय साहित्य तथा अन्य निबंध, पृ. 2
2. रैम्नेम्योर - नेशनलीज़्म एण्ड इन्टरनेशनलिज़्म, पृ. 378
3. नगेन्द्रनाथ चौधरी - गत दो दशकों के काव्य में राष्ट्रीय चेतना, पृ. 4

1.2 आधुनिक 'राष्ट्र' की अवधारणा

आधुनिक 'राष्ट्र' की कल्पना सबसे पहले पश्चिम यूरोप, अमेरिका और सोवियत रूस ने की। इन देशों ने अपने ऐतिहासिक अनुभवों से राष्ट्रीयता के मानक रूप को अर्जित किया था। राष्ट्रीयता के जिस मानक रूप को पश्चिम यूरोप, सोवियत रूस और अमेरिका ने प्रस्तुत की, उसको दुनिया के अन्य देशों ने आयातित किय। इन रूपों में से एशिया और आफ्रिकी देशों ने अपने पसंद के अनुरूप, अपने अपने हिसाब से एक मानव रूप को चुन लिया । लेनिन के अनुसार, "सोलहवीं शताब्दी में उदित होने वाले स्पेन, पुर्तगल, फांस, इग्लैंड तथा हालेण्ड के राज्य सबसे पहले राष्ट्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं।"[1]

सन् 1780 की फ्रांस की क्रांति सामाजिक असमानता को टकराकर सामने आया। विभिन्न वर्गों में विभाजित समाज में उच्च वर्ग को ही अधिकार और धन था। सामंती व्यवस्था से तंग आकर रहने वले किसन और मध्यवर्ग ने इस क्रांती की नीव पकडी। वोल्टयर और रूसों जैसे दार्शनिकों से प्रभावित शिक्षित मध्यवर्ग क्रांति के नेता बने। बाद में नेपोलियन की शासन व्यवस्थ से राष्ट्र बोध की भावना होने लगी। एक देश की अस्मिता राजधानी से न होकर राष्ट्रीय गौरव से प्रकट होने की प्रवृत्ति फ्रांस की क्रांति से शुरु हुई। सार्वभौमिक विश्वव्यापी ईसाई राज्य की कल्पना में प्रयत्न होने के कारण यूरोप में रोमन काल तथा मध्ययुग में राष्ट्रीय विचारधारा को प्रोत्साहन

---

1. लेनिनः दि राइट ऑफ नेशन्स टु सेल्प डिटरमीनेशन (1914) सेलेक्टेड वर्क्स, फॉरन लैंगुएजिज पब्लिशिंग हाउस, मोस्को 1947, वोल्यूम 1, पृ. 553

नहीं मिला था। पश्चिम में फ्रांस की क्रांति के फलस्वरूप जर्मनी और इटली में शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण हुआ।

इस प्रकार इंग्लैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, स्पेन, जैसे यूरोप के अन्य देशों की जनता में बढ़ने वाली राष्ट्रीयता की भावना ने चर्च तथा पोप की सत्ता को चुनौती दी। इन राष्ट्रों में राष्ट्र का उदय सामंतवाद को समाप्त करने की तथा पूँजीवाद के विकास की प्रक्रिया में हुआ। "सत्रहवीं सदी में इंग्लैण्ड का महायुद्ध ऊपर से देखने में प्यूरिटन और गैरप्यूरिटन ईसाइयों का युद्ध था। वास्तव में यह ज़मींदारों से किसानों-कारीगारों और व्यापारियों का युद्ध था। उसका सामन्त विरोधी स्वरूप धार्मिक आवरण में छिपा हुआ था।"[1]

लेकिन पूर्वी और मध्यवर्गीय यूरोप में राष्ट्र औद्योगिक क्रांति के रूप में उदित हुआ। पूर्वी यूरोप में जहाँ पूँजीवाद संबंधों का विकास अत्यधिक धीमी गति से हो रहा था, राष्ट्रों का गठन अंत में हुआ- "The modern Nation is therefore a historical result brought about by a series of convergent facts, sometimes unity has been effected by a dynasty, as was the case in France, Sometimes it has been brought about by the direct will of provinces, as was the case with Holland, Switzerland and Belgium; Sometims it has been the work of a general consciousness, belatedly victorious over the caprices of feudalism, as was the case of Italy and Germany."

---

1. रामविलास शर्मा - भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी - नवजागरण की समस्यायें, पृ. 17

अर्थात् "अभरसक तथ्यों की श्रृंखला से लाया गया एक ऐतिहासिक परिणाम है - 'आधुनिक राष्ट्र'। कभी किसी वंश अथवा राजवंश की बदौलत एकता पर असर पड़ा है, जैसा कि फ्रांस में देखा गया है। तो कभी यह प्रदेशों के सीधे संकल्प का नतीजा था, जो हॉलैंड, स्विटज़र्लैंड और वैल्जियम में हुआ था। तो कभी यह काम था उस सामान्य बोध का, जो विलंबित ही सही, लेकिन विजयी हुआ था सामंतवादी तरंगों पर, जैसा कि इटली और जर्मनी के मामले में देखा गया है।"[1]

सोलहवीं शताब्दी से लेकर अठारहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों के बाद से राष्ट्रों का निर्माण सारे योरोप और संसार के अन्य भागों में केवल संचार साधनों के विकास से मात्र नहीं हुआ। 'बाज़ार' और 'भाषा' भी सशक्त माध्यम बना। इस प्रकार व्यापार, भाषा और साहित्य के विकास जनता की राष्ट्रीय भावना को बढ़ावा दिया। फलस्वरूप विशिष्ट राष्ट्रीय संस्कृतियों का भी विकास होने लगा और विश्व के सभी देशों में इसका प्रभाव फैला।

1.3 'राष्ट्र' की रूपायति केलिए आवश्यक तत्व

वर्तमान राष्ट्र की अवधारणा को समझने केलिए विभिन्न तत्वों को पहचानना ज़रूरी है। एक 'देश' से 'राष्ट्र' की ओर की लंबे सफर में समन्वय की बड़ी श्रृंखला काम करती है। इतिहास, भौगोलिकता, स्वशासन, जनता, भाषा, धर्म, साहित्य, अर्थव्यवस्था, जाति आदि इस श्रृंखला की विभिन्न कड़ियाँ हैं।

---

1. एर्णस्ट रेनान - वाट इस नेशन, पृ 19

1.3.1 इतिहास

हर एक राष्ट्र के विकास में इतिहास की बड़ी भूमिका है। इतिहास हर एक देश के अस्तित्व की पहचान है। यह वास्तव में विकास की 'रीड की हड्डी' है। विभिन्न ऐतिहासिक घटनाएँ जनता में राष्ट्र की एक नया ढाँचा बनाने में सहायक बनती हैं। समान इतिहास रखने वाले लोगों की राष्ट्रीयता अधिक प्रबल होती है - "राष्ठ्र ऐतिहासिक रूप से गठित जनता का समुदाय है जो आम भाषा, क्षेत्र, आर्थिक जीवन तथा आम संस्कृति में व्यक्त मनोविज्ञान के आधार पर बना हो।"[1]

ऐतिहासिक तत्वों को महत्व देते हुए-पाश्चात्य चिंतक 'एर्पस्ट रेनान' ने यों कहा, "राष्ट्र एक आत्मा है, वह एक आत्मीय तत्व है। राष्ट्र केलिए मुख्य है, अतीत का गौरव, वर्तमान में एकजुट रहने की इच्छा। दुखत स्मृतियाँ जनता को एकजुट होकर रहने में सहायक बनती हैं। जब इन दुखद स्मृतियों की प्रासंगिकता नष्ट हो जाती है, तब नया राष्ट्र रूपायित हो जाता है।"[2]

लेकिन समान इतिहास के बावजूद भी राष्ट्र की रूपायति का एक अच्छा उदाहरण है 'अमेरिका'। समान इतिहास न होते हुए भी दो सौ वर्षों से एक दूसरे के सुख-दुख के साथ रहने के बाद अमेरिकियों का समान इतिहास बन गया, जिसने दृढ़ता से उन्हें आगे बढ़ाया है।

---

1. स्तालिन -माक्सिज़म एण्ड दि नेशनल क्वश्चन कलेक्टेड वर्क्स, मास्को,वोल्यूम -2, पृ. 307
2. एर्णस्ट रेनान - वाट इस नेशन, पृ 19

1.3.2 भौगोलिक सीमा

एक भौगोलिक सीमा के बिना राष्ट्र की रूपायति संभव नहीं है। "राष्ट्र का आशय उस विशेष भू-खण्ड से है जहाँ के निवासी एक संस्कृति के सूत्र में आबद्ध हैं।"[1] मतलब राष्ट्र एक भौगोलिक सीमा के भीतर रहने वाली जनता के राजनैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक समन्वय है। इसमें सिर्फ मानव ही नहीं, बल्कि नदी, पर्वत, पशु-पक्षी, पेड-पौधे सब आते हैं।

एक राष्ट्र की अवधारणा में भौगोलिकता की प्रधानता के अनेक उदाहरण हैं। राष्ट्रीय भाव होते हुए भी यहूदी लोग किसी भू-भाग से सम्बन्धित न होने के कारण उनकी राष्ट्रीयता स्वीकार्य नहीं थी। बाद में वह इज़राइल के भू-भाग से संबन्ध हो गया। जिप्सियों का भी यही स्थिति है। इसलिए राष्ट्र बिना भू-भाग का नहीं बन सकता। बाबू गलाबराय कहते हैं, "एक विशिष्ट भू-भाग से संबन्धित एक राजनीतिक इकाई, उसमें रहने वाले लोगों में पारस्परिक सहयोग।.. उस भू-भाग से प्रेम और उसकी सभी चीज़ों पर जैसे साहित्य संस्कृति, रहन-सहन वेश-भूषा आदि पर गर्व की भावना।"[2]

लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि भौगोलिक सीमा रूपायित करना एक राष्ट्र के लंबी इतिहास की अंतिम प्रक्रिया मात्र है। सामंती युग में राजा-महाराजओं के बीच के परस्पर युद्ध के कारण भौगोलिक सीमायें बदलती जा रही थीं। भारत का राष्ट्र गान एक अच्छा उदाहरण है। राष्ट्र गान की पंक्ति 'पंजाब सिन्ध गुजरात-मराठा' में प्रस्तुत 'सिन्ध' प्रदेश आज भारत

---

1. डॉ. क्रान्ति कुमार शर्मा - हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय काव्य का विकास, पृ. 22
2. बाबु गुलाबराय - राष्ट्रीयता, पृ. 11

में नहीं है। उसी प्रकार भारतीय संस्कृति का आधार मानने वाला हाडप्पा और मोहनजेदारो भी आज भारत के हिस्से नहीं हैं। यानी भौगोलिक सीमा शताब्दियों के इतिहास की अंतिम विराम चिह्न मानी जा सकती हैं।

1.3.3 राजनीति, प्रशासन और अर्थव्यवस्था

'राष्ट्र' की अवधारणा में राजनीति एक प्रमुख तत्व ह। आधुनिक राष्ट्र की अवधारणा यूरोप के राजनीतिक इतिहास का परिणाम है। "अपने प्रचलित अर्थ में राष्ट्रीयता का बोध राजनीतिक बोध है।"[1]

राजनीति से नागरिक भातृत्व बोध विकसित होता है और आधुनिक राष्ट्रत्व के लिए सहायक बनता है। राजनीतिक स्वतंत्रता से मतलब एक स्वशासित स्वाधीन देश से है, जिसकी अपनी कानून, अर्थव्यवस्था और प्रशासन हो। एक सुदृढ़ अर्थव्यवस्था से ही राजनीतिक स्वतंत्रता आसान होगी।

समान आर्थिक व्यवस्था पूरे राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने में सहायक बनता है। आर्थिक दृढ़ता से ही विश्व के सभी राष्ट्रों का गढ़न हुआ है। राष्ट्र की रूपायति में आर्थिक समानता की प्रधानता दिखाकर टागोर का कथन है, "समान अधिक आकांक्षाएँ एक प्रबल शक्ति के रूप में काम कर रही थी।"[2] विश्व के अधिकांश राष्ट्रों की अवधारणा पूँजीवादी समाज में ही हुई है। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था कायम करने के लिए एक सुदृढ़ राजनीतिक और प्रशासनिक व्यवस्था भी अनिवार्य है।

1. प्रमोद कुमार - रष्ट्रीयता की अवधारणा और भारतेन्दुयुगीन साहित्य, पृ. 19
2. टागोर - नेशनेलिज़म, पृ. 10

किसी भी लोकतांत्रिक समाज के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रमों में जनसाधारण की भागीदारी पूर्वशर्त होती है। लेकिन इन कार्यक्रमों का वास्तविक संचालन तो प्रशासन को ही करना होता है। इस तरह प्रशासन आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक उन्नति पर निर्भर है। एक केन्द्रीय राजनैतिक शासन प्रक्रिया के अंतर्गत यह लागू होता है।

इस प्रकार राजनीति, प्रशासन और अर्थव्यवस्था एक दूसरे पर निर्भर हैं, जो राष्ट्र की रूपायति में प्रमुख तत्व भी हैं।

1.3.4 संस्कृति

संस्कृति एक ऐसा माध्यम है जिससे समाज का व्यापक प्रसार होता है और सामाजिक, आर्थिक या राजनैतिक उन्नति में मदद मिलती है। संस्कृति पुरातन को पुष्ट करते हुए नवीन को जन्म देती है और नए सामाजिक मूल्यों का गढ़न होता है। गार्नर के अनुसार, "राष्ट्र सांस्कृतिक समानता का सामाजिक समूह है, जो अपने मानसिक जीवन और अभिव्यक्ति की एकता के विषय में पूर्ण चेतन एवं दृढ़ निश्चयी है।"[1]

संस्कृति का संबंध केवल कला और दर्शन से नहीं, बल्कि उसमें तो पूरी जीवनशैली आ जाती है। धर्म, भाषा, साहित्य, कला, वेश-भूषा रहन-सहन, आचार-विचार सब संस्कृति का अंग है। संस्कृति किसी व्यक्ति और समाज के कौशल को उसकी ऊँचाई पर पहुँचा देती है। इसलिए संस्कृति राष्ट्र का एक प्रमुख तत्व ही है। "संस्कृति वह तत्व है, जो राष्ट्र रूपी वृक्ष

---

1. गार्नर - दी पोलीटिकल साईन्स एण्ड गवणमेंण्ट, पृ. 108

के निर्माण में अर्वरक का काम करती है। संस्कृति ही राष्ट्र का सांस्कृतिक स्वरूप तैयार करके उसे महत्ता प्रदान करती है।"[1]

लेकिन 'आस्ट्रीया' और 'हंगरी' के स्लाब जनता तथा सोवियत संघ के जनतंत्र ऐसे उदाहरण हैं, जहाँ सामान्य संस्कृति पाई जाती हो पर अलग सार्वभौम राज्य को स्थापित करने की इच्छा हो।

1.3.5 भाषा

हमारे सांस्कृतिक मूल्यों को जीवित रखने वाली एक माध्यम है भाषा। आधुनिक राष्ट्र के निर्माण में भाषा की प्रभावशाली भूमिका है। एक सामान्य भाषा का विकास जनसमूहों की राष्ट्रीय चेतना के विकास के रूप में घटित होता है। "राष्ट्रीय चेतना पहले सांस्कृतिक चेतना है, बाद में राजनैतिक। सांस्कृतिक चेतना जो व्यक्तियों और समूहों को न्यूनाधिक रूप में जोडती है, उसमें सामान्य भाषा के विकास की भूमिका मुख्य है।"[2]

अठारहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों के बाद यूरोप और संसार के अन्य भागों में राष्ट्रों का निर्माण व्यापार, बाज़ार और आम भाषा के विकास से हुआ। इरफान हबीब कहते हैं, "राष्ट्र के निर्माण में बुजुर्वा वर्ग की इस कोशिश की महत्वपूर्ण भूमिका रही कि राष्ट्रीय सीमाओं के अंदर घरेलू बाज़ार स्थापित किया जाए।... बुर्ज्वाजी को घरेलू बाज़ार पर आधिपत्य जमाना चाहिए और इस के लिए राजनीतिक रूप से संगठित सीमाओं के साथ एक समान भाषा बोलने

1. जितेन्द्र श्रीवास्तव - भारतीय राष्ट्रवाद और प्रेमचन्द, पृ. 16
2. सुधीर रंजन सिंह - हिन्दी समुदाय और राष्ट्रवाद, पृ. 58

वाली जनसंख्या का भी आवश्यक है।"[1] संचार साधनों के विकास से प्रादेशिक भाषा समूहों में राष्ट्रीयता की प्रवृत्तियाँ पैदा हुईं।

राष्ट्र निर्माण में भाषा की भूमिका का एक सशक्त उदाहरण है 'बंगलादेश'। पाकिस्तान का निर्माण भी धर्म और भाषा के आधार पर किया गया।

लेकिन राष्ट्र के अस्तित्व के लिए एक ही भाषा का व्यवहार आवश्यक नहीं है। इसलिए आम भाषा को राष्ट्र के मुख्य लक्षण के रूप में स्वीकार करने में रूढिवादी विद्वानों को आपत्ति है। जर्मन, इटालियन तथा फ्रेंच जैसे अलग-अलग विकसित साहित्यिक भाषाओं के देश स्विट्ज़रलैण्ड का उदाहरण देकर सिद्ध किया जाता है कि भाषाओं की बहुलता के बावजूद एक राष्ट्र का उदय हो सकता है। क्योंकि स्विट्ज़रलैण्ड की भूगोल एवं ऐतिहासिक परिस्थितियाँ इतनी महत्वपूर्ण थी कि वह एक तत्व के रूप में आम भाषा की ज़रूरत को दब देती है। अमेरिका में भी ऐसी स्थिति है। भारत में भी राजभाषा के बावजूद कई भाषाएँ अपनी पूरी अस्मिता के साथ विद्यमान हैं।

कभी कभी दो समवर्गीय भाषाओं की उपस्थिति भी कठिनाई बनकर आ जाती है। मेसीडोनिया इसका एक उदाहरण है।

इंग्लैंड, अमेरिका, लैटिन अमेरिका, स्पैन जैसे राष्ट्रों के उदाहरणों से यह भी स्पष्ट होता है कि साहित्यिक रूप में किसी भी भाषा का विकास

---

1. इरफान हबीब - भारत में राष्ट्रीयता का प्रश्न, पृ. 17

राष्ट्र के विकास का मुख्य कारण बनता है। "लैटिन की जगह काव्य भाषा के रूप में इटालियन का प्रयोग जब शुरु हुआ, तब इटली में नवजागरण का आरंभ माना जाता है।"[1] भारत भी इसका उदाहरण है। बेनेडिक्ट ऐंडर्सन के अनुसार, "... प्रत्येक राष्ट्र को सही मायने में उसकी विशिष्ट भाषा और साहित्यिक संस्कृति के द्वारा समझा जा सकता है, क्योंकि यही दोनों जनता की ऐतिहासिक प्रज्ञा को व्यक्त करती है।"[2]

इंग्लैंड, अमेरिका, लैटिन अमेरिका, स्पेन जैसे राष्ट्रों के उदाहरण से यह भी स्पष्ट होता है कि कभी कभी एक ही भाषा को बोलने वाली और एक ही संस्कृति की सहभागी जनता होने पर भी एक राष्ट्र नहीं बन सकता। अरब राष्ट्र भी इस के लिए उदाहरण है। ए. हौसर के अनुसार, "सामान्य भाषा या प्रजातीयता नहीं, अपितु जनता की एक साथ रहने की इच्छा से ही किसी राष्ट्र का उद्‌भव होता है।"[3] शायद इसी कारण से एर्णस्ट रेनाना ने कहा, "Language invites peoples to unite, but it does not force them to do so" अर्थात् 'भाषा लोगों को एक बनाने का निमंत्रण देती है, लेकिन इस के लिए मज़बूर नहीं करती है।"[4]

इस प्रकार विभिन्न परिस्थितियों से गुज़रने पर भी भाषा राष्ट्र निर्माण का महत्वपूर्ण तत्व ही है। इसलिए भाषा को सामाजिक अस्मिता और संस्कृति के वाहक मानते हुए रैम्नेम्योर कहते हैं, "यदि सामान्यतः भाषा से

1. डॉ. के. वनजा - राष्ट्र राष्ट्रीयता नवराष्ट्रीयता, पृ. 15
2. बेनडिक्ट ऐंडर्सन - ईस्टर्न नेशनलिज़्म एण्ड वेस्टर्न नेशनलिज़्म, न्यू लेफ्ट रिव्यू, 9 मई/ जून 2001, पृ. 40,42
3. एम हौसर - ले प्रिंसिपल दे नेशनालिटीज़, पृ. 32
4. एर्णेस्ट रेनान - वाट इस नेशन, पृ. 16

एक सामान्य साहित्य, महान विचारों की एक सामान्य प्रेरणा, गीतों और लोक-कथाओं की एक सामान्य पैतृक संपत्ति का अर्थ लें, तब तो निःसन्देह भाषा का महत्व अन्य अनेक राष्ट्र के निर्मापक कारकों से अधिक है।"[1]

1.3.6 जाति

'रेस' यानी जाति की समस्या दुनिया के लगभग सभी राष्ट्रों की अवधारणा में देखा जा सकता है। जाति-व्यवस्था जैविक आधार पर यूरोप, अमेरिका और दक्षिणी आफ्रिका में रंग के आधार पर कायम हुई। भारत में जाति-व्यवस्था का रूप सांस्कृतिक है, जिसमें समूहों की सामाजिक आर्थिक स्थिति संकेतित होती रही है और इसे धार्मिक आधार भी प्रदान किया गया है।

अधिकांश देशों में जातीयता की चेतना देशभक्ति की भावना जगाने का माध्यम रहा है। "जातीयता की चेतना से ओत-प्रोत देशभक्ति औपनिवेशिक सत्ता द्वारा प्रस्तावित चुनौतियों का मुकाबला कर सकती है और उसके बरक्स देशी ढाँचे की प्रस्तावना कर सकती है।"[2]

जातीयता के बारे में विभिन्न विद्वानों के विभिन्न मत हैं। बालकृष्ण भट्ट के अनुसार, "पडोसी का पड़ोसी के साथ परस्पर मिलाप परिचय और सहृदय भाव के द्वारा दोनों में जो एक प्रकार का विश्वास और सहानुभूति हो जाती हैं, इसी सहानुभूति और विश्वास के बल वे दोनों किसी बड़े काम के

1. राजनीति शास्त्र, पृ. 572
2. प्रमोद कुमार - राष्ट्रीयता की अवधारणा और भारतेन्दुयुगीन साहित्य, पृ. 208

साधन निमित्त जहाँ तक एकता के सूत्र में बँद सके उसी को हम व्यावहारिक कारण जातीयता कहेंगे।"[1]

रामविलास शर्मा तो 'जाति' को भाषा से जोड़ते हुए कहते हैं, "भारत में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। इन भाषाओं के अपने-अपने प्रदेश हैं। इन प्रदेशों में रहनेवाले लोगों को 'जाति' की संज्ञा दी जाती है। वर्ण-व्यवस्था वाली जाति-पाँति से इस जाति का अर्थ बिल्कुल भिन्न है। किसी भाषा को बोलनेवाली, उस भाषा-क्षेत्र में बसनेवाली इकाई का नाम जाति है।"[2]

बाबू गुलाबराई के अनुसार, "राष्ट्रीय एकता के लिए जातीय, धार्मिक अथवा भाषा की एकता अनिवार्य नहीं। यदि इनकी भी एकता संपन्न हो सके, तो सोने में सुगंध की बात समझी जा सकती है और सामाजिक संगठन में अधिक सहायता मिलती है।"[3] मतलब जातीय एकता राष्ट्रीय एकता को अधिक आसान बनाती है।

इन परिभाषाओं से व्यक्त होता है कि जातीय एकता से मतलब मानव जाति के समन्वय से है और इससे राष्ट्र की रूपायति भी आसान होगी।

1.3.7 धर्म

समाज के विभिन्न समुदायों को बाँधने वाली एक बडी और शक्तिशाली कडी है धर्म। सामाजिक समन्वय से लेकर राष्ट्रीय एकता तक

1. बालकृष्ण भट्ट - प्रतिनिधि संकलन, सं. सत्य प्रकाश मिश्र, पृ. 15
2. रामविलास शर्मा - निराला की साहित्य साधना, खंड-2, पृ. 68
3. बाबू गुलाबराई - राष्ट्रीयता, पृ. 13

का कार्य धर्म करता है। धर्म की भूमिका अध्यात्मिक कृत्य के रूप में ईश्वरीय आस्था तक सीमित नहीं है, भौतिक जगत में बदलाव और समुदायों के गठन का काम भी उसके द्वारा हुआ है। "रोमन साम्राज्य के पतन के बाद यूरोप के देशों में ईसाई धर्म अनेक आर्थिक, राजनीतिक और वैचारिक सन्दर्भ में अनुकूल साबित हुआ।"[1] अरब राष्ट्रों के उदाहरण से भी यह स्पष्ट होता है, ".. उसी तरह इस्लाम अरब के व्यापारिक वर्गों और पिछडे कबीला समुदायों को एकजुट करने में सहायक हुआ।"[2]

दुनिया में धर्म के नाम पर कई नये राष्ट्र बनाए गए। बल्जियम और हालैण्ड एक राष्ट्र से दो राष्ट्र बनने के पीछे धर्म ही है। ग्रेट ब्रिटन से अलग होकर आयरलैण्ड और भारत से अलग होकर पाकिस्तान की रूपायति में भी धर्म की महत्वपूर्ण भूमिका है। लेकिन इन राष्ट्रों के उदाहरण से पता चलता है कि धर्म को मुख्य तत्व के रूप में मानने से राष्ट्र की उन्नति न होगी। जब धर्म प्रमुख तत्व के रूप में माना जाता है तो कई मुसीबतें आती हैं। अधिक प्रतिशत लोगों के धार्मिक विश्वासों और आचारों के आधार पर कानून बनाना कम प्रतिशत लोगों केलिए मुसीबतें पैदा करेंगी। यह राष्ट्र के समन्वय की कडी हमेशा केलिए तोड देगा। इसलिए यह समझना ज़रूरी है कि धर्म को प्रमुख तत्व के रूप में मानकर एक अलग राष्ट्र बनाने से धर्म की प्रगतिशील भूमिका को पाकर एक समन्वय का रूप देना एक राष्ट्र की उन्नति के लिए सहायक होगा। "....एक विशेष सामाजिक ऐतिहासिक सन्दर्भ में धर्म क्या रूप लेता है, यह देखना चाहिए, और साथ ही यह भी कि धर्म की सामाजिक

1. मार्क्स एंगल्स - ऑन रिलीज्यन, पृ. 210
2. वही- पृ. 210

भूमिक को कौन किस तरह इस्तेमाल कर रहा है, इसको पहचाने बिना धर्म का नकार भी अन्ध वैज्ञानिकतावाद होगा।"[1]

इस प्रकार धर्म निरपेक्षता को अपनाकर सामाजिक सांस्कृतिक समन्वय की कड़ी के रूप में धर्म का प्रयोग राष्ट्र की उन्नति को आसान बना देगा।

उपर्युक्त सारे तत्वों के समन्वय से ही राष्ट्र रूपायित होता है - "राष्ट्र उसे कहते है जहाँ के जन-समुदाय की भाषा, साहित्य, इतिहास, आर्थिक हित,देश, धर्म तथा राजनीतिक आकांक्षाएँ और आदर्श एक हो।"[2] यहाँ 'एक' होने का मतलब 'एक होने की भावना' से है। इसी भावना और समन्वय से राष्ट्र की संकल्पना रूपायित होती है। ये सारे तत्व एक केन्द्र तत्व पर मंडराते हैं। वह है 'मानव', 'जनता' यानि 'नागरिक'। 'राष्ट्र' की संकल्पना का मुख्य लक्ष्य है मानव की उन्नति। यानी इसका प्रेषक मुख्य रूप से जनता ही है। सभी जीव-जन्तु और प्रकृति इसमें शामिल हैं, लेकिन मानव ही मुख्य है। महादेवी वर्मा के अनुसार, "राष्ट्र केवल पर्वत-नदी-समतल का संघात नहीं होता, उसमें उस भुमि-खण्ड में निवास तथा विकास करने वाले मानव समूह का जीवन अविच्छिन्न रूप से जुडा रहता है।"[3] मतलब सभी नागरिक चाहे वे जाति, वर्ग, वर्ण, धर्म, भाषा, नस्ल, संस्कृति में अलग हों, उनकी समन्वय, उन्नति और स्वातंत्र्य की भावना, एक हो जाने की भावना से राष्ट्र की संकल्पना रूपायित होती है। इसी भावनायुक्त समाज में विभिन्न भेदों

1. नामवरसिंह - दूसरी परंपरा की खोज, पृ. 13
2. डॉ. शुभ लक्ष्मी - आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय चेतना, पृ. 8
3. महादेवी वर्मा - धर्मयुग, फरवरी 1897, पृ. 7

के साथ एक होने की कल्पना में रहने के कारण 'बेनेडिक्ट एडर्सन' राष्ट्र को 'कल्पित समूह' (Imagined Communities) कहते हैं।

इन तत्वों पर अध्ययन करने से पता चलता है कि हर एक राष्ट्र की अवधारणा एक दूसरे से भिन्न है। इतिहास और संस्कृति के अनुसार एक ही तत्व विभिन्न राष्ट्रों में विभिन्न रूपों में प्रत्यक्ष होते है। ध्यान देने की बात यह है कि भेद के बिना कोई भी राष्ट्र प्रबल नहीं बनता। "जिस देश में भेद नहीं उसकी इकाई शून्य या गणितशास्त्र की इकाई की भाँति दरिद्र इकाई है। संपन्नता भेदों में ही है। किन्तु भेद इतना न होना चाहिए कि उनमें सामंजस्य न रहे।"[1]

1.4 राष्ट्र और देश

'राष्ट्र' (Nation) और 'देश' (Country) पर्यायवाची शब्द हैं। पुराने काल में राजा-महाराजाओं के बीच के परस्पर युद्ध के कारण सीमायें बदलती जा रही थीं। इसी सीमाओं के ज़रिए एक-एक देश रूपायित होते थें। यानि 'देश' से मतलब भूमि या भौगोलिक सीमा से है। लेकिन 'राष्ट्र' से मतलब उस मिट्टी या भूमि में रहनेवाले मानव से है, वहाँ के सांस्कृतिक समन्वय से है। दूसरे शब्दों में उस भू-भाग के सभी जीव-जंतुओं, प्राणी-पक्षी, पेड़-पौधे से लेकर नदी, पहाड़, प्रकृति सब एक 'राष्ट्र' के अंदर आते हैं। इन सारे तत्वों के समन्वय से ही राष्ट्र रूपायित होते हैं। 'देश' जड है तो 'राष्ट्र' में जीव और आत्मा है।

1.बाबू गुलाबराई - राष्ट्रीयता, पृ. 21

1.5 राष्ट्रीयता

'राष्ट्र' एक राजनैतिक इकाई है तो 'राष्ट्रीयता' एक राजनीतिक बोध है। 'राष्ट्र' (Nation) शब्द से 'राष्ट्रीयता' (Nationalism) की व्युत्पत्ति हुई है। फिर भी दोनों के अर्थ में भिन्नता है। राष्ट्रीयता एक प्रकार का श्रद्धा एवं भक्ति पूर्ण मनोभाव है। राष्ट्र को संपन्न रखने की भावना ही राष्ट्रीयता का मूल आधार है। "अपने राज्य को एक स्वतःपूर्ण और अविभाज्य ईकाई मानकर उसके हिताहित से तादात्म्य करने तथा उसके प्रति गर्व की भावना रखने को राष्ट्रीयता कहते हैं।"[1]

राष्ट्रीयता को रजानीतिक विचारधारा मानते हुए डॉ. वनजा जी कहती है, "राष्ट्रीयता एक विश्वास या राजनैतिक विचारधारा है। वह एक व्यक्ति की अस्मिता से संबन्ध है, जो एक राष्ट्र से बंधित है। उसमें राष्ट्रीय अस्मिता है, देशप्रेम है, सामाजिक बुनावट एवं व्यक्ति-व्यवहार है, जो शासन की निर्भय प्रवृत्तियों का समर्थन करती है।"[2]

आधुनिक युग में पश्चिमी यूरोप में राष्ट्रीयता के जिस रूप का विकस हुआ है, उसे हम आक्रामक राष्ट्रीयता की कोटि में रख सकते हैं, जबकि विशेष रूप से भारत में विकसित राष्ट्रीयता सांस्कृतिक कोटि की उदार राष्ट्रीयता है। राष्ट्र और राष्ट्रीयता को अलग-अलग न मानकर एक राजनैतिक समाज का भाग मानते हुए लार्ड ब्राइस करते हैं, "राष्ट्र एक राष्ट्रीयता है, जिसने अपने को एक राजनैतिक समूह में संगठित कर लिया

1. बाबू गुलाबराई - राष्ट्रीयता, पृ. 43
2. डॉ. के. बनजा - राष्ट्र राष्ट्रीयता नवराष्ट्रीयता, पृ 35

है चाहे वह समूह स्वतंत्र हो अथवा स्वतंत्रता की उत्कंठा रखता हो।"[1] इस प्रकार राष्ट्र की रक्षा और उन्नति के लिए राष्ट्रीयता का उच्च भाव आवश्यक है।

1.6 भारत में राष्ट्र संकल्पना

इसमें कोई संदेह नहीं कि आधुनिक राष्ट्र की संकल्पना यूरोप की देन है। विश्व के सभी राष्ट्रों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में इसका प्रभाव पडा है। कुछ राष्ट्रों ने यूरोपीय राष्ट्र संकल्पना को ज्यों का त्यों अपनाने की कोशिश की तो कुछ राष्ट्रों ने अपनी खूबियों को न नष्ट करके उसके साथ मिलाने की कोशिश की। भारत इसका एक उदाहरण है। भारतीय राष्ट्र रूपायति के उद्‌बोधन पर पाश्चात्य प्रभाव ज़रूर पडा है, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि यह परंपरा से विच्छिन्न और अतीत से अलग रहा है। भारत में राष्ट्रीयता का उदय देश की स्वतंत्रता और देश प्रेम का परिणाम है। इसलिए भारत में राष्ट्र रूपायति की चर्चा करने से पहले भारत की परंपरा, संस्कृति, इतिहास को समझना बहुत ज़रूरी है और इसके साथ राष्ट्र और राष्ट्रीयता संबंधी प्रमुख भारतीय विचारकों के विचारों को भी समझना ज़रूरी है।

1.6.1 गाँधीजी

गाँधीजी के लिए 'राष्ट्र' का मतलब 'एक आज़ाद देश' से था।

1. एल. ब्राइस - दक्षिण अमेरिका, पृ. 274

इसलिए उन्होंने 'राष्ट्रीयता' को अधिक महत्व दिया। इसी अर्थ में 'स्वराज' शब्द का प्रयोग भी किया गया। उनके अनुसार एक देश की मुक्ति वहाँ की जनता की मुक्ति और स्वातंत्र्य पर निर्भर है। देश की आर्थिक उन्नति से यह सफल रहेगा। देश की अर्थव्यवस्था को कायम रखने के लिए देश के परंपरागत संसाधनों की प्रतिष्ठा और प्रेम करना ज़रूरी हैं। इसी कारण उन्होंने विदेशी शासकों से जीवन भर संघर्ष करता रहा। 'असहयोग आन्दोलन', 'स्वदेशी आन्दोलन', 'नमक सत्याग्रह' जैसे आन्दोलनों के माध्यम से देश की अस्मिता बनाये रखने की कोशिश की गई।

गाँधीजी के नज़र में हर राष्ट्र की उन्नति वहाँ के गाँवों पर निर्भर है। कुटीर उद्योग और पंचायतीराज व्यवस्थाओं के माध्यम से व्यक्ति-व्यक्ति से पूरे गांव, समाज और पूरे देश तक आसानी से संपर्क में आ जाएँगे। एक स्वतंत्र देश में यह लागू होगा। राष्ट्रीय भावना को जगाने में भी यह सहायक बन जाएगा।

राष्ट्रीयता की भावना जगाने केलिए मानवीय मूल्यों को अपनाने का आह्वान दिया गया। इसलिए राष्ट्र को प्रजातीयता से अलग करके स्वतंत्रता से जोड़ कर वे देखते थे। "राष्ट्रीयता के प्रति मेरा प्रेम अथवा राष्ट्रीयता की मेरी धारणा यह है कि मेरा देश स्वतंत्र हो ताकि अगर आवश्यकता पड़े तो मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिए वह स्वयं को होम कर सके। इस

धारणा में प्रजातीय घृणा का कोई स्थान नहीं है।"[1] उन्होंने अस्पृश्यता के विरुद्ध भी यों व्यक्त किया है, "अस्पृश्यता के विरुद्ध मेरा संघर्ष मानवता में जो कुछ अशुद्ध है, उसके विरुद्ध संघर्ष है।"[2]

उन्होंने भारतीय संस्कृति को किसी एक जाति समूह अथवा धर्म से संबंधित नहीं माना। धर्म के आधार पर राष्ट्र होने का विरोध भी किया - "यह न पूरी तरह हिन्दु है, न इस्लामी और न कोई अन्य।"[3]

पूँजीवाद और उपनिवेशवाद से जुड़ने के कारण औद्योगिकरण पर आधारित आधुनिकता का विरोध किया गया। उनके अनुसार औद्योगिकरण को अपनाने से भारत के परंपरागत मूल्य नष्ट हो जाएँगे। इसलिए उन्होंने हमेशा ग्रामीण जीवन और ग्रामीण व्यवस्थाओं को प्रतिष्ठित करने की कोशिश की। साथ ही साथ हमारे गौरवशाली अतीत का महत्व दिखाने की कोशिश भी की गई। उनके अनुसार औद्योगीकरण मानव को 'मशीन' बनाएगा और इससे लोगों की उन्नति न होगी। इसलिए उन्होंने मानवीयता के बल पर राष्ट्र प्रेम हासिल करना और राष्ट्रीयता के बल पर विश्वबन्धुत्व स्थापित करना चाहा।

1.6.2 टागोर

जिस प्रकार पाश्चात्य चिंतक 'बेनेडिक्ट ऐंडरसन' राष्ट्र को 'कल्पित समूह' (Imagined communities) माना, उसी प्रकार रवीन्द्रनाथ टागोर

1. महातामा गाँधी - महात्मा गाँधी के विचार, पृ. 420
2. महात्मा गाँधी -गाँधी, अंबेड़कर और 1932 का पूना समझौता, साँचा मई 1988, पृ.43, 44
3. महात्मा गाँधी के विचार, पृ. 416

भी राष्ट्र और राष्ट्रीयता की संकल्पना को बिलकुल काल्पनिक ही माना। उनके अनुसार अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम, वहाँ की उन्नति की भावना आदि दूसरे राष्ट्रों से हमें अलग बना देते हैं। यह एक प्रकार की स्वार्थता का कारण बन जाता है। "Nationalism is menace. It is the particular thing which lies under all the problems of India."[1] विश्व के हर एक राष्ट्र की रूपायति के पीछे हज़ारों मानवों के खून की कहानी है। यह विश्व भातृत्व का भाव नष्ट करता है। इसलिए टागोर ने मानव और मानवीयता को प्रमुखता देकर विश्वभातृत्व की प्रतिष्ठा करना चाहा और भौगोलिक सीमाओं में राष्ट्र की संकल्पना को बाँधने से बिल्कुल विरोध किया था। इसलिए उन्होंने 'गीतान्जलि' में लिखा,

"Where the world has not been broken
up into fragments by narrow domestic walls;
....
Into that heaven of freedom, my
Father, let my country awake"[2]

जहाँ दुनिया संकीर्ण घरेलू दीवारों से नहीं टूटा गया है, स्वतंत्रता के उस स्वर्ग में, मेरे पिता मेरे देश को भी जागने दे-"

इसप्रकार टागोर की राष्ट्र संबंध दृष्टि का आधार सार्वभौमिकतावाद है। यूरोपीय की राष्ट्रीय संकल्पना के नस्लवादी इतिहास को सामने रखकर उन्होंने सिद्ध करने की कोशिश की कि विश्व भर में राष्ट्रीयता के फलस्वरूप

---

1. रवीन्द्रनाथ टागोर - नेशनलिज़्म, पृ. 12
2. रवीन्द्रनाथ टागोर - गीतांजलि, 35

हज़ारों युद्ध, संघर्ष और अशान्ति ही मिले हैं।

रवीन्द्रनाथ और गाँधीजी मानवता के प्रति समान विचार रखते थे। लेकिन गाँधीजी राष्ट्रीयता पर बल दिया और टागोर सार्वभौमिकता पर। टागोर राष्ट्र की अवधारणा से मुक्त मानवता के आदर्शों के मुताबिक भारत को प्राप्त करना चाहते थे। "जब मैं बच्चा था तभी से मुझे पढ़ाया जाता रहा कि राष्ट्र ईश्वर की आराधना और मानवता से बढ़कर है। .. मेरे देश के लोग, उस शिक्षा से लड़कर, जो सिखाती है कि देश मानवता के आदर्शों से बढ़कर है, सचमुच अपने भारत को प्राप्त कर सकेंगे।"[1] इस प्रकार टागोर किसी प्रजातीय तत्वों जैसे धर्म, जाति, वर्ण, क्षेत्र के आधार पर राष्ट्र की धारणा के विरुद्ध थे। उनके अनुसार भारत जैसे देशों में विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय देखा जा सकता है। उनके द्वारा लिखा गया राष्ट्र गान 'जन गन मन' एक अच्छा उदाहरण है।

मानवीयता को महत्व देने के साथ-साथ उन्होंने मनुष्य को किसी भूखण्ड से संबंधित न करके पूरे विश्व से संबंधित माना।

1.6.3 नेहरू

रवीन्द्रनाथ टागोर और गाँधीजी जी का विचार-मिश्रण नेहरू में देखा जा सकता है। उन्होंने आधुनिक और पाश्चात्य पद्धतियों से प्रभावित होकर भारत को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाना चाहा। इसलिए उन्होंने वर्तमान की ज़रूरतों के अनुसार नये इतिहास को गढ़ने की कोशिश भी की और इस के

1. रवीन्द्रनाथ टागोर - नेशनलिज़्म, पृ. 64

लिए अंतर्राष्ट्रीयता का मेल भी करना चाहा। उनके अनुसार राष्ट्रीयता राष्ट्र को एक होने का भाव देती है- "राष्ट्रीयता तथा अंतर्राष्ट्रीयता के संघर्ष में राष्ट्रीयता की विजय होती है।"[1]

नेहरु कहते हैं कि शिक्षा ही भारतीयों को उन्नत बनाने का एकमात्र तरीका है। पाश्चात्य शिक्षा पद्धति से प्रभावित होकर उसी शिक्षा प्रणाली को अपनाया गया । विज्ञान, तकनीकि और उद्योग धन्धों को विकास की कड़ियाँ मानीं। "कोई राष्ट्र केवल अपने पुरखों के गुणगान से तरक्की नहीं कर सकता। राष्ट्र के लिए निर्माण, आविष्कार और कर्मठता की आवश्यकता होती है।"[2] उन्होंने सामाजिक और सांस्कृतिक उन्नति के लिए धार्मिक उन्नति की ज़रूरतों को पहचाना। धर्मनिरपेक्षता पर बल दिया गया। उन्होंने हमेशा शिक्षित नव जवानों को देश के विकास के लिए काम करने की प्रेरणा दी।

1.6.4 अंबेडकर

अंबेड़कर के अनुसार राष्ट्र सभी वर्ग, वर्ण, धर्म, जाति व्यवस्था का समन्वय है। जिस प्रकार भारतीय समाज-सुधारकों ने सामाजिक सुधार को राष्ट्र की उन्नति का पहला शर्त माना, उसी प्रकार अंबेडकर भी सामाजिक भेद-भाव मिटाना चाहा। भारत में जाति और वर्ण व्यवस्था के कारण जो भेद-भाव है, वह मिटाने के लिए अवर्णों और दलितों को उन्नत बनाना चाहा। इसलिए उन्होंने दलितों की उन्नति और समता के लिए काम किया। उनके द्वारा गए तैयारित भारतीय संविधान में सबको स्थान दिया गया। राष्ट्रीयता को प्रबल बनाने में यह सहायक बना। उन्होंने लिखा, "भारत का शासन तब

1. जवाहरलाल नेहरू - भारत की खोज, पृ. 366
2. नेहरू - थोड्स ऑफ जवाहरलाल नेहरू, पृ. 98

तक अधिकतर अंग्रेज़ों के हाथ में रहना चाहिए जब तक यहाँ के सभी वर्ग, विशेष रूप से दलित वर्ग, देश के शासन में कारगर ढंग से भाग लेने योग्य न हो जाएँ।"[1] एक नागरिक के रूप में हर व्यक्ति को समान अधिकार देने की कोशिश की गई।

अंबेडकर ने बौद्धिक धर्म से प्रभावित होकर भारत के पौराणिक तत्वों को आत्मसात करने की कोशिश की। उनके अनुसार धार्मिक समन्वय के लिए धर्मनिरपेक्षता का मार्ग अपनाना चाहिए। उन्होंने व्यक्ति स्वातंत्र्य पर भी बल दिया। उन्होंने मुख्य रूप से समता (Equality) स्वातंत्र्य (Freedom) और भाइचारे (Fraternity) पर केन्द्रित विकास को राष्ट्र की उन्नति का मार्ग दिखाया।

1.6.5 भारत की परंपरा और संस्कृति

भारत की परंपरा विविधता और बहुलता से समृद्ध है। अपने विशिष्ट सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक संरचना के अलावा पूर्वी हिमालय और पश्चिम घाट की भौगोलिक स्थिति भी भारत को अलग कर देती है। बुद्ध, अशोक, अकबर या कबीर की संभावनाएँ, हर्ष के परोपकारी नेतृत्व, चार्वाके के तर्कमय संशयवाद, नागार्जुन के गहन दार्शनिक तर्कों, आर्यभट्ट की ज्यार्तिविज्ञान और गणितीय संरचनायें, कालिदास की काव्य सर्जना, शाहजहाँ की सौन्दर्य दृष्टि, रविशंकर और अली अकबर खान के संगीत, रामानुजम के गणित, वेद और उपनिषद् आदि सब भारतीय परंपरा

1. डॉ. बी.आर अंबेडकर - राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज़, खंड -9, पृ. 430-31

को संपन्न बना देते हैं। इसके अलावा तर्कशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, आयुर्वेद, आस्थितंत्र, पहली शताब्दी से भी उपलब्ध नलन्दा विश्वविद्यालय की शैक्षिक सुविधायें, प्रकृत विज्ञान, रसायन शास्त्र, काम सूत्र, शतरंज का खेल, बैडमिंटन और पोलो जैसे खेलों की शुरुआत यहीं से हुई। इन सब में भारतीय गर्व कर सकते हैं। धर्मनिरपेक्षता ने भी भारत को अन्य देशों से अलग बनाया। हिन्दू, बौद्ध, इस्लाम, इसाई, यहूदी, सिक्ख, फारसी जैसे अनेक धर्म के लोग यहाँ रहते हैं।

प्राचीन भारत की व्यापारिक निपुणता का उदाहरण दो-हज़ार वर्षों पहले चीन-भारत के आयात-निर्यात से मिलता है। भारत की इस परंपरा और संस्कृति ने सदा अन्यों से सम्मानपूर्ण आदान-प्रदान और संवाद के आधार पर सहिष्णुता को ही उचित ठहराया है। बहुलता और समन्वय की परंपरा से ओतप्रोत यह भारतीय संस्कृति, विभिन्न राजनीतिक शासन पर भी हज़ारों साल पहले से भी एक राष्ट्र की संकल्पना करने में सक्षम थी। "पूर्व-औपनिवेशिक भारत में जब शासन मुसलमानों का था, भक्ति आन्दोलन के रूप में उपजे जागरण में हिन्दुओं और मुसलमानों का सम्मिलित योगदान देखने को मिलता है।"[1] इस प्रकार उपनिवेश पूर्व भारत को राष्ट्र बनाने की कोशिश भक्ति आन्दोलन में देखा जा सकता है।

टागोर कहते है, 'पृथ्वी के अन्य किसी देश में रचना का इतना विशाल आयोजन नहीं हुआ, इतनी जातियों धर्मों और शक्तियों का किसी तर्थ

---

1. सुधीर रंजन सिंह - हिन्दी समुदाय और राष्ट्रवाद, पृ.30

स्थल पर ऐसा मिलन नहीं हुआ, विभिन्नता और वैचित्र्य का प्रकाण्ड समन्वय करके, विरोध के बीच मिलन के आदर्श को दुनिया भर में विजयी कराने का ऐसा सुस्पष्ट आदेश और कहीं ध्वनित नहीं हुआ।"[1]

1.6.6 भारतीय समाज

भारत परंपरागत रूप से कृषि प्रधान देश रहा है। यहाँ कृषि-व्यवस्था आत्मनिर्भर गाँवों की व्यवस्था थी। इन ग्राम समाजों में पंचायतों का सम्मान था। भारत की जनसंख्या में 80 प्रतिशत से अधिक हिन्दू है और हिन्दू समाज विभिन्न जातियों उपजातियों में विभक्त है। इसलिए वर्णाश्रम धर्म, जाति व्यवस्था और विभिन्न वर्ग समाज में अपने विकृत रूप में प्रकट थे। बाल-विवाह, अनमेल विवाह, छुआछूत, सती-प्रथा आदि ज़ोरों पर थे। इस प्रकार भारत समाज में धर्म और समाज के बीच अविच्छिन्न संबंध है। सांस्कृतिक समृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों के साथ भी इन सामाजिक समन्वय और एक प्रशासनिक केन्द्रीकरण की कमी भारत को एक राष्ट्र की रूपायति में बाधा बनते थे। औपनिवेशिक शक्तियाँ अपने ज़रूरतों के लिए किए गये सुविधायें इन कमियों को दूर करके भारत को राष्ट्र बनाने में सहायता प्रदान की ।

1.6.7 उपनिवेश भारत

पन्द्रहवीं शताब्दी के अंतिम चरण (1948) में यूरोप का प्रथम चरण भारत की भूमि पर पडा। उस समय यूरोप में भारत का नाम विपुल

1. रवीन्द्रनाथ टागोर - पथ और पाथेय, रवीन्द्रनाथ के निबंध, पृ. 409

धन संपत्ति के लिए विख्यात था। पूर्तगाल, डच, फ्रान्स और बाद में अंग्रेज़ आए। भारत को अपने अधीन बना के भारत की संपन्नता लूटने में अंग्रेज़ ही सफल हुआ।

1.6.7.1 भारतीय परंपरा को शून्य दिखाने की कोशिश

भारत के समृद्ध अतीत के बावजूद भारतवासियों को अवैज्ञानिक और भारत को शून्य दिखाने की कोशिश 'जेम्स मिल' (The history of British India) कैथरिन मेयो'(Mother India) 'रुडयार्ड किप्लिंग' की रचनाओं में देख जा सकता है। यह तो दुख की बातें है कि सालों तक भारतवासियाँ ने भी इन रचनाओं के माध्यम से भारत को समझने की कोशिश की। "भारत की परंपराओं को केवल धार्मिक या फिर गहन रूप से विज्ञानविरोधी या केवल क्रमनुगामी या फिर मूलरूप से असंशयवादी मान लेना भारत के अतीत और वर्तमान के अति सरलीकरण का दुष्प्रयास ही होगा।"[1] भारत को नीचे दिखाने की पहली कोशिश थी यह।

1.6.7.2 व्यापार से शुरुआत

इस औपनिवेशिक सत्ता की शुरुआत व्यापार के माध्यम से हुई। अंग्रेज़ लोगों के आगमन के पहले भारत की आर्थिक स्थिति दृढ़ और संपन्न थी। "जिस समय पश्चिमी व्यापारी साहसिक पहले-पहल भारत आये इस देश का औद्योगिक विकास कम से कम अधिक प्रगतिशील यूरोपीय देशों से किसी भी प्रकार कम नहीं था।"[2]

---

1. अमर्त्या सेन - भारतीय अर्थ तंत्र इतिहास और राजनीति, पृ. 15
2. इंडियन इण्डस्ट्रियल कमीशन रिपोर्ट, पृ. 6

व्यापार से शुरु हुई औपनिवेशिक सत्ता ने पहले भारतीय अर्थव्यवस्था पर हाथ डाला। इस के लिए वे भारत के बाज़ार तक पहुँचकर और बाद में भारत के संसाधनों को लूटकर मुनाफा कमाने लगे।

1.6.7.3 कृषि, व्यापार, कुटीर उद्योगों का नाश

1757 में स्थापित ईस्ट इन्टिया कंपनी ने भारत के कुटीर उद्योगों को तहस-नहस किया। चरखा और करघा उद्योग का नाश करके वस्त्र उद्योग को खत्म करने की कोशिश की गई ईस्ट इन्डिया कंपनी के गुमशते जुलाहों से कम दामों पर जबरदस्ती कपडे खरीदते थे और उन्हें कंपनी के लिए कपड़े बुनने के लिए मज़बूर करते थे। लगान बढ़ाकर ग्रामीण व्यवस्था का ढाँचा ऐसा कर दिया गया कि किसान अपनी उपज बेचने के लिए बाध्य हो जाते थे।

साथ-साथ राजाओं और सामन्तीय व्यवस्थाओं का विनाश करके 18 वीं शती में ब्रिटिश पूँजीवाद ने भारत में प्रगतिशील कार्य भी किया। लेकिन 1857 के विद्रोह के बाद अपनी यह नीति बदलकर ज़मीन्दारों को कंपनी का संरक्षक बना दिया। इस प्रकार ज़मीन्दार भूमि के स्वामी बनकर भू-स्वामित्व वसूल करने लगे। यूरोप की मशीनी वस्तुओं ने भारत की कुटीर उद्योग और ग्रामीण हस्तशिल्प को नाश कर दिया। इस प्रकार भारत की परंपरागत आत्मनिर्भर ग्रामीण व्यवस्था की कमर तोड दी और वह फिर पनप न सका। आर्थिक दृष्टि से इस प्रकार विदेशी शासक जनता को कंगाल और निर्धन बना रहे थे।

1.6.7.4 ब्रिटीश पूँजीवाद का उदय

19 वीं शती के उत्तरार्द्ध में चाय, कहवा और रबर के बाग, नील के बगानों, कुछ कपड़े के मिलों और आधुनिक उद्योग धन्धों को विकसित करके ब्रिटिश पूंजीवाद ने भारत में फैलना आरंभ किया। पूँजी के विकास से किसान बाज़ार से परिचित होने लगा। "अवागमन के साधनों में विकास और पूँजी के व्यापक प्रभाव के कारण किसान के लिए बाज़ार की सुविधा उपलब्ध हुई और अब वह मुख्यतया बाज़ार की दृष्टि से सामान पैदा करने लगा।... कृषि के वाणिज्यीकरण की इस प्रक्रिया ने किसानों को साहूकारों के चंगुल में फँसा दिया, धनी किसानों को संपन्न और गरीब किसानों को दरिद्र करने के साथ खाद्यान्न के उत्पादन को निरुत्साहित किया।"[1]

1.6.7.5 प्रशासनिक केन्द्रीकरण और अंग्रेज़ी की प्रतिष्ठा

1857 के बगावत से पहले ही अंग्रेज़ एक सुदृढ़ केन्द्रीय राजनैतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था की अनिवार्यता समझने लगे ताकि यह आर्थिक शोषण की प्रक्रिया को अनवरत कर सके। एक केन्द्रीय राजनैतिक या प्रशासनिक व्यवस्था को सफल बनाने केलिए रेलवे का निर्माण किया गया। रेलवे के माध्यम से दूर प्रदेशों तक माल पहुँचा सकते थे। इस प्रकार टाक, तार, सडकों, प्रेस आदि के माध्यम से उन्होंने अपनी व्यापारिक कार्यक्रमों को आसान बनायी और भारत को विश्व बाज़ार से जोड दिया। इसके अलावा एक नवीन वर्ग को उत्पन्न किया जो औद्योगिक विकास में सहायक हो सकते थे। इस प्रकार भारतीय औद्योगिक पूँजीवाद का उदय भी होने लगा।

1. प्रमोद कुमार - राष्ट्रीयता की अवधारणा और भारतेन्दुयुगीन साहित्य, पृ 25

भारतीयों को अंग्रेज़ी शिक्षा प्रदान करके उनकी भाषा, विचार, मानसिक चिन्तन, वेश-भूषा और रहन-सहन अंग्रेज़ी ढंग के हो गये। इस प्रकार भारतीयों को अभारतीय संस्कृति का अन्ध बनाने का प्रयत्न किया गया। इससे ऐसी योजना बनाई गई थी कि भारत में एक श्रेणी उत्पन्न की जाए जो रूप और रंग में भारतीय हो पर रुचि, सम्मति, आचार और विचारों में अंग्रेज़ हो। अंग्रेज़ी भाषा के प्रचार केलिए मुद्रण यंत्रों का विकास, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और पुस्तकों का प्रचार-प्रसार होने लगा। अंग्रेज़ों ने स्वार्थ लाभ केलिए किये ये वैज्ञानिक आविष्कार वास्तव में भारत को एक राष्ट्र के रूप में गठित करने की भूमिका निभाई। लेकिन इसमें ध्यान देने की बात यह है कि राष्ट्र संकल्पना का यह ढाँचा पश्चिम की देन है।

1.6.8 भारतीयों में राष्ट्रीयता का उदय

अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार प्रसार के कारण भारतीय सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन की माँग हुई। समाज के सभी लोगों को शिक्षा उपलब्ध होने के कारण मध्यवर्ग का उदय हुआ। अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त इन मध्यवर्गीय बुद्धिजीवि पाश्चात्य पुस्तकों का अध्ययन करके कहाँ के सभ्यता और चिंतन से परिचित होने लगा। यूरोपीय क्रांतियों और स्वतंत्रता संग्राम से प्रभावित होकर भारत की स्वतंत्रता और परंपरा के बारे में सोचने लगा। भारत में जबसे जनता अपने आज़ादी की सपना देखने लगी, तब से राष्ट्र संकल्पना भी शुरु हुई। यूरोपीय और भारतीय राष्ट्र संकल्पना की तुलना करे तो पता चलेगा यूरोपीय राष्ट्रीयता में साम्राज्यवाद (Imperialism) को प्रमुखता थी,

बल्कि भारतीय राष्ट्रीयता साम्राज्यवाद विरोधी (Anti Imperialistic) थी। दूसरे शब्दों में भारत में राष्ट्रीयता रूपायित होने के पीछे का एक प्रमुख कारण थी देश की आज़ादी।

1.6.8.1 संचार माध्यमों के विकास

डाक, तार, प्रेस के विकास से अपनी भाषा में समाचार पत्रों और पत्रिकाएं निकालना शुरु हुईं। जनसाधारण की भाषा में साहित्य रचने लगा। देश के प्रति प्रेम और गर्व बढ़ाने वाले विषय भी साहित्य में देखने लगे। "एक वास्तविक लोकप्रिय राष्ट्रीय चेतना का निर्माण, आधुनिक यातायात व संचार के साधनों, मुद्रणालयों, सड़कों तथा रेलों के माध्यम से ही संभव हुआ है।"[1] इसके अलावा राष्ट्रीयता रूपायित होने केलिए यह भी ज़रूरी है कि जनता एक सरकार के अधीन रहने यानी उनके हिस्से के द्वारा बनी सरकार के अधीन रहने की इच्छा रखे। अंग्रेज़ी शासकों ने जिन आधुनिक सुविधायें और राजनीतिक बदलाव जनता के सामने प्रस्तुत की, उनको भारतीय ढ़ग से यानी भारत के विकास के लिए इस्तेमाल करने का श्रेय मुख्यतः नवजागरण काल में देखा जा सकता है।

1.6.8.2 नवजागरण

ऐतिहासिक दृष्टि से 'नवजागरण' का उद्‌भव यूरोप में ही हुआ। नवजागरण 'Renainsance' शब्द का पर्यायवाची शब्द है। 14 वीं शती में

---

1. इरफान हबीब - भारत में राष्ट्रीयता का प्रश्न, साहित्य और समीक्षा, (सं) कुंवरपाल सिंह, पृ. 18

इटली से शुरु होकर 17 वीं शती के प्रारंभ तक पूरे यूरोपीय देशों के सांस्कृतिक, सामाजिक, बौद्धिक और साहित्यिक क्षेत्र में हुए परिवर्तन से नवजागरण की शुरुआत मानी जाती है। दूसरे शब्दों में इसका समय 'दांते' से शुरु होकर 'गलीलियो' तक कहा जा सकता है। उपनिवेशकृत देशों में नवजागरण आधुनिक अवधारणाओं और आधुनिक शिक्षा से उभरने वाले मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों के कारण हुआ। भारत भी इसका एक उदाहरण है।

भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में नवशिक्षित भारतवासियों ने यह महसूस किया कि राष्ट्र की अवधारणा तब रूपायित होगी, जब यहाँ राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक समन्वय होगा। यह व्यक्ति से समाज और समाज से देश की उन्नति की प्रक्रिया है। इसकी शुरुआत व्यक्ति-व्यक्ति से होती है। इस प्रकार व्यक्ति स्वातंत्र्य से शुरु होकर समाज, राजनीति और संस्कृति तक पहुँच सकते हैं। भारत में नवजागरणकाल की सभी प्रवृत्तियाँ इन सबको केन्द्र में रखकर आगे चलती थी। "... 1857 की क्रान्ति, उस क्रान्ति तक पहुँचने की वजह, भारतीयों की गुलामी की पहचान, नयी शिक्षा, उस समय हुए सुधारवादी आन्दोलन, उस क्रान्ति के उपरान्त हुए सक्रिय साम्राज्यवाद का विरोध, राष्ट्रीयता एवं आधुनिकता का आरंभ आदि नवजागरण है। अर्थात् 1857 को केन्द्र में रखकर या 1857 तथा उसके आसपास से लेकर स्वातंत्रता-प्राप्ति तक का समय नवजागरण का समय है तथा उस समय लिखित साहित्य नवजागरणकालीन साहित्य है।"[1] अतः 1857 की क्रांति और स्वातंत्र्य प्राप्ति तक का समय भारतवासियों केलिए एक नये 'राष्ट्र' की रूपायति केलिए संघर्ष का समय था।

---

1. डॉ. के. वनजा - अनुशीलन, अंक - 34, संपादकीय

1.6.8.3 1857 का विद्रोह

एक सौ वर्ष के अंग्रेज़ी शासन से नष्ट हुए अपने स्वत्वबोध की माँग थी 1857 की बगावत। अधिकांश विद्वान इसे 'बगावत', 'विद्रोह', 'सिपाही विद्रोह', क्रांति नाम से पुकारते हैं। कुछ तो 'पहला स्वातंत्र्य संग्राम' कहते हैं। वास्तव में यह घटना भारत की राष्ट्रीय आस्मिता का पहला प्रयास था। सामान्य जनता जैसे किसान, मज़दूर से लेकर सिपाहियों, जमींदारों और राजा-महाराजाओं तक इसमें शामिल थे।इसके अलावा भारत के अधिकांश भाग के लोग इसमें शामिल थे। "पेशावार से बंगाल तक, आसाम से गुजरात, मध्य भारत से लेकर दक्षिण भारत तक फैला ऐसा महासंग्राम पहले कभी नहीं हुआ।"[1] सभी वर्ग, वर्ण और धर्म का समन्वय इस विद्रोह की एक प्रमुख विशेषता थी। 1857 का यह संग्राम हिन्दू-मुस्लीम एकता की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

1.6.8.3.1 विद्रोह के कारण

अंग्रेज़ों की शासन व्यवस्था ने भारत के आर्थिक राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक व्यवस्था को तहस-नहस किया। अंग्रेजों की नवीन शासन पद्धति से किसी भी राजा को अपना स्वातंत्र्य सुरक्षित नहीं दिखाई दे रहा था। लगान व्यवस्था से असंतुष्ट किसान और पूर्वकालीन सुविधाओं से वंचित ज़मीन्दार, अव्यवस्थित सैनिक व्यवस्था, प्रशासनिक कार्यों में अंग्रेज़ी भाषा का अचानक प्रयोग आदि कारण हैं।

---

1. डॉ. धर्मेन्द्र नाथ - 1857 का मुक्ति - संग्राम, भ्रम, भ्रांतियाँ और सत्य, पृ. 31

अंग्रेज़ भारतवासियों को निम्नकोटि के समझते थे। अपने ही देश में पराया और गुलामीपन महसूस होने वाली भारतीय जनता क्रुद्ध थी। अंग्रेज़ों के साथ बैठना, वार्तालाब करना, उनके क्लबों और होटलों में प्रवेश करना और यहाँ तक की रेलवे की प्रथम श्रेणी में यात्रा करना भी भारतवासियों को मना था। '1857 की 5 जुलाई को विद्रोहियों द्वारा जो घोषणापत्र ज़ारी किया गया था, उसमें कहा गया था- सब हिन्दु और मुसलमान जानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य को चार वस्तुएँ बहुत प्रिय हैं। 1) धर्म और ईमान, 2) मान और मर्यादा, 3) अपनी तथा अपने लोगों की जान 4) संपत्ति। ये सभी भारतीयों के राज्य में सुरक्षित थी, भारतीयों के शासन में कोई भी धर्म में हस्ताक्षेप नहीं करता था। हरेक अपने ईमान पर चलता था और हरेक की इज्ज़त उसके अपने ढंग से सुरक्षित थी। पर अंग्रेज़ इन चारों के दुशमन है।"[1]

इसके अलावा स्कूलों, जेलों और सैनिकों के बीच ईसाई धर्म परिवर्तन की ज़बरदत्त कोशिश भारतीयों के धार्मिक विश्वासों का हनन करना था। इस प्रकार के अनेक कारणों से यह विद्रोह शुरु हुआ।

1.6.8.3.2 पराजय का कारण

1857 की लडाई में समन्वय तो थे, लेकिन स्वदेशी भावना की कमी भी प्रकट थी। सब के मन में अंग्रेज़ों के प्रति क्रोध थे, लेकिन देश को

---

1. ताराचंद - भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, भाग - 2, पृ. 49

आज़ाद बनाने की आशा न थी। सब लोग अपने अपने कारणों से लड रहे थे। इसलिए यह योजनाबद्ध नहीं था। एक कुशल नेतृत्व की कमी ने भी इस लडाई को पराजित किया ।

लेकिन पराजय के साथ भी इस क्रांति ने अंग्रेज़ों को पूरी तरह हिला दिया। अपनी अस्मिता के प्रति भारतवासियों की जागरूकता अंग्रेज़ों ने पहचान लिया। उनको महसूस हुआ कि भारतवासियों की एकता के भाव से उनका नाश संभव है। इस विद्रोह से अंग्रेज़ों ने समझ लिया कि अगर हिन्दु-मुस्लीम एक साथ रहे तो भारत से अपना शासन का अंत आसान है। इसलिए आगे वाली शासन प्रणाली में 'फूट डालो राज करो' नीति को अधिक प्रतिष्ठा दी। 'सन 57 में हिन्दुओं और मुसलमानों के संगठित युद्ध से सबक लेकर अंग्रेज़ कूटनीतिज्ञों ने हिन्दु-मुस्लीम भेदभाव को हर तरह से बढ़ावा दिया।"[1] भारतवासियों में भी राष्ट्र रूपायति के सफर में यह घटना प्रेरणादायक बनी। ए.आर. देशाई के मत में, "इसी एकता ने भारतीय जनता के संयुक्त राष्ट्रीय आन्दोलन की भूमिका तैयार की।"[2]

1.6.9 नवजागरणकालीन सामाजिक और धार्मिक आन्दोलन

भारत में राजनीतिक स्वतंत्रता केलिए चले रहे राष्ट्रीय आन्दोलनों के समानांतर याने एक कदम आगे भारतीय सामाजिक उन्नति केलिए काम करना ज़रूरी था। क्योंकि समाज में फैले अंधविश्वासों को न मिटाके एक

1. रामविलास शर्मा - भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण की समस्याएँ, पृ. 61
2. ए.आर. देशाई - सोशल बैकग्राउड ऑफ इन्डियन नेशनलिज़म, पृ. 275

राष्ट्रीय जागरण नामुमकिन था। भारतीय समाज में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान था। धार्मिक विश्वासों और अंधविश्वासों के आधार पर भारतीय समाज रूपायित हुआ था। लेकिन अंग्रेज़ी शिक्षा पद्धति के प्रभाव से धर्म को समाज के व्यापक हितों के आधार पर परखा जाने लगे। अंग्रेज़ों के शासन ने भारतीय समाज के अस्तित्व एवं सम्मान केलिए जो चुनौती प्रस्तुत की, उसके विरोध करने केलिए भारतीय जनता ने शिक्षित प्रबुद्ध नेताओं को खडा किया। शिक्षित मध्यवर्ग जानते थे कि 'स्वराज' के प्रति प्रेम जगाने केलिए भारत की आंतरिक शुद्धि करना ज़रूरी है।

नवजागरणकालीन सामाजिक सुधार आन्दोलनों ने भारतवासियों में बौद्धिक, सामाजिक और धार्मिक सुधार प्रस्तुत किया। वर्ग, वर्ण, जाति, धर्म के भेद-भाव मिटाके सामाजिक समन्वय की एक नया ढाँचा भी तैयार किया। भारत के हर प्रान्त और राज्य में नवजागरण की सुधारवादी चेतना हुई है। लेकिन भारत की विविधता के कारण हर प्रान्त में अलग रूप में यह प्रकट हुई थी। अपने अपने इलाकों की ज़रूरतों के अनुसार इसी शुरुआत हुई। "बंगाल नवजागरण का केन्द्रीय सार तत्व बुद्धिवाद है (राजा राम मोहन राय) जबकि हिन्दी नवजागरण का केन्द्रीय सार तत्व राष्ट्रवाद है (1857 का पहला स्वाधीनता संग्राम)। महाराष्ट्र नवजागरण का केन्द्रीय सारतत्व दलित चेतना (ज्योतिबा फूले) और सुधारवाद (नानाडे) है। तमिल नवजागरण का केन्द्रीय सारतत्व ब्राह्मणवाद-विरोध और द्रविड चेतना है (नायकर-पेरियार)। इसी तरह केरल नवजागरण का केन्द्रीय सारतत्व दलित चेतना है

(नारायण गुरु)।"[1]

शिक्षित वर्ग के प्रमुख प्रयास थी बौद्धिक स्तर पर हर व्यक्ति की उन्नति और व्यक्ति-व्यक्ति से समाज की उन्नति। सामाजिक मुक्ति ही राजनैतिक आज़ादी की पहली शर्त थी। सामाजिक समन्वय से ही देश की जनतांत्रिक, राजनैतिक व्यवस्था का गठन और राष्ट्र की अवधारणा आसान होगा। हिन्दू और मुस्लीम समुदायों के जागरूक नेतागणों ने समाजिक समन्वय की कोशिश की। इन आन्दोलनों के राष्ट्रीय रूप की ओर इशारा करके 'कृष्ण-बिहारी मिश्र' कहते हैं, "बाह्य रूप से ये सभी आन्दोलन सामाजिक और धार्मिक प्रतीत होते हैं, परन्तु इनका राष्ट्रीय रूप भी था। राष्ट्र के नवजागरण और बिखरी हुई शक्ति के पुनसंगठन में इन सभी आन्दोलनों ने योग दिया।"[2]

1.6.9.1 बंगाल से शुरुआत

आधुनिक भारत में हुए सभी परिवर्तनों की शुरुआत बंगाल से हुई थी। सामाजिक सुधार से शुरु होकर राष्ट्रीय जागरण से गुज़रकर देश की आज़ादी तक की समर गाया का शुरुआती स्वर भारतीय जनता ने बंगाल से सुना था। बंगाल से पूरे भारत भर में फैली इस क्रांति का मुख्य स्वर साम्राज्यवाद विरोध था।

1.6.9.1.1 राजा राममोहन राय और ब्रह्म समाज

राजा राममोह राय हिन्दू समाज में व्याप्त रूढ़ियों और अंधविश्वासों

---

1. शंभूनाथ - हिन्दी नवजागरण की अवधारणा: सन्देह के बावजूद, आलोचना, अंक पाँच, 2001
2. कृष्ण बिहारी मिश्र - आधुनिक सामाजिक आन्दोलन और आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ. 50

का विरोध किया। 1828 में 'ब्रह्म समाज' की स्थापना की। उन्होंने हिन्दू, मुस्लीम, ईसाई धर्मों के धर्मग्रन्थों के अध्ययन करके सभी धर्मों के मूल आधार के रूप में एकेश्वरवाद को स्थापित किया। मानवीयता की प्रतिष्ठा की। उनके अनुसार हिन्दू धर्म का सार एकेश्वरवाद है न कि बहुदेववाद। उन्होंने नवीन शिक्षा पद्धति केलिए पुस्तकें लिखीं और शिक्षा का प्रचार किया। इसके अलावा विधवा-विवाह, अन्तर्जातीय हिन्दू मुस्लिम सांप्रदायिक एकता आदि केलिए परिश्रम किया। 1829 में सती-प्रथा को कानूनी स्तर पर रोका। बाल-विवाह, बंगाल के कुलीन-प्रथा-जिसके अनुसार एक पुरुष कई स्त्रियों से विवाह कर सकता था - के विरोध भी करने की कोशिश की गई। 1827 में जूरी कानून का विरोध किया। इस बिल के अनुसार सभी धर्मों के न्यायिक जांच का अधिकार सिर्फ इसाई आधिकारियों को ही था। उन्होंने पाश्चात्य देशों के सुधार दिखाके आधुनिक शिक्षा पद्धति को बढ़ावा दिया।

1.6.9.2 थियोसफिकल सोसायटी

सन् 1875 में अमेरिका में स्थापित थियोसफिकल सोसाइटी का लक्ष्य विश्व में धार्मिक बंधुत्व स्थापित करना था। 'ऐनी बेसेन्ट' जैसे विदेशी महिला के माध्यम से भारतीय समाज में हुए परिवर्तनों का सच्चा दस्तावेज़ है यह। 1893 में श्रीमती ऐनी बेसेट द्वारा कलकत्ता में इसकी स्थापना की। उन्होंने भारतीय परंपराओं के गोरव और भविष्य में विश्वास करने का अह्वान दिया। भारतीय संस्कृति की प्रतिष्ठा करने केलिए भारतीय दर्शन,

कला और सभ्यता का प्रचार किया। जाति-प्रथा का विरोध किया। शिक्षा के प्रचार-प्रसार करने केलिए बनारस में सेंट्रल हिन्दू कॉलेज की स्थापना की।

1.6.9.3 महाराष्ट्र से नवजागरण

बंगाल में मुख्य रूप से नवजागरण का चेहरा साम्राज्यवाद विरोध का था तो महाराष्ट्र में यह ब्राह्मणवाद के विरोध में दिखाई पड़ा था। महाराष्ट्र में ब्राहम्णों की तरफ से हुए अत्याचारों से निम्न वर्ग अधिक परेशान थे। इसलिए महाराष्ट्र के नवजागरण का एक चेहरा 'दलित उन्नति का है तो दूसरा 'सुधारवाद' का है। दलितों केलिए काम करने वालों में से प्रमुख है 'ज्योतिबा फुले' और सामाजिक सुधारकों में प्रमुख है 'केशवचन्द्र सेन' और गोविन्द रानडे।

1.6.9.3.1 केशवचन्द्र सेन और महादेव गोविन्द रानडे

केशवचन्द्र सेन ने 'ब्रह्म समाज' को जोश के साथ चलाया और बाद में महाराष्ट्र में 1867 में 'प्रार्थना समाज' की स्थापना की। आगे महादेव गोविन्द रानडे भी इसमें सम्मिलित हो गए। इन लोगों ने भी धार्मिक व सामाजिक उन्नति केलिए काम किया। वे विधवा विवाह के समर्थक बने। ब्रह्म समाज से प्रभावित होने को कारण दोनों की संरचना एक जैसी थी। भारत की सनातन परंपरा और संस्कृति के महत्व देने के साथ-साथ जड़ परंपरा के विरोध भी किया गया। इस केलिए अंधविश्वास और जाति-भेद का विरोध हुआ। स्त्री-शिक्षा, अंतर्जातीय विवाह आदि पर बल दिया गया। सामाजिक उन्नति ही उनकी मुख्य लक्ष्य थी।

1.6.9.3.2 ज्योतिबा फूले

निम्न जाति में जन्मे ज्योतिबा फूले ने मुख्यतः दलितों की उन्नति केलिए काम किया। उन्होंने ब्राह्मणवाद का कट्टर विरोध किया और समाज में दलितों को निम्न बनाने वाली उन सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उठायी। छुआछूत, ऊँच-नीच, अस्पृश्यता, स्त्रियों के प्रति अनादर, किसानों के प्रति किये जानेवाले अत्याचार आदि के खिलाफ संघर्ष करने केलिए उन्होंने दलितों को काबिल बनाया। दलितों की उन्नति केलिए स्कूलों की स्थापना की गई। समाज में स्त्रियों की दयनीय स्थिति समझकर लड़कियों केलिए स्कूल खोला और विधवा विवाह का समर्थन भी किया। ज्योतिबा फूले पहले सुधारक थे, जिन्होंने लड़कियों केलिए स्कूल खोला।

1.6.9.3.3 महाराष्ट्र के अन्य प्रवर्तक

बाल कृष्ण जांबेकर, विष्णु बाबा ब्रह्मचारी, दादोबा पांडुरंग, गोपाल हरि देशमुख, भास्कर, पांडुरंग, विष्णु परशुराम शास्त्री, विष्णु शास्त्री चिपलणुकर, गणेश वासदेव जोशी, के.टी तैलंगु गोपाल गणेश, नारायण गणेश चंदावरकर, आदि महाराष्ट्र के प्रमुख प्रवर्तक रहे थे।

1.6.9.4 उत्तर से दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज

दयानन्द एक अस्तिक थे। उन्होंने वैदिक धर्म का प्रसार दिया और वाणी की तार्किक भावना करके धार्मिक और सामाजिक पक्षों को सुधार करने की कोशिश की। सन् 1875 में बंबई में उन्होंने आर्य समाज की

स्थापना की। लेकिन सन् 1877 ई, में लाहौर में आर्य समाज की स्थापना से उत्तर-भारत के आचार-विचार, रहन-सहन और संस्कृति पर इसका प्रभाव दिखाई पड़ने लगा।

बहुदेववाद, अवतारवाद, ब्राह्मणों द्वारा पोषित धार्मिक कर्मकांडों, मूर्तिपूजा तथा अंधविश्वासों का खुलकर खण्डन किया। उन्होंने जाति भेद को मिटाने केलिए 'मानव जाति' और मानव एकता पर बल दिया। शिक्षा पर भी बल दिया गया। स्त्रियों और शूद्रों को वेदों के अध्ययन का बराबर अधिकार माना। एक नवीन राष्ट्र और समाज के निर्माण में छुआछूत जैसे अंधविश्वास को बाधा समझा गया। सती-प्रथा, बहु-विवाह, बाल-विवाह के विरोध में थे वे। साथ ही साथ नारी शिक्षा ने विधवा विवाह का समर्थन भी किया। राष्ट्र के सांस्कृतिक पक्ष को उजागर करने केलिए संस्कृति के उदात्त तत्वों को पुनः प्रतिष्ठित करने की कोशिश की गई। 'सत्यार्थ प्रकाश' 'ऋग्वेदादिभाव्य भूमिका' आदि उनके प्रमुख ग्रन्थ हैं।

1.6.9.5 स्वामी विवेकानन्द और रामकृष्ण मिशन

उन्नीसवीं सदी के अंतिम आन्दोलन के रूप में रामकृष्म मिशन की स्थापना की गई। अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस' की वाणी की प्रमुखता समझकर उनकी स्मृति स्वरूप इस मिशन की स्थापना की। रामकृष्ण परमहंस ने कलकत्ता में रहकर वेदों और उपनिषदों से प्राप्त आध्यात्मिक बोध से पूरे भारत को जगाने का कार्य किया। सन् 1817 में स्थापित 'रामकृष्ण मिशन' के ज़रिए विवेकानन्द ने भी इसको आगे बढ़ाया। उन्होंने,

धर्म, समाज और राष्ट्र के प्रति कल्याणकारी दृष्टि दिखाई। "राष्ट्र' को भौगोलिक सीमा में बाँधने का विरोध करके मानव धर्म को अपनाने की घोषणा की। उन्होंने सार्वभौमिक दर्शन को अपनाया। "... कोई भी मानव और कोई भी राष्ट्र दूसरों से घृणा करते हुए जीवित नहीं रह सकता।"[1] इसी संदेश को आगे बढ़ाने केलिए विश्व-भर में भ्रमण किया गया। इसके अलावा शिक्षा का प्रसार और स्त्री समत्व केलिए भी काम किया।

1.6.9.6 केरल में नवजागरण

दक्षिण में नवजागरण ब्राह्मणवाद के विरोध में शुरु हुआ। दलित चेतना और जाति आन्दोलनों के रूप में भी यह प्रकट हुआ। कभी कभी यह बंगाल की तरह साम्राज्यवाद विरोधी भाव भी दिखाता था। आँध्रा के 'विरेशलिंगम', तमिलनाडु की गुडर जाति के संगठन 'कोंगुवेल्लाला संगम', केरल के दलित, ईष़वा और मुस्लीम जाति के संगठन, मैसूर के 'पक्कालिका' और लिंगायत संगठन' आदि सामाजिक उन्नति के साथ-साथ राजनीतिक शक्तियों के रूप में परिवर्ति हो गए।

1.6.9.6.1 नारायण गुरु

केरल के प्रमुख समाज सुधारक थे, 'नारायण गुरु'। उन्होंने जातिप्रथा का विरोध किया और एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा की। 'जाति एक, धर्म एक, ईश्वर एक, मनुष्य केलिए' संदेश फैलाया गया। केरल के अरुविपुरम में स्थापित मन्दिर में किसी देव-देवता के अलावा एक आइना प्रतिष्ठित करके

---

1. स्वामी विवेकानन्द - कास्ट, कल्चर एंड सोशलिज़्म, पृ. 51

मानव जाति का महत्व स्थापित किया गया। दलित और पिछडे वर्गों को मंदिरों में पूजारी बनाया गया। शिक्षा का प्रोत्साहन करने के साथ साथ कर्मकांड जैसे अंधविश्वासों का विरोध भी किया गया।

1.6.9.6.2 अय्यनकाली

केरल में जाति-भेद और छुआछूक को हटाने में अय्यनकाली का पमुख हाथ है। अवर्णों की उन्नति केलिए काम करन के कारण 'पुलयराजा' नाम से जाना जाता था। दलितों को आम रास्ते से चलने और अच्चे कपडे पहनने केलिए उनके द्वारा किया गाय 'बिल्लुवण्डी समर' (1893) अधिक क्रांतिकारी बना। दलितों केलिए सबसे पहले एक स्कूल खोलने का श्रेय भी उनका है। सिर्फ दलितों के ही नहीं, बल्कि भारत के मज़दूरों के भी पहला नेता थे वे। जाति धर्म और वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध उनकी 'कल्लुमाला समरगाथा' भी दलितों की धार्मिक उन्नति केलिए सहायक बने।

1.6.10 धार्मिक उन्नति

भारत की संवाद परंपरा में हमेशा विवाद निपटाने की क्षमता थी। सहिष्णुता का उदाहरण ई. पू. तीसरी शती से ही सम्राट अशोक ने दिखाया था। सहिष्णुता और धर्मनिरपेक्षता का चित्रण मध्यकालीन शासक अक्बर भी सिखाके आये हैं। लेकिन अंग्रेज़ों ने भारत में अपना अधिकार स्थापित करने केलिए और अपने शासन को ऊँचा स्थापित करने केलिए उनके पहले वाले

शासकों को धर्मान्धक स्थापित करने की कोशिश की। भारतीय संस्कृति और परंपरा को शून्य दिखाया।

लेकिन एक धर्मनिरपेक्षतावादी, सहिष्णुतावादी आधार होते हुए भी भारतीय समाज में फैले धार्मिक अंधविश्वास देश की उन्नति केलिए बाधा बनते थे। नवजागरणकालीन समाज सुधारक जानते थे कि भारत में प्रचलित धर्मों के आपसी भेद-भाव से ज़्यादा हर एक धर्म की आंतरिक सफाई करनी ज़रूरी है। इन सुधारकों ने निरंतर प्रसन्नों से धर्म के आंतरिक उन्नति की कोशिश की। क्योंकि धार्मिक उन्नति से वैयक्तिक उन्नति होगी और यह राष्ट्रीय बोध बढ़ाने में सहायक होगा।

1.6.11 व्यक्ति स्वातंत्र्य पर बल

समाज सुधार आन्दोलनों ने व्यक्ति स्वातंत्र्य पर अधिक महत्व दिया। हर व्यक्ति चाहे वह स्त्री हो या दलित या ब्राह्मण भी हो अपनी आस्मिता के प्रति सजग होकर संघर्ष करने केलिए सक्षम बना। स्त्री, दलित, या मुसलमान हमेशा समाज के अन्य वर्गों से पीडित थे। उन्होंने पहचान लिया कि वस्त्र, खान-पान, धर्म, विश्वास, काम आदि हर व्यक्ति का निजी स्वातंत्र्य है। उस पर दूसरों को हस्ताक्षेप करने का कोई हक नहीं, सरकार को भी। अमर्त्य सेन कहते है, "…. सरकार की पंथ-निष्पक्षता के आधार पर किसी व्यक्ति की परिधान-चयन की स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता।"[1]

इसप्रकार नवजागरणकालीन समाज सुधारवादी आन्दोलनों की सफलता

1. अमर्त्य़ सेन - भारतीय अर्थशास्त्र इतिहास और संस्कृति, पृ. 33

इससे भी मिलती है- "इन आन्दोलनों ने कमोबेश मात्रा में व्यक्ति स्वातंत्र्य सामाजिक एकता और राष्ट्रवाद के सिद्धांतों पर जोर दिया और उन केलिए संघर्ष किया।"[1] अतः व्यक्तिस्वातंत्र्य से मानव की प्रतिष्ठा होने लगी। मतलब नवजागरणकालीन सभी गति-विधियाँ यानी कि धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक आन्दोलनों का केन्द्र बिन्दु 'मानव' ही था। मानव के हर रूप को स्वीकृति मिली। सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आन्दोलनों से 'व्यक्ति स्वातंत्र्य' और 'अस्मिता' पर बल दिया गया तो राजनीतिक गतिविधियों से एक 'नागरिक' के रूप में प्रतिष्ठित करने की कोशिश की गयी। क्योंकि नेतागण जानते थे कि अस्मिताबोध से ही राष्ट्रीयता बोध पैदा हो जाएगा।

1.6.12 स्त्री की प्रतिष्ठा

अशिक्षा के कारण अंधविश्वासों का शिकार बनने वाली स्त्री, नवजागरणकालीन सुधारवादी, आन्दोलनों के फलस्वरूप सशक्त होने लगी। शिक्षा, सामाजिक आन्दोलन, राष्ट्रीय उन्नति, साहित्य आदि सभी क्षेत्रों में स्त्री अपनी अस्मिता दिखाने लगी। देश के सभी समाज सुधारकों ने स्त्री की उन्नति को प्रमुख स्थान दिया। इसके साथ अनेक महिला सुधारक भी थे। पंडिता रमाबाई द्वारा स्थापित 'आर्य महिला समाज' और 'शारदा सदन', टागोर की पुत्री स्वर्णकुमारी देवी द्वारा स्थापित 'महिला ब्रह्मवाद समिति' और 'साखी समिति', स्वर्णकुमारी की पुत्री सरला देवी के नेतृत्व में स्थापित

---

1. ए.आर. देसाई - भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ. 19

'भारत स्त्री महामंडल' ऐनी बेसेंट के नेतृत्व में 'अखिल भारतीय महिला संघ (Women's Indian Association), 'भारत कोकिला' उपाधि से विभूषित सरोजिनी नायडु का योगदान आदि उल्लेखनीय है। इसके अलावा कमला देवी चट्टोपाध्याय, दुर्गाबाई देशमुख, बसन्त देवी, अरुणा आसफ अली, सावित्री बाई फुले, शारदा देवी, ताराबाई शिन्दे, झाँसी रानी लक्ष्मी बाई, कमला नेहरू, गाँधी की पत्नी कस्तूरबा, सुचेता कृपलानी, विजयलक्ष्मी पंडित आदि भी प्रमुख हैं।

केरल का 'चान्नार-विद्रोह' (The Channar Revolt) (1829) स्त्री मुक्ति आन्दोलनों में प्रमुख है। अपनी इच्छा के अनुसार पोशाक धारण करने के अधिकार केलिए नारी द्वारा उठाया गया पहला कदम था यह। इसके साथ राष्ट्रीय अस्मिता के रूपायन में भी स्त्रियों का योगदान उल्लेखनीय है। नमक सत्याग्रह, असहयोग आन्दोलन भारत छोडो आन्दोलन, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार आदि उदाहरण है। इन सुधारकों का मुख्य लक्ष्य स्त्री-शिक्षा का प्रसार करना था। इनका उद्देश्य अकेला नारी जीवन का उद्धार नहीं था, नारी को लिंग पर आधारित भेद-भाव को मिटाना भी था। अपनी अस्मिता के साथ-साथ राष्ट्रीय अस्मिता का रूपायन भी इनका लक्ष्य था।

1.6.13 दलितों की उन्नति

स्त्रियों की उन्नति की तरह, दलितों की उन्नति भी सामाजित समन्वय केलिए अनिवार्य था। समाज में फैले जाति-भेद और वर्ण-भेद को मिटने

केलिए सबसे पहले दलितों की अवर्ण मानसिकता बदलना ज़रूरी था। दलित खुद अपने को निम्न कोटि के मानते थे। इसलिए सबसे पहले दलितों को इसी मानसिकता को दूर करना ज़रूरी था। शिक्षा ही उनकी उन्नति का पहला मार्ग था। शिक्षित दलित अपनी अस्मिता, अस्तित्व और हक के बारे में सोचने लगे। वे समझने लगे कि एक राष्ट्रीय जागरण केलिए जिस प्रकार सभी वर्गों की भागीदारी ज़रूरी है, उसी प्रकार उनका भी योगदान होना चाहिए। ज्योतिबा फुले, वैकुंठ स्वामिकल, अय्यनकाली, जैसे सुधारक दलितों की उन्नति केलिए काम किया। इसके साथ बंगाल में 'नामशूद्रों' का आन्दोलन, महाराष्ट्र में 'सत्यशोधक समाज', 'महाड आन्दोलन', उत्तर प्रदेश में 'आदि हिन्दु आन्दोलन', केरल में 'पुलया महासभा', 'समत्व समाज' पंजाब में 'आदि धर्म आन्दोलनों आदि दलितों की उन्नति केलिए रूपायित संगठन हैं।

1.6.14 किसान विद्रोहों का योगदान

भारत की संपन्नता कृषि पर आधारित थी। अंग्रेज़ों के आगमन से टूट गयी ग्रामीण व्यवस्था ने किसानों की ज़िन्दगी खराब किया। यह भारत की आर्थिक व्यवस्था का पतन ही था। इसके विरुद्ध किसानों ने जो संघर्ष किया, जो वास्तव में अंग्रेज़ों केलिए एक डरावना सपना बना। किसानों के खिलाफ अंग्रेज़ों ने ज़मीन्दारों को खडा किया। किसानों के परिश्रम का फल ज़मीन्दारों को जाता था और उनसे सीधा सरकार को यानी अंग्रेज़ों को।

इसके विरुद्ध देश भर में फैला विद्रोह भारत के सामाजिक और राजनीतिक स्तर की सभी घटनाओं केलिए प्रेरणादायक बना।

उन्नीसवीं सदी से शुरु हुए किसान विद्रोहों का आरंभ सन् 1812 में केरल के 'कुरिच्यों' से माना जाता है। फिर केरल में सन् 1836 और 1896 के बीच हुआ विद्रोह माप्पिला विद्रोह' के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा भारत के अन्य प्रदेशों में भी विद्रोह हुआ। सन् 1855 में बंगाल में 'सन्याल विद्रोह', सन् 1860 में नील के किसानों का हड़ताल, सन् 1872 और 1873 के बीच हुए 'पबना और बोगरा के किसान विद्रोह, सन् 1815 में पूने और अहमदनगर के 'मराठा विद्रोह' आदि प्रमुख हैं। फिर बीसवी सदी में रायबरेली, केरल के माप्पिला विद्रोह (1921), पैसावाद और केरल के ही मोराष़ा आदि भी उल्लेखनीय हैं। सन् 1881 का लोगन कम्मीशन की नियुक्ति, सन् 1887 का Tenants Improvement Act आदि किसानों के विद्रोहों का ही परिणाम है।

इन्हीं संघर्षों से वे पूर्ण रूप से सफल नहीं हुए थे। लेकिन आगे वाले सामाजिक परिवर्तनों के प्रेरक तत्व बने हैं। 1860 के नील्हे किसानों के हडताल या किसानो का जोश सन् 1917-19 के चम्पारन सत्याग्रह का कारण बना था। अपने अस्तित्व केलिए किसानों की यह लडाई नवजागरणकालीन अन्य प्रवृत्तियों से बिलकुल कम महत्व का नहीं।

1.6.15 नवजागरणकालीन राजनैतिक आन्दोलन

1857 के विद्रोह की पराजय के बाद भारत का शासन ईस्ट इन्डिया कंपनी के हाथ से ब्रिटिश साम्राज्यों के हाथ में आया। 1 नवंबर 1858 ई. को महाराणी विक्टोरिया ने अपने प्रथम घोषणा-पत्र में भारतवासियों की उन्नति संबंधी बात सुनायी। लेकिन इस घोषणा का पालन नहीं किया गया। इसने भारतीयों को और क्रुद्ध बना दिया। शिक्षित भारतवासियाँ देश की आज़ादी का सपना देखने लगे। वे जानते थे कि एक सुदृढ़ केन्द्रीय राजनैतिक पद्धति के बिना यह संभव नहीं है। यह नया राजनैतिक परिदृश्य नवीन राजनैतिक तौर-तरीकों से देश की आज़ादी की लडाई लडने का पक्षदर था। 1857 के विद्रोह से प्रभावित जनमानस एक सशक्त राष्ट्रीय क्रांति का समर्थन कर सकता था। फलस्वरूप 1857 के विद्रोह के बाद भारत के राजनैतिक क्षेत्र में अनेक आन्दोलन उठे।

1.6.15.1 इल्बर्ट बिल से असहमति

भारतवासियों में राजनैतिक व राष्ट्रीय चेतना बढाने में 'इल्बर्ड बिल' अधिक सहायक हुआ। सन् 1883 ई. में लोर्ड रिपन के शासन काल में मि. इल्बर्ट ने यह बिल प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार हिन्दुस्तानी मजिस्ट्रेटों पर विदेशी अधिकारियों के मुकदमों का फैसला करने में पाबन्दी लगा दी। रंगबेद संबंधी अंग्रेज़ी भेद-भाव का एक अच्छा उदाहरण था यह। इससे भारतवासियों की राष्ट्रीय चेतना जाग उठी।

1.6.15.2 वर्नाक्युलर एक्ट

शिक्षित भारतवासियों के उदय से भारतीय भाषाओं में पत्र-पत्रिकायें छपने लगीं। अंग्रेज़ों द्वारा स्थापित प्रेस का लाभ उठाके भारतीय अपनी भाषा में छपने लगे। जब अंग्रेज़ों की नीतियों की कटु आलोचना करने लगी और इससे राष्ट्रीय चेतना बढ़ने लगी, तब 1878 ई में लार्ड लिटन ने 'वर्नाक्लुलर एक्ट' लागू किया और प्रेस की स्वतंत्रता पर पाबन्दी लगा दी। यह ब्रिटीश शासकों के भेद-भाव का खुला चित्रण था और इससे भारतवासी अपने देश के प्रति और जागरूक होने लगे।

1.6.15.3 भारतीय राष्ट्रीय कांग्रस

भारत में वैधानिक राजनीति का पहला कदम भारतीय राष्ट्रीय कांग्रस की स्थापना से शुरु हुई। ए.ओ.ह्यूम नामक अंग्रेज़ इसका सन् 1885 में संस्थापक था। लेकिन इसकी स्थापना के बाद भारतीय राष्ट्रीय आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करने के कारण अंग्रेज़ों के लिए यह घृणास्पद बन गया। कांग्रेस के प्रारंभिक नेताओं में दादा भाई नवरोजी, डब्ल्यू सी बनर्जी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, फिरोज शाह मेहता आदि थे। दादा भाई नवरोजी ब्रिटिश पार्लिमेंट के मेम्बर भी बने थे। यह भारतवासियों केलिए गर्व की बात थी। महात्मा गाँधी जैसे बडे-बडे नेताओं के सहयोग से देश की राष्ट्रीय उन्नति को बढ़ावा मिला।

1.6.15.4 बंग-भंग आन्दोलन

बंगाल की बढ़ती राष्ट्रीयता को रोकने के लिए लोर्ड रानल्डशे ने

हिन्दू-मुस्लीम द्वेष को बढ़ावा दिया। उस समय बंगाल में सम्मिलित होने वाले बिहार और उडीसा को बंगाल से अलग बना दिया। इस प्रकार बंगाल को विभाजित करने की कोशिश की गई। इसके अलावा सिविल पद अंग्रेज़ों को ही देना आदि अनेक कारणों से क्रुद्ध भारतीयों ने सन् 1905 में बंग-भंग आन्दोलन चलाया। इसका मुख्य उद्देश्य विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार था। इनको रोकने के लिए ब्रिटीश सरकार की तरफ से विस्फोट-पदार्थ एक्ट, समाचार पत्र एक्ट, दण्डविधि एक्ट आदि लाया गया। लेकिन बंग-भंग की शक्ति के सम्मुख सरकार को सिर झुकना पडा और सन् 1911 में सरकार की तरफ से सुधारों की घोषणा से बंग-भंग रद्द कर दिया गया।

1.6.15.5 असहयोग, स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन

दादाभाई नवरोजी की अध्यक्षता में कलकत्ता में 'स्वराज' घोषित करके 'असहयोग' स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलनों को काँग्रस के प्रमुख उद्देश्य बनाया गया। इसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटीश उपनिवेशों से मुक्त होना और एक स्वाधीन शासन व्यवस्था बनाना था। बंग-भंग आन्दोलन की विजय और गाँधीजी जैसे लोगों का साथ देना भारतवासियों का आत्मविश्वास बढ़ाता रहा। अगस्त 1920 को असहयोग आन्दोलन शुरु हुआ। सरकारी शिक्षा का बरिष्कार, अदालतों का बहिष्कार, नौकरियाँ छोडना, विदेशी माल तथा सभाओं का बहिष्कार, आदि आन्दोलन के कार्यक्रम रहे। गाँधीजी के साथ नेहरू, सुभाषचन्द्र बोस आदि नेतागण भी थे।

1.6.15.6 रौलट बिल और जलियान वाला बाग

10 दिसंबर 1917 को सरकार ने एस.ए.टी रौलट महाशय की अध्यक्षता में एक कम्मेटी बनाई और फिर 'रौलट बिल' तैयार किया। इसके अनुसार सरकार युद्ध के उपरान्त उठने वाले आन्दोलनों को दबाने केलिए शक्ति प्राप्त करना था। गाँधीजी के नेतृत्व में इसके खिलाफ सत्याग्रह आरंभ किया गया। बडे तीखे स्वर में जुलूस और हड़ताल होने लगे। फलस्वरूप पंजाब के अमृत्सर में 'जालियान वाला बाग' में इकट्ठे हुए लोगों को 'जनरल डायर' के नेतृत्व में आये अंग्रेज़ी सिपाहियों की क्रूर हिंसा सहनी पडी। सिर्फ एक रास्ता वाला 'जालियान वाला बाग' में लगभक 20 हज़ार के निहत्थे जन-समूह मौजूद थे। उन सब पर गोली चलाके अंग्रेज़ों को सफलता मिली थी।

रौलट एक्ट के विरुद्ध 'जालियान वाला बाग' में इकट्ठे हुए उन जनसमूह की विशेषता यह थी कि, वहाँ हिन्दू-मुस्लीम एक साथ थे। यह समन्वय और एकता वास्तव में अपनी मिट्टी और देश केलिए था, जिससे भारत के एक राष्ट्र के रूप में बदलाव की तैयारियाँ देखी जा सकती थी।

1.6.15.7 मज़दूर-संगठन

भारत में राष्ट्रीयता रूपायित करने केलिए सभी वर्ग और जाति का समन्वय ज़रूरी था। इसी उद्देश्य से भारत के मज़दूरों का पहला अखिल भारतीय संगठन सन् 1920 में 'भारतीय ट्रेड यूनियन' रूपायित हुआ।

1.6.15.8 छात्र-संगठन

भारत में छात्रों का पहला संगठन भी सन् 1920 में नागपुर में स्थापित हुआ, जिसका नाम है, 'अखिल भारतीय कॉलेज विद्यार्थी सम्मेलन'। इसका पहला अधिवेशन लाहोर में हुआ, जिसमें छात्रों और शिक्षित वर्गों को निर्मित करने का प्रस्ताव रखा गया। आगे चलकर यूसुफ मेहरअली, मोहम्मद अली जिन्ना आदि इसके नेतृत्व में आया। कांग्रेस का सहयोग भी इस संघटन को था।

1.6.15.9 किसानों की उन्नति और अखिल भारतीय कम्यूनिस्ट सम्मेलन

प्रथम अखिल भारतीय कम्यूनिस्ट सम्मेलन सन् 1925 में कानपूर में हुआ। इन्होंने सन् 1926 में 'मज़दूर और किसान पार्टियाँ' संगठित की। क्योंकि किसान देश में हमेशा शोषण वर्ग ही रहे है। किसान के उद्धार और उन्नति से ही देश की परंपरागत आर्थिक संपन्नता स्थिर बनेगी। लेकिन अंग्रेज़ी सरकार ने इसे भी दबाने की कोशिश की। मुज़फ्फर अहमद एस.एस डांगे और शौकत उस्मान जैसे नेताओं को गिरफ्तार करके लंबी सज़ायें भी दी गईं।

1.6.16 नवजागरण और आर्थिक उन्नति

सन् 1857 के विद्रोह के बाद देश में हुए परिवर्तनों के फलस्वरूप भारतीय पूंजीवाद का भी उदय होने लगा। नवजागरणकालीन सामाजिक,

धार्मिक और राजनैतिक गतिविधियों के पश्चात् जनता में नवीन जागरण हुआ। सन् 1905 के 'स्वदेशी आन्दोलन' से एक हद तक भारतीय पूंजीवाद की शक्ति भी बढ़ी और इससे भारत के उद्योग धन्धों को पुनःप्रतिष्ठित करने में सहायता मिली। इंग्लैड से सूती और अन्य माल का आयात कट गया। यह सब भारतीय अर्थव्यवस्था की वापसी और दृढ़ होने का चित्रण दे रहे थे।

1.6.17 नवाजागरण में मुसलमानी योगदान

भारत की जनसंख्या में 40 प्रतिशत से अधिक हिन्दू है, पर मुसलमानों की संख्या भी विश्व में दूसरे क्रम पर है। यह ब्रिटेन और फ्रांस की सारी जनसंख्याओं के योग फल से भी अधिक हैं। भारत में प्रतिशत में ज़्यादा हिन्दू के होते हुए भी वर्णाश्रम व्यवस्था की दयनीय स्थिति के कारण यह धर्म में एकता का अभाव था। इसलिए औपनिवेशिक शक्तियों के सामने एक सुसंगठित शत्रु के रूप में मुसलमान खडे थे। देश का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857 की लडाई), और उसके पहले घटित किसान विद्रोहों से लेकर सन् 1947 तक की लडाई में मुसलमान का योगदान उल्लेखनीय है। उपनिवेशीकरण-प्रक्रिया में ब्रिटीश परमाधिकार को चुनौती देने वाले परम शत्रु मुगल ही थे। "अंग्रेज़ों को यह निश्चय हो गया था कि नई सत्ता के विस्तार और अस्तित्व केलिए मुसलमानों को कुचलना अनिवार्य है।"[1]

सन् 1857 की लडाई में अंग्रेज़ी सत्ता के खिलाफ जो विद्रोह हुआ उससे अंग्रेज़ों को पता चला कि उनका मुख्य शत्रु मुसलमान ही है। "1857

1. एम. डी. नूमान - मुस्लिम इन्डिया, पृ. 23

ई, के जन-विद्रोह के पश्चात सेना, सरकारी नौकरी, शिक्षा तथा राजनीतिक प्रभुता से वंचित इस वर्ग पर शत्रुओं का क्रोध शत्रु-प्रतिद्वन्दी बनकर टूट पडा था।"[1] अंग्रेज़ लोग फूट डालो राज करो' नीति अपनाकर इस वर्ग के खिलाफ हमेशा संघर्ष करते आया। फलस्वरूप मुसलमानों में अंग्रेज़ों के प्रति विरोधी मानसिकता बढ गई। इसलिए अंग्रेज़ों के खिलाफ लडने और अपने देश की उन्नति केलिए काम करने में मुसलमान वर्ग आगे थे। उन केलिए देश की उन्नति का मतलब देश के हर पहलू से है। इसलिए इस वर्ग के नेतागण एक तरफ से सामाजिक उन्नति केलिए काम कर रहे थे, तो दूसरी तरफ साम्राज्यवाद विरोध और राजनीतिक स्वतंत्रता केलिए भी। दिनकर के अनुसार, "पुनरुत्थानवाद को बढ़ावा देने वाले आन्दोलनों में वहाबी आन्दोलन, बंगाल का फार्जिया और उत्तर में देवबन्ध स्कूल का 'दारुल उलूम' आदि के प्रभावशाली नेताओं सईद अहमद, मुहम्मद कासिम नानौवती, गंगोही आदि ने अंग्रेज़ी शिक्षा, भाषा, शासन के विरुद्ध घृणा भाव जगाकर अभिमान चलाया था।"[2]

1.6.17.1 वहाबी आन्दोलन

मुस्लिम समाज के नवजागरण हेतु साउदी अरेबिया के अब्दुल बहाब ने प्रगतिशील कार्य किया था। यह 1875 तक चला रहा। यह नवीकरण की प्रक्रिया और उनके द्वारा संस्थापित कार्यक्रम 'वहाबी आन्दोलन' नाम से जाना जाता है। भारत में इसका प्रवर्तक 'सरयद अहमद रायबरेली'

---

1. ए.जी. एशियाटिक स्टडीसः रिलिजन्स एण्ड सोशल, पृ. 158
2. रामधारी सिंह दिनकर - संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 668

है। इसकी प्रवृत्तियों के कारण ब्रिटिश सरकार मुसलमानों से शंकित और शत्रुवत व्यवहार करने लगी। सरकारी नौकरियों में सिर्फ हिन्दुओं को ही भर्ती दी गई। वहाबी आन्दोलन की एक शाखा है, 'तआयूनी आन्दोलन' और 'अहले हदीस'। मौलाना करामत अली और मुरीद सय्यद नसीम आदि इसके नेता थे।

1.6.17.2 देवबन्द आन्दोलन

सन् 1857 की लडाई में सक्रिय रूप से भाग लेने वाले उलेमा वर्ग के नेतृत्व में यह स्थापित हुआ। 1857 की क्रांति से क्रुद्ध अंग्रेज़ वर्ग उलेमा वर्ग को अपने अत्याचार का शिकार बनाया गया। सन् 1866 में उत्तर प्रदेश के सहारपुर जिले के देवनन्द नामक कस्बे में मौलाना मुहम्मद कासिम ननौवती (1833-1877) और मौलाना रसीद अहमद गंगोही (1828-1905) के नेतृत्व में 'दारुल उलूम' की स्थापना की गई। अंग्रेज़ी राजनीति और अंग्रेज़ी शिक्षा का बहिष्कार करके देश की उन्नति और अस्तित्व बनाये रखना उनका उद्देश्य था। गाँधीजी के नेतृत्व में चल रहे असहयोग आन्दोलन में भी इन लोगों ने साथ दिया।

1.6.17.3 सर सैय्यद अहमद खाँ और अलीगढ़ आंदोलन

राष्ट्रीय उन्नति केलिए सभी वर्ग की उन्नति अनिवार्य थी। इस केलिए शिक्षा को अधिक महत्व देना अनिवार्य था। जिस तरह राना राममोहन राय ने अंग्रेज़ी शिक्षा को महत्व दिया, उसी तरह मुसलमान समाज केलिए नयी

शिक्षा पद्धति का समर्थन सर सैय्यद अहमद खाँ ने किया। इसकेलिए सन् 1864 ई. में 'साइंटिफिक सोसाइटी' और सन् 1875 ई. में अलीगढ़ में 'एगलो मुस्लिम ओरियंटल कॉलेज' की स्थापना की गई। यही 1920 ई में 'अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय' के रूप में सामने आया था। उनके अनुसार हिन्दू, मुसलमान और ईसाई सब देश के नागरिक हैं। उन्होंने धार्मिक एकता केलिए काम करने के साथ अंधविश्वासों और बाह्याडंबरों का भी विरोध किया। धर्मनिरपेक्षता को महत्व देकर उन्होंने स्पष्ट किया कि हिन्दू और मुसलमान धार्मिक सोच में अलग-अलग हैं, फिर भी अपने-अपने धर्म के सुधार केलिए एक दूसरे से लेन-देन कर लें।

उन्होंने 'राजभक्त मुसलमान' पत्रिका का प्रकाशन किया तथा बनारस के राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के साथ मिलकर 'देशभक्त एसौसिएशन' की स्थापना की। 1869 में मुस्लिम केंब्रिज जैसी महान शित्रा संस्थाओं की स्थापना की गई। मुसलमानों के उत्थान और सुधार केलिए प्रभावशाली पत्रिका 'तहदीब-अल-अखलाक' (सामाजिक सुधार) का प्रकाशन प्रारंभ किया गया। इलीगढ़ में उनके द्वारा किये गए सारे सुधारवादी कार्य 'अलीगढ़ आन्दोलन' के नाम से जाना जाता है।

1.6.17.4 खिलाफत आन्दोलन

तुर्की, इरान आदि इस्लामी देशों में ब्रिटेन के विरुद्ध जो राष्ट्रीय आन्दोलन हुआ उससे प्रभावित होकर 1912-13 में शिक्षित मुसलमान द्वारा

रूपायित विश्व भर में व्याप्त एक आन्दोलन है 'खिलाफत आन्दोलन' भारत में कोंग्रेस के साथ इसकी प्रवृत्तियाँ आगे चली। गाँधीजी के नेतृत्व में चले सविनय-अवज्ञा आन्दोलन जो खिलाफत आन्दोलन के ही भाग था।

इसी प्रकार राष्ट्रीय जागरण में भी मुसलमानों का योगदान सराहनीय हैं। 'शेख मुहम्मद इकबाल' ने विदेशी शासन के खिलाफ जनता को जागृत करने केलिए 'तथा देश के प्रति प्रेम बढ़ाने केलिए अपनी कविताओं का उपयोग किया। "सारे जहाँ से अच्छा... हिन्दुस्थान हमारा" जैसी उनकी पंक्तियों को सारे भारतवासियों ने भेद-भाव के बिना स्वीकार किये।

मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद बहरुद्दीन तैरयब्जी, खाँ अब्दुल गाफर खाँ जैसे अनेक नेतागण भी उभरे जिन्होंने काँग्रज़ के साथ चलकर राष्ट्रीय जागरण केलिए काम किया।

केरल में सन् 1921 का 'मलबार विद्रोह' और 'वागण त्रासदी' भी मुसलमानों की लडाई का सशक्त उदाहरण है। इसके अलावा लन्दन के'रोयिटर समाचार एजेंसी' से मिलकर संस्थापित केरल की प्रथम पत्रिका 'स्वदेशाभिमानी' का संस्थापक 'वक्कम अब्दुल खादर मौलवी, समाज सुधारक 'सैय्यद सनाउल्ला मुक्ति तङ्ल', 'चालिक्ककत कुञहम्मद हाजी', शेख मुहम्मद महीन हमदानी तंङ्ल आदि लोगों का नाम भी उल्लेखनीय है।

1.6.18 नवजागरणकालीन सांस्कृतिक उन्नति

पाश्चात्य शिक्षा और पाश्चात्य शासन व्यवस्था के प्रभाव से देश में

फैलने वाली विदेशी संस्कृति भारतीय संस्कृति को निगल रही थी। 1857 का विद्रोह और विभिन्न सुधारवादी प्रवृत्तियों के बाद उत्पन्न देशप्रेम से भारतवासियों ने यह साफ समझ लिया। उन्हों पता था कि इसने अपने ही देश में अपने आपको गुलाम बनाया। अपनी इज्ज़त और संपत्ति ही नहीं बल्कि संस्कृति की भी लूट हो रही थी। इस स्थिति में भारतवासियों के सामने सबसे बडी चुनौती थी भारत की खूबियों को प्रतिष्टित करना। हमारी भाषा, कला, आचार-विचार, वेश-भूषा, काम, धन्धा, ग्राम, लोक-गीत, कुटीर उद्योग आदि सब हमारी विशेषताएँ हैं। इन सबके समन्वय से हमारी संस्कृति पनपती है। इसलिए एक एक का महत्व दिखाके हमारी अस्मिता को बनाये रखने की कोशिश नवजागरणकाल में प्रमुख रूप में होती थी। "स्वाधीनता संघर्ष के साथ-साथ साहित्य, चित्रकला, संगीत, मूर्तिकला, विज्ञान और दर्शन के क्षेत्र में पुनर्जागरण की प्रक्रिया भी चली जो राष्ट्रीय सुसंबद्धता का माध्यम बना और जिसे आज़ादी के लक्ष्य की प्राप्ति में योगदान दिया।"[1]

1.6.18.1 भारत कला, संगीत और नृत्य की प्रतिष्ठा

भारतीय परंपरागत मूल्यों को न नष्ट करके जिस प्रकार धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों ने राष्ट्र को विकसित करने की कोशिश की, उसी प्रकार का विकास कला, संगीत और नृत्य के क्षेत्र में भी होने लगा। साम्राज्यवाद के विरुद्ध खडे होने और अपने अस्तित्व के लिए कला और संगीत को बढ़ावा देना ज़रूरी था।

---

1. वाल्मीकी प्रसाद सिंह - संस्कृति, राज्य, कलाएँ और उनसे परे, पृ. 102

कला के क्षेत्र में 'हैवेल' का योगदान उल्लेखनीय है। उन्होंने अन्य अंग्रेज़ों की भांति भारतीय कलाओं को चौपट न करके उसे आगे बढ़ाने की कोशिश की। इसलिए कला और राजनीति को अलग रखा गया। 19 वीं शताब्दी के अंत में 'राजा रवि वर्मा' और 'अवनीन्द्रनाथ ठाकुर' आदि कलाकार आगे आये।

जापानी चित्रकार 'ओकाकुर' से प्रभावित अवरीन्द्रनाथ ठाकुर पश्चिम के मृत कलारूप के विरुद्ध थे। उनके प्रसिद्ध चित्र हैं, 'शोहजाह की मृत्यु' (1900), 'भारतमाता' (1905), 'अभिसारिका का चित्र' आदि। प्राचीन और मध्यकालीन भारतीय कला को पुनरुज्जीवित करने का प्रयास भी उन्होंने किया। इस लिए कलकत्ता में 'इंडियन सोसाईटि ऑफ ओरियंटल आर्ट' की स्थापना की गई।

राजारविवर्मा भी इस क्षेत्र में अग्रणीय रहे। उनके 'पौराणिक पोर्ट्रेट' तो लोकप्रसिद्ध हैं। इसने भारत का महत्व विश्व भर पहुँचा दिया। बच्चनसिंह के अनुसार, "महावीरप्रसाद द्विवेदी के संरक्षण में लिखी जानेवाली कविताओं और रविवर्मा के चित्रों की पौराणिकता और सापटता में आश्चर्यजनक साम्य है।"[1]

संगीत के क्षेत्र में भी 'हिन्दुस्तानी संगीत' और 'घराना संगीत' का अस्तित्व 19 वीं शताब्दी से पहले माना जाता था। मुगलों के समय से ही

---

1. बच्चन सिंह - हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहस, पृ. 284

प्रचलित 'घराना संगीत' ने भारत के सांस्कृतिक महत्व को बढ़ावा दिया। हिन्दुस्तानी संगीत का लोकप्रिय नाम था 'घराना संगीत'। भारत के शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में महान संगीतज्ञ 'विष्णु नारायण भारतखण्डे' का योगदान उल्लेखनीय है। सन् 1916 ई. मे बड़ौदा में उन्होंने 'अखिल संगीत सम्मेलन' का आयोजन किया ।

'विष्णु दिगंबर पलुसकर' भी इसी क्षेत्र में थे, जिन्होंने 'गांधर्व विश्वविद्यालय' की स्थापना की। 'रघुपति राघव राजाराम... पतित सीताराम' उनकी प्रसिद्ध गीत है। बंगाल में 'रवीन्द्र संगीत' नाम से एक नयी धारा 'रवीन्द्रनाथ टागोंर' द्वारा भी शुरु किया गया।

कथक, भरतनाट्यम, कथकली आदि प्राचीन नृत्य शैली को भी प्रतिष्ठा मिली। इस प्रकार इन कलाओं की प्रतिष्ठा करके भारतीय सांस्कृतिक आस्मिता को ऊँचा दिखाने में कलाकार सफल रहे हैं- "आत्मचेतस का भाव तो संपूर्ण भारतीय नवजागरण में हैं। यही चेतना भारतीय अस्मिता-सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान है।"[1]

1.6.18.2 भारतीय भाषाओं की प्रधानता

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दौर से ही लोग समझने लगे कि 'भाषा' को किसी भी देश की अस्मिता बदलने की शक्ति है। औपनिवेशिक शक्तियों ने सभी क्षेत्रों में अंग्रेज़ी भाषा के प्रयोग करके जो बदलाव दिखाया,

---

1. बच्चन सिंह - हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहस, पृ. 286

वह भारतवासियों को अपनी भाषा के बारे में सोचने को मज़बूर किया। वे समझने लगे कि हर देश की संस्कृति और भाषा का अटूट रिश्ता है। "संस्कृति में वे सभी नैतिक और सौन्दर्यबोधक मूल्य समाहित होते हैं, जिनके ज़रिए विश्व में हम अपने स्थान को निर्दिष्ट करते हैं। जन समुदाय की अस्मिता और मानव समुदाय का सदस्य होने के विशिष्ट बोध का आधार ये मूल ही हैं और इन सारे मूल्यों के वाहक का काम भाषा करती है।"[1] इसलिए शिक्षित भारतवासियों ने देश की अस्मिता केलिए भारतीय भाषाओं की प्रतिष्ठा करने की कोशिश की। नवजागरण के फलस्वरूप अपने अपने प्रदेशों की उन्नति के साथ-साथ अपनी भाषा की उन्नति और प्रतिष्ठा ने भी देशप्रेम को बढ़ावा दिया। अपनी भाषा यानी मातृभाषा का प्रयोग करना शुरू हुआ। प्रेस की स्थापना ने इसको आसान बना दिया। अपनी भाषाओं में पत्र-पत्रिकायें और साहित्यिक रचनाएँ होने लगीं। इस प्रकार अंग्रेज़ शासन की कटु आलोचना भी होने लगी। हिन्दी, उर्दू, तमिल, मलयालम, गुजराती, कन्नड, बंगला, मराठी, तेलुंगु आदि विभिन्न प्रांतीय भाषाओं का प्रचार-प्रसारक होने लगा।

1.6.18.3 हिन्दी - उर्दू विवाद

अंग्रेज़ों के सामने सबसे बडी चुनौती थी राष्ट्रीय अस्मिता केलिए भारत को एक होने से रोकना। इसलिए उन्होंने हिन्दू-मुसलमानों को एक दूसरे से अलग करना चाहा। इसलिए उर्दू-हिन्दी भाषाओं में सांप्रदायिक विष

---

1. प्रमोद कुमार - राष्ट्रीयता की अवधारणा और भारतेन्दुयुगीन साहित्य, पृ. 43

फैला । 'वीम्स' और 'ग्राउम' इनमें प्रमुख थे। "लिपि के माध्यम से शुरु हुआ यह विवाह, भाषा तक पहुँचा और अंत में धर्म तक और इस प्रकार भारत का विभाजन हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के रूप में हो गया।"[1]

हिन्दी और उर्दू दोनों एक ही समय में उत्पन्न दो-दो भाषायें हैं। लिपि के अलावा इसमें अधिक भेद तो नहीं था। एक की लिपि 'देवनागरी' थी तो दूसरे की 'फारसी'। दोनों भाषाओं का ज़बान भारतीय थीं और बालने वाले भी भारतीय थें। लेकिन 'फारसी' जो मुगल शासकीय भाषा थी, उसके साथ मिलकर उर्दु में भी फारसी शब्दों के प्रयोग होने लगे। इससे उर्दु आम जनता से दूर होने लगा। लेकिन हिन्दी हमेशा आम जनता से दूर होने लगा। लेकिन हिन्दी हमेशा आम जनता की भाषा रही। एक राष्ट्र के रूप में भारत के विकास केलिए आम भाषा की प्रतिष्ठा अनिवार्य थी और हिन्दी इस के लिए सक्षम थी।

1.6.18.4 हिन्दी भाषा की प्रतिष्ठा और राष्ट्रीयता की माँग

एक राष्ट्र के रूप में भारत के विकास में हिन्दी भाषा और साहित्य की महती भूमिका रही है। क्योंकि देश की उन्नति या अस्मिता कायम रखने केलिए सबसे पहले अनिवार्य है अपनी बोलचाल की भाषा। विभिन्न संस्कृतियाँ, भाषा, वर्ग, वर्ण, धर्म से भारत को समन्वय के सूत्र में बाँधने की ताकत वाली भाषा उनके सामने खडीबोली हिन्दी थी। रामविलाश शर्मा के अनुसार, "हिन्दुस्तानी प्रदेश के मज़दूर वर्ग में अवधी, व्रज आदि बोलने वाले लोग हैं।

---

1. प्रमोद कुमार - राष्ट्रीयता की अवधारणा और भारतेन्दुयुगीन साहित्य, पृ. 34

इनका सामान्य परिवेश और सामान्य आर्थिक संबंध उन्हें एक सामान्य भाषा बोलने पर मज़बूर करते हैं। वह भाषा खडीबोली या हिन्दुस्तानी है।"[1]

इस प्रकार शिक्षा, प्रशासन, राजनीति, व्यापार, कानून आदि विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार होने लगा। इस केलिए प्रयत्न करने वाले विभिन्न व्यक्तियों और संस्थाओं का नाम उल्लेखनीय है।

सन् 1800 ई में स्थापित 'फोर्ट विलियम कालेज' 'हिन्दी' के विकास की पहली कड़ी है। यहाँ के अध्यापक लल्लूलाल और सदल मिश्र ने सबसे पहले 'खड़ीबोली' शब्द का प्रयोग किया। बैबिल का अनुवाद करके 'कैरे' नामक ईसाई मिशनरी प्रवर्तक ने भी हिन्दी को आगे बढ़ाया। 'मुंशी सदासुख राय निसार' और 'इंशाअल्ला खाँ' जैसे गद्य लेखक ने भी हिन्दी को बढ़ावा दिया। इन चारों ने मिलकर आरंभिक हिन्दी की उन्नति केलिए काम किया है।

सन् 1868 में 'राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द' नागरी लिपि के पक्ष में रहकर सरकार को जो आवेदन भेजा, वह हिन्दी की प्रतिष्ठा केलिए अधिक सहायक बना। उन्होंने उर्दु भाषा को विदेशी भाषा मानकर हिन्दी को बढ़ावा दिया। हिन्दी में कई ग्रन्थों की रचना करके हिन्दी की रक्षा करने का प्रयास किया गया, वह उल्लेखनीय है। 'राजा लक्ष्मण सिंह' ने भी विभिन्न संस्कृत ग्रन्थों के अनुवाद हिन्दी में करके हिन्दी को बढ़ावा दिया। अदालती

---

1. रामविलस शर्मा - भारत की भाषा समस्या, पृ. 81

भाषा के रूप में हिन्दी के प्रयोग केलिए भी इन लोगों ने खूब प्रयत्न किया। सन् 1893 में स्थापित नागरी प्रचारिणी सभा ने भी नागरी लिपि को आगे बढ़ाया। यह हिन्दी जाति का भाषायी संगठन मज़बूत करने केलिए सहायक बनी।

1.6.18.4.1 पत्र-पत्रिकाओं का योगदान

अंग्रज़ों ने अपने लाभ केलिए प्रेस की स्थापना की थी। इसका लाभ उठाकर भारतवासियाँ अपनी भाषा में पत्र-पत्रिकायें छपने लगे। भारतीयों ने अपने संपादकत्व में पत्रों का प्रकाशन करना शुरू किया, जो राष्ट्रीय आस्मिता केलिए प्रेरणादायक बने। सन् 1821 में राजा राम मोहन राय के द्वारा 'संवाद कौमुदी' से पत्रकारिता का आरंभ माना जाता है। यह बंगला भाषा में निकाला गया था। इसके अलावा फारसी, अंग्रेज़ी, हिन्दी, उर्दु, मलयालम, तमिल आदि भाषाओं में भी पत्रिकाएँ निकालना शुरु हुआ। इसके फलस्वरूप भारतवासियों में अपने देश के प्रति प्रेम बढ़ा और वे राष्ट्र पर गर्व करने लगे।

हिन्दी भाषा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से जब पत्रिकायें छपने लगी, तब राष्ट्रीयता का बोध पैदा होने लगा। सन् 1826 में हिन्दी का प्रथम समाचार पत्र 'उदन्त मार्तांड' श्री. युगल किशोर शुक्ल के संपादकत्व में निकला। फिर बाद में सन् 1854 में 'समाचार सुधावर्षन' श्याम सुन्दर सेन के संपादकत्व में हिन्दी का प्रथम दैनिक समाचार पत्र निकला। सन् 1845

ई में राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द द्वारा 'बनारस अखबार', 1850 ई में तारामोहन मैत्रेय द्वारा 'सुधाकर', 1852 ई. में लाला सदासुखलाल द्वारा 'बुद्धिप्रकाश', 1861 ई. में राजा लक्ष्मणसिंह के संपादकत्व में 'प्रजाहितैषी', 1851 ई. मनसुख द्वारा 'धर्मप्रकाश' आदि प्रमुख हिन्दी की पत्र-पत्रिकायें थीं।

राष्ट्रीय आस्मिता के रूपायन में नवजागरण के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा संपादित पत्र 'कविवचनसुधा' (15, आगस्त, 1867), और 'हरिश्चन्द्र' मैगसिन', 1874 में बाल बोधिनी नामक स्त्री शिक्षोपयोगी हिन्दी पत्रिका भी निकाली। इसके अलावा बालकृष्ण भट्ट्, केशवराम भट्ट, बद्रीनारायण चौधरी प्रेमधन, पतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी आदि लोगों द्वारा संपादित 'हिन्दी प्रदीप', 'बिहार बन्धु', 'आनन्द कादम्बिनी', 'ब्राह्मण', 'भारतेन्दु' जैसी पत्र-पत्रिकायें साहित्यिक जगत में भी हिन्दी की प्रतिष्ठा करने में सहायक बनीं। सन् 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा संपादित 'सरस्वती' पत्रिका हिन्दी नवजागरण का मुखपत्र माना जाता है। इस प्रकार जनता के बीच आम भाषा और राष्ट्रीय भावना बढ़ाने में इन पत्रिकाओं का महत्वपूर्ण स्थान है।

1.6.18.6 साहित्य का आविर्भाव और राष्ट्रीय अस्मिता का रूपायन

साहित्य ने ही मनुष्य की संवेदना की तीव्र किया है, उसे कल्पनाशील और अनुभूति परक बनाया है - और उसे बृहत्तर समाज के प्रति समर्पित

होना भी सिखाया है। प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों का प्रतिफलन है। विभिन्न संस्कृतियों से संपन्न भारत जैसे देश में राष्ट्रीयता की भावना जगाने में साहित्य का उल्लेखनीय योगदान है। जिस प्रकार सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक आन्दोलनों के माध्यम से देश के विभिन्न वर्ण, वर्ग, जाति, धर्म और भाषा के समन्वय और प्रतिष्ठा करने की कोशिश की गई, इन सब को एक साथ मिलाने में साहित्य सफल हुआ। हिन्दी भाषा को देश के समन्वय की कडी के रूप में प्रस्तुत करने में भी नवजागरणकालीन साहित्य सफल हुआ है। बालकृष्ण भट्ट के अनुसार, "…. साहित्य यदि जनसमूह (Nation) के चित्त का चित्रपट कहा जाए तो संगत है। किसी दंश का इतिहास पढ़ने से केवल बाहरी हाल हम उस देश की जान सकते हैं, पर साहित्य के अनुशूलन से कौम के सर्व समय-समय पर आभ्यंतरिक भाव हमें परिस्फुट हो सकते है।"[1]

इस प्रकार साहित्य के माध्यम से राष्ट्र संकल्पना का नया मार्ग खुल गया। राष्ट्रीय भावना का उदय इस समय की बड़ी विशेषता है। विभिन्न समाज सुधारवादी संस्थाओं का प्रभाव साहित्य पर भी प्रतिबिंबित हुआ। कविता के क्षेत्र में रीति निरूपण, श्रृंगार, प्रकृति चित्रण, के स्थान पर सामाजिक चेतना, राष्ट्रीयता, भक्ति, हास्य-व्यंग्य, सांस्कृतिक उन्नति आदि अनेक विषयों को प्रधानता मिली। क्षेत्रीयता से ऊपर उठकर राष्ट्र की संकल्पना करने में कविगण सफल रहे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'विजयिनी विजय बैजयन्ती', बदरी नारायण प्रेमघन की कविता 'आनन्द अरुणोदय',

1. बालकृष्ण भट्ट प्रतिनिधि संकलन (सं) सत्य प्रकाश मिश्र, पृ. 15

'हार्दिक हर्षादर्श', प्रतापनारायण मिश्र की कविता 'महापर्व' और 'नया संवत', मैथिली शरण गुप्त की 'भारत -भारती', 'साकेत', अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध' की 'प्रियप्रवास' आदि प्रमुख कविताएँ हैं। इनके अलावा श्रीधर पाठक, बालमुकुन्त गुप्त, राधाकृष्ण दास, अम्बिकादत्त व्यास, ठाकुर जगमोहन सिंह, महावीर प्रसाद द्विवेदी, रामनरेश त्रिपाठी आदि अन्य प्रमुख कविगण है। सन् 1900 के बाद खड़ीबोली हिन्दी काव्य की मुख्य भाषा बन गयी। विभिन्न विषयों का चयन और सभी काव्य रूपों का प्रयोग भी होने लगा।

साहित्य में विभिन्न गद्य विधाओं का आर्विभाव भी हुआ। गद्य के आरंभ से साहित्य जनता के और निकट आया। उपन्यास, नाटक, कहानी निबन्ध, आलोचना आदि विधाओं के विकास ने हिन्दी भाषा को निकट लाने और इससे राष्ट्र संकल्पना रूपायित करने में सहायता प्रदान की।

नाटक में पौराणिक, ऐतिहासिक, रोमानी, सामाजिक, सांस्कृतिक राष्ट्रीय आदि विषयों की प्रमुखता थी। खडीबोली हिन्दी में अनूदित नाटक भी इस समय की विशेषता है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की विद्यासुन्दर, मुद्राराक्षस, भारत जननी, विषस्य विषमौषधम्, वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति और 'भारत दुर्दशा', कार्तिकाप्रसाद खत्री कृत 'उषाहरण', अम्बिकादत्त व्यास कृत 'ललिता' आदि शुरुआती दौर के प्रमुख नाटक हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के बाद शिवनन्दन सहाय कृत 'सुदामा', गंगाप्रसाद कृत 'रामाभिषेक', प्रतापनारायण मिश्र कृत भारत दुर्दशा' आदि चर्चित नाटक हैं।

उस समय उपन्यास बंगला और अंग्रेज़ी से प्रेरणा पाकर लिखा गया था। लाला श्रीनिवास दास का 'परीक्षागुरु', श्रद्धाराम फुल्लौरी का 'भाग्यवती', बालकृष्ण भट्ट का 'नूतन ब्रह्मचारी', राधाकृष्ण दास का 'निस्सहाय हिन्दू' आदि से शुरु होकर देवकीनन्दन खत्री तिलस्मी उपन्यासों जैसे 'भूतनाथ और काजर की कोठरी', गोपालरम गहमरी के जासूसी उपन्यास, विट्ठलदास नागर का घटनाप्रधान उपन्यास और किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक उपन्यासों की भी रचना हुई। जनता में साहित्यिक रुचि बढ़ाने में इन उपन्यासों का योगदान उल्लेखनीय है।

निबंध और आलोचना के क्षेत्र में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन, बालमुकुन्द गुप्त, चन्दधर शर्मा गुलेरी, रामचन्द्र शुक्ल आदि प्रमुख हैं। पत्र-पत्रिकाओं में निबन्धों का प्रकाशन हुआ। राजनीति, समाज-सुधार, धर्म, अतीत, आर्थिक दुर्दशा, जैसे अनेक विषयों में निबंध और आलोचना भी लिखे गये। 'ईश्वर भी क्या ठठोल है', 'चली सो चली', 'आचरण की सभ्यता', 'सच्ची वीरता', 'प्रभात', 'आत्मनिवेदन', गद्यमाला आदि इनमें से कुछ हैं। इसके अलावा जीवनी साहित्य, यात्रावृत्त, पत्र साहित्य कहानी संस्मरण आदि विभिन्न विधाओं से साहित्य संपन्न हुआ।

निष्कर्षत: नवजागरणकाल में जब से जनमानस की भाषा (हिन्दी) और शैली (गद्य) में साहित्य रचना शुरु हुई, तब से राष्ट्र संकल्पना का नया मार्ग खुल गया।

निष्कर्ष

विश्व भर की राष्ट्र संबंधी अवधारणाओं पर विचार किया जाए तो पता चलता है कि राष्ट्र आधुनिक पूँजीवादी समाज में रूपायित हुआ है। इतिहास, भूगोल, संस्कृति, समाज, राजनीति, अर्थव्यवस्था जैसे अनेक तत्व इसमें काम करते हैं। हर एक राष्ट्र की ऐतिहासिक ज़रूरतों के आधार पर इन तत्वों का इस्तेमाल किया गया है। इन सारे तत्वों के समन्वय पर ही एक राष्ट्र की सफलता निर्भर है।

भारतीय राष्ट्र संकल्पना को गहराई से देखने की कोशिश करें तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि यह चेतना विभिन्न रूपों में युगों ही उभरी है और साहित्य के माध्यम से उसे अभिव्यक्ति मिली है। भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक आन्दोलनों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट होकर सामने आ जाती है। इस बात को नकारा नहीं किया जा सकता कि यह चेतना सर्वथा पश्चिम की देन है। हमारे अंदर सोयी हुई राष्ट्रीय भावनाओं को जगाने में उपनिवेशिक गुलामीपन ही सहायक बना। पाश्चात्य शिक्षा, आधुनिक सुविधायें जैसे डाक, तार, रेल और प्रेस के विकास ने इसको आसान बनाया। लेकिन भारतीय-जनमानस की भाषा में साहित्य के आरंभ से इसको सफलता मिली।

❖ ❖ ❖

दूसरा अध्याय

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियाँ: एक परिचय

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियाँः एक परिचय

भूमिका

नवजागरण गद्यविधाओं का उन्मेष का काल है। इस दशक में नाटक, निबंध, आलोचना, कहानी, उपन्यास जैसी अनेक गद्य विधाओं ने नये तरीके से हिन्दी साहित्य में अपना नाम अंकित किया। इस युग में रचित साहित्य सांस्कृतिक जागरण का साहित्य माना जाता है। इसलिए हिन्दी साहित्य में गद्य रचना की शुरुआत से आये बदलाव पूरे राष्ट्र को उन्नति की ओर लाने में सहायक बने- "आधुनिक काल में गद्य का आर्विभाव सबसे प्रधान साहित्यिक घटना है। इसलिए उसके प्रसार का वर्णन विशेष विस्तार के साथ करना पडा है।"[1]

हिन्दी गद्य के विकास के साथ ही हिन्दी कहानी की उत्पत्ति भी हुई। वास्तव में कहानी कहने या सुनने की आदत पुरातन काल से प्रचलित है। समाज में प्रचलित धार्मिक और पौराणिक कहानियों से हटकर एक नये रूप धारण करने की प्रक्रिया नवजागरणकालीन कहानियों में देखी जा सकती हैं। बृहकथा, बैतालपच्चीसी, सिंहासनबत्तीसी आदि पौराणिक कथाओं के स्थान पर आम जनता की भाषा और शैली में कहानियाँ लिखना शुरु हुआ। इसमें यूरोपीय शैली का प्रभाव ज़रूर पडा है, लेकिन भारतीय तरीके में इसको प्रस्तुत किया गया है।

2.1 'कहानी' अर्थ और परिभाषा

किसी भी साहित्य विधा के समान कहानी का संबंध भी मानव

1. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 9

जीवन की यथार्थभरी संवेदनाओं और सच्चाइयों से है। लेकिन कहानी जीवन के व्यापक सन्दर्भों से युक्त नहीं होती। किसी एक मार्मिक विषय को एक दो पात्र के ज़रिए प्रस्तुत किया जाता है। इससे उस विषय को व्यापकता मिलती है। एडगर एलन पो के अनुसार "कहानी अपने को किसी लाजवाब या एकल प्रभाव पर केन्द्रित रखती है और प्रभाव की समग्रता ही उसका प्रमुख लक्ष्य होता है। कहानी की निश्चित पहचान उसकी प्रभावान्विति है।"[1]

आयरिश कहानी लेखक 'फैक ओ कोनार' के अनुसार कहानी "सतह के नीचे छिपे आबादी-समूह द्वारा प्रभुत्वसंपन्न समुदाय को संबोधित करने का साधन है।"[2] प्रेमचन्द्र जैसे रचनाकारों ने कहानी के मनोवैज्ञानिक तत्व को महत्व देकर कहा है, "सबसे उत्तम कहानी वह होती है, जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक स्तर पर हो।"[3] गोपाल राय के अनुसार, "आदर्श कहानी तो वह होती है, जिसमें केवल एक ही प्रसंग होता है, या अधिक से अधिक, मुख्य प्रसंग के इर्दगिर्द सहायक रूप में कुछ गौण प्रसंग होते हैं।"[4]

'कहानी' के विभिन्न साहित्य में विभिन्न पर्याय वाची शब्द प्रचलित हैं। संस्कृत साहित्य में इसका पर्याय 'कथा' है तो अपभ्रंश में 'कहा' है । भोजपुरी, अवधी आदि भाषाओं में 'कहानी', कहनी आदि रूपों में प्रचलित हैं। हिन्दी में यह शब्द 'अवधी', 'भोजपुरी' आदि से ही आया है। अरबी-फार्सी में 'किस्सा' 'दास्तान' और 'अफ्साना' आदि शब्द का प्रयोग होता था।

---

1. एडगर एले पो - ट्वाइस टोल्ड टेल्स की भूमिका
2. शोर्ट स्टोरी एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, पृ. 138
3. प्रेमचन्द - मानसरोवर- भाग 1, पृ. प्राक्कथन
4. गोपाल राय - हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ. 22

ये बाद में हिन्दी-उर्दु में भी प्रयुक्त होने लगे थे। इसके अलावा आख्यान, उपाख्यान, आख्यायिका, वृत्त, इतिवृत्त, गाथा, पुराण, वार्ता, चरित आदि रूप जो संस्कृत के प्रभाव से प्रचलित हैं। बंगला में 'गल्प' कहा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी तक आते-आते 'कहानी' शब्द अधिक प्रचलित होने लगा। यह अंग्रेज़ी के शॉर्ट स्टोरी (Short story) का पर्यायवाची शब्द है।

2.2 हिन्दी की प्रारंभिक कहानियाँ

हिन्दी में कहानी लिखने की शुरुआत उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुई थी। उस समय मुद्रण यंत्रों के बढते उपयोग के फलस्वरूप परंपरागत मौखिक कथा मुद्रित होने लगी। इसप्रकार सन् 1841 में हिन्दी की पहली मौलिक कहानी सैयद इंशा अल्ला खाँ द्वारा रचित 'रानी केतकी की कहानी' मुद्रित हुई।

अंग्रेज़ों ने अपने अफसरों को स्थानीय भाषाएँ सिखाने और भारत में अपना अधिकार स्थापित करने केलिए सन् 1800 में स्थापित फोर्ट विलियम कॉलेज के कुछ शिक्षकों को हिन्दी कहानी लिखने का कार्य सौंपा। इसप्रकार संस्कृत से कहानियों का अनुवाद होने लगा। लल्लूलाल की 'प्रेमसागर', सदल मिश्र की कहानी 'नासिकेतोपाख्यान' आदि इनमें प्रमुख है। सदासुखलाल की 'सुखसागर' भी इसी दौरान लिखी गई कहानी है। इस बीच बहुत सी फार्सी और संस्कृत परंपरा की कहानियाँ भी अनूदित होकर हिन्दी

में आयीं। लेकिन इन कहानियों के कथासूत्र संस्कृत से जोडने के कारण इन्हें आधुनिक हिन्दी कहानी की कोटि में नहीं रखा जाता।

हिन्दी की प्रतिष्ठा करने केलिए शिक्षा विभाग में काम करने वाले राजाशिवप्रसाद सितारेहिंद साहित्य के पाठ्यक्रम केलिए पाठ्यपुस्तकें तैय्यार करने लगे। सन् 1867 में प्रकाशित साहित्य की पाठ्यपुस्तक 'गुटका' में कुछ कहानियाँ प्रकाशित हुईं। राजाशिवप्रसाद सितारेहिंद की ही 'राजा भोज का सपना', 'वीरसिंह का वृत्तांत', 'आलसियों का कोडा' आदि उदाहरण है।

ईसाई धर्मप्रचारकों द्वारा स्थापित स्कूलों में पाठ्य-पुस्तकों के रूप में लिखवाये गये उपदेश-प्रधान कथाएँ उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में मिलती हैं। जैसे मुंशी नवलकिशोर कृत 'मनोहर कहानी' (1880), श्रीलाल कृत 'धर्मसिंह का वृत्तान्त' (1853), राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द कृत 'वीर सिंह का वृत्तान्त' (1855) 'वामा मनोरंजन' (1856) और 'लडकों की कहानी' (1860), चण्डीप्रसाद सिंह कृत 'हास्य रतन' (1886), पं. कृष्णदत्त कृत 'बुद्धि फलोदय' (1860) आदि। लेकिन इन्हें कहानी के विकास से नहीं जोडा जा सकता। अनेक किस्सों की अवतारणा भी इसी समय हुई जैसे 'किस्सा तोता मैना', 'हातिमताई' आदि। सन् 1871 में रेवेरेंड जे. न्यूटन रचित 'जमींदार का दृष्टान्त' नामक कहानी भी इसी बीच प्रकाशित हुई।

भारतेन्दु युग की पत्रिकाओं जैसे - कविवचनसुधा (1873), हरिष्चन्द्र

मैगजीन (1873), हरिश्चन्द्र चन्द्रिका (1874), हिन्दी प्रदीप (1877), भारत मित्र (1877), सार सुधानिधि (1879), ब्राह्मण (1880), क्षत्रिय पत्रिका (1880) में हिन्दी कहानी का आर्विभाव तो देखा जा सकता है। लेकिन इनमें से अधिकांश कथा तत्व वाले निबन्ध और उपन्यास थे।

इसप्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक 'कहानी' और उपन्यास नाम से गद्य कथाओं का प्रकाशन चलता रहा। लेकिन इन कथाओं को आधुनिक 'चोटी कहानी' की श्रेणी में नहीं रखा जाता। क्योंकि उस समय के लेखकों का मुख्य लक्ष्य एक साहित्यिक विधा के रूप में कहानी का परिचय देना मात्र नहीं था, बल्कि राष्ट्र की अस्मिता को बनाये रखने वाली एक भाषा यानी 'हिन्दी' को प्रतिष्ठित करना भी था। इसलिए पौराणिक आख्यानों और स्वप्न कथाओं के माध्यम से जनता को आकृष्ट करके हिन्दी भाषा से संपर्क स्थापित करने में ये लेखक सफल रहे।

बीसवीं सदी भारत में नवजागरणकालीन क्रान्तिकारी आन्दोलनों का समय था। सामाजिक नवजागरण के साथ 'स्वदेशी' और 'बहिष्कार' जैसे अनेक राष्ट्रीय आन्दोलनों के मिलन से देश के राजनीतिक पुनर्जागरण का कार्य ज़ारी था। हिन्दी कहानी का वास्तविक विकास भी इसी काल में हुआ था। बीसवीं शताब्दी के आरंभ में अंग्रेज़ी और बंगला साहित्य के माध्यम से हिन्दी लेखनों ने यूरोपीय 'छोटी कहानी' से संबंध बनाया। इसप्रकार सन् 1900 से छोटी कथा के रूप में कहानियाँ छपने लगीं। विभिन्न पत्र-

पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकाशित इन कहानियों में देश के सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक और सांस्कृतिक गतिविधियाँ सामने आयीं। इसकी पहुँच देश के कोने कोने में हुई और भारत को एक राष्ट्र का रूप धारण करने में सहायता मिली। इसलिए इस क्षेत्र में प्रयत्ननिरत पत्रिकाओं पर थोडा विचार करना ज़रूरी सिद्ध होता है।

बीसवीं सदी के दूसरे दशक से हिन्दी कहानी के क्षेत्र में परिपक्व कहानियाँ लगी। शिल्प और वस्तु की दृष्टि से भी। बदलाव आयी। यथार्थवादिता, रोमानी प्रवृत्ति, मनोवैज्ञानिकता, व्यक्तिवादिता, राष्ट्रीयता आदि मुख्य विशेषताएँ हैं उस काल की कहानियों में।

सन् 1911 के बाद अनूदित कहानियों की संख्या मौलिक कहानियों की तुलना में कम हो गयी। लेकिन रूसी, जापानी और चीनी भाषाओं में लिखी लोक-कहानियों का अनुवाद इस समय में देखा जा सकता है।

महिला कहनिकरों का योगदान बढ़ने लगा। जयशंकर प्रसाद और प्रेमचन्द्र की कहानियों की शुरुआत भी इसी समय में हुई । प्रेमचन्द नवाबराय में से उर्दु में लिखते थे।

2.2.1 सरस्वती पत्रिका का योगदान

हिन्दी कहानी की शुरुआती दौर में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान उल्लेखनीय हैं। प्रारंभिक कहानियाँ पहले पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं और बाद में कहानी संग्रह के रूप में प्रकाशित होते थे।

सन् 1900 में प्रकाशित 'सरस्वती' पत्रिका ने हिन्दी कहानी के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। बंगाल के 'चिंतामणी घोष के संपादन में शुरु हुई इस पत्रिका में आगे श्यामसुन्दर दास, राधाकृष्ण दास, जगन्नाथदास कार्तिक प्रसाद और किशोरीलालगोस्वामी आदि लोग भी संपादक बने। सन् 1901 में अकेले श्यामसुन्दर दास इसके संपादक बने। बाद में सन् 1903 में महावीरप्रसाद द्विवेदी ने उसका संपादन कार्य सँभाला।

सरस्वती के प्रकाशनारंभ के साथ उसके संपादकों ने छोटी कहानियों के प्रकाशन की आवश्यकता महसूस की। तत्पश्चात् 'आख्यायिका' नाम से कहानी छपना शुरु हुआ। सन् 1903 में जब महावीर प्रसाद द्विवेदी सरस्वती पत्रिका की संपादक बने तो उसके बाद भी 'आख्यायिका' पद को स्वीकार कर लिया गया। इसके बारे में गोपाल राय यों लिखते है, "अख्यायिका पद के साथ एक सुविधा यह थी कि उसका परंपरागत संबंध 'ख्यात कथा' से था, जिसकी रचना आसान भी थी और शासन की टेढ़ी नज़र से बचने का परदा भी।"[1] इसप्रकार 'सरस्वती' का प्रकाशन हिन्दी कहानी साहित्य की शुरुआती विकास केलिए सहायक बना। 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी के द्वारा अनूदित, छायानूदित और मौलिक कहानियों का प्रकाशन भी शुरु हुआ।

2.2.1.1 अन्य पत्रिकाएँ

सरस्वती के बाद इन्दु (1909), सेवक (1910) नवजीवन (1910), मर्यादा (1911), गृहलक्ष्मी (1912), हिन्दी मनोरंजन (1912), नवनीत

1. गोपाल राय - हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ. 28

(1913), प्रभा (1913), प्रियंवदा (1913), साहित्य पत्रिका (1914), 'छत्तीसगढ़मित्र', नैश्योपकारक, सुदर्शन आदि अनेक पत्रिकाओं ने बीसवीं शती के प्रथम दशक में हिन्दी कहानी साहित्य को संपन्न बनाया।

2.3 बीसवीं सदी की प्रथम कहानी

सन् 1900 में सरस्वती में प्रकाशित किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्तुमती' इस युग की प्रथम कहानी मानी जाती है। शेख्सपियर के नाटक 'टेम्पेस्ट' की छाया होने के कारण इसे मौलिक कहानी मानने में आपत्ति दिखाई देती है।

2.4 अनूदित कहानियाँ

इस मसय अंग्रेज़ी और बंगला कहानियों का अनुवाद भी हो रहा था। इसमें रवीन्द्रनाथ टागोर की कहानियों का अनुवाद ज़्यादात्तर हो रहा था। इसके अलावा गुजराती, फ्रेंच कहानियों का अनुवाद और हिन्दुस्तान लोककथाओं का पुनर्कथन भी उल्लेखनीय है।

रवीन्द्रनाथ टागोर की कहानियों के अनुवाद का उदाहरण है :- लाला पार्वतीनन्दन द्वारा 'मुक्ति का उपाय' (1902, सरस्वती), कुमुदबन्धु मित्र द्वारा 'दृष्टिदान' (1902, सरस्वती), बंगमहिला द्वारा 'दान प्रतिदान' (1906, सरस्वती), 'भाई-बहन' (1909, सरस्वती) और 'दालिया' (सरस्वती, 1909) आदि।

अन्य अनूदित कहानियाँ हैं, बाबा वैद्यनाथ द्वारा 'तोबी में तूफान' (सरस्वती, 1903) विज्ञान दर्पण, पत्रिका से कुमुदबन्धु द्वारा 'अज्ञान और विज्ञान' (1904,. सरस्वती), सूर्यनारायण दीक्षित द्वारा 'चन्द्रहास का अद्‌भुत आख्यान' (1906, सरस्वती) किसी अज्ञात चतुर्वेदी द्वारा 'भूल भुलैया' (1906, सरस्वती), वेंकटेश नारायण त्रिपाठी द्वारा एक आशरफी की आत्मकहानी (1906, सरस्वती), रामजी दास वैश्य द्वारा 'एक के दो-दो' (1906, सरस्वती), चांदनी द्वारा 'पोषित पत्रिका' (1906, सरस्वती), सेठ कन्हैयालाल पोद्धार द्वारा 'एक अद्‌भुत स्वप्न' (1906, वैश्योपकारक), श्रीलाल शालग्राम द्वारा 'एक ज्योतिषी की आत्मकथा' (1909, सरस्वती), कुन्दनलाल शाह द्वारा 'प्रत्युपकार का अद्‌भुत उदाहरण' (अंग्रेज़ी से अनुवाद, 1909, सरस्वती), फ्रेंच कहानी का अनुवाद उदय नारायण वाजपेयी द्वारा 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गदपि गरीयसी' नाम से किया (1907, सरस्वती) और हिन्दुस्तान की लोककथाओं का शिवनारायण शुक्ल द्वारा 'सात सुनार' नाम से किया (1909, सरस्वती)

बंगमहिला ने भी कुछ कहानियों का अनुवाद किया है। रवीन्द्रनाथ टागोर की कहानियों का बंगमिला द्वारा किये गए अनुवाद का उल्लेख पहले ही दिया जा चुका है। इसके अलावा बंगला लेखक दीनेन्द्र कुमार राय के दो गल्प का 'राई से पर्वत' (1902, सरस्वती), 'तिल से ताड' (1902, सिद्धेश्वर प्रेस बनारस) का अनुवाद किया। 'सखा ओ साथी' नाम के बंगला गल्प का अनुवाद-'अपूर्व प्रतिज्ञा पालक' नाम से, अपनी माँ श्रीमती नीरदावासिनी

घोष की बंगला कहानी का अनुवाद 'कुंभ में छोटी बहु' नाम से (1906, सरस्वती), बंगला लेखक श्रीयुत नारायणदास सेन की कहानी का अनुवाद 'मुरला' (1908, सरस्वती) नाम से, देवेन्द्रकुमार सेन की कहानी का अनुवाद 'मातृहीन' नाम से और हरिहरसेठ की कहानी 'संसार सुख' का अनुवाद भी किया।

इन अनूदित कहानियों के अध्ययन से पता चलता है कि इस समय के अनुवाद का लक्ष्य सिर्फ मनोरंजन मात्र नहीं बल्कि खडीबोली हिन्दी की प्रतिष्ठा और नवजागरण को बढ़ावा देना भी था।

इस दशक में सरस्वती, इन्दु, हिन्दी गल्पमाला, मर्यादा आदि साहित्यिक पत्रिकाओं के माध्यम से फ्रांसीसी और रूसी कहानियों से प्रभावित रवीन्द्रनाथ टागोर, प्रभात कुमार वन्धोपाध्याय, चारुचन्द्र वन्धोपाध्याय आदि की अनूदित कहानयाँ प्रकाशित हो रही थीं। इनके अलावा टाल्स्टाय की कहानियों, यूरोप की कहानियों, तुर्गनेव की कहानियों, मोपासों की कहानियों का अनुवाद प्रेमचन्द, गोपाल नेवाटिया, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार और इलाचन्द्र जोशी द्वारा होने लगा।

इस दशक की उल्लेखनीय कहानियाँ हैं, बंगमहिला की कहानी 'हृदय परीक्षा' (1914, सरस्वती) और 'मन की दृढ़ता' (1914, सरस्वती) जो बंगला मासिक पत्रिका 'यमुना' से, बंगला कहानीकार यतीन्द्रनाथ सोम की कहानी का अनुवाद चण्डीप्रसाद द्वारा 'सुधा' नाम से, बंगला मासिक

'प्रवासी' में प्रकाशित चारु चन्द्र बनर्जी की कहानी 'एकाद मेहदिर पाता' का अनुवाद पं. रापनारायण पाण्डेय द्वारा 'नवाब नन्दिनी' (सरस्वती) नाम से, रवीन्द्रनाथ टागोर की कहानियों का अनुवाद विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक द्वारा निशाकाल (1912) नाम से और विश्वंभरनाथ जिज्जा द्वारा परदेशी (1912) नाम से, आस्कर वाइल्ड की कहानी का अनुवाद शिवपूजन सहाय द्वारा 'बुलबुल और गुलाब' (1922 के आसपास) नाम से हुआ।

2.5 पौराणिक आख्यानों पर आधारित कहानियाँ

सन् 1900 से पूर्व जो गद्यकथायें रची थीं, उनमें अधिकांश पौराणिक कथाओं के आधार पर थीं। लेकिन 1900 तक आते-आते इन कहानियों की संख्या कम हो गयी। माधवप्रसाद मिश्र की कहानियाँ जैसे, 'मन की चंचलता' (1900, सरस्वती), 'दयालू मिथिलेश' 'पितृभक्ति का फल', 'सत्य और सन्तोष का फल' आदि उदाहरण है। ये कहानियाँ तत्कालीन 'सुदर्शन' और 'वैश्योपकारक' मासिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं।

2.6 ऐतिहासिक कहानियाँ

इस समय की कुछ कहानियों में इतिहास की प्रधानता तो है, लेकिन कथानक विशुद्ध रूप से ऐतिहासिक न होने के कारण इसे ऐतिहासिक की कोटि में नहीं, बल्कि इतिहास प्रेरित कहानी में रखा जा सकता हैं। इस प्रकार की कहानियाँ हैं, माधवप्रसाद मिश्र की 'पुरोहित का आत्म त्याग' (1902, सरस्वती) माधवराव सप्रे की कहानी 'एक पथिक का स्वप्न' (1900,

छत्तीसगढ़मित्र), वृन्दावनलाल वर्मा की कहानी 'राखी बन्द भाई' (1909, सरस्वती) जिसका कथ्य राजपूतों की वीरता और वचनबद्धता पर आधारित है, लक्ष्मीधर वाजपेयी की कहानी 'तीष्ण छुरी' (1907, सरस्वती) आदि।

इस दशक की ऐतिहासिक कहानियों में मध्यकालीन राजा-महाराजाओं को लेकर 1857 की क्रांति तक के विषय आते हैं। जयशंकर प्रसाद की कहानी 'आकाशदीप', ममता', 'स्वर्ग के खण्डहर में', 'पुरस्कार', 'दासी', चितौड उद्धार आदि प्रेमचन्द की 'फतह', शिवपूजन सहाय की कहनियाँ 'शरणागत-रक्षा', 'मुंडमाल', 'सतीत्व की उज्वल प्रभा', विषपान, सुदर्शन की 'न्याय मन्त्री', 'कालचक्र', पन्थ की प्रतिष्ठा', बावली बहु की वीरांगना (1912, गृहलक्ष्मी), महावीर प्रसाद द्विवेदी की कहानी 'शायरों के शाहंशाह अबूतालिब' (1911), 'शाहजहाँ', राजा राधिका रमणप्रसाद सिंह की कहानी 'वीर बाला', पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र की कहनियाँ 'भीषण स्मृति', 'नादिरशाही', कालकोठरी आदि प्रमुख ऐतिहासिक कहानियाँ हैं।

2.7 व्यंग्य कहानियाँ

तत्कालीन समाज के अंधविश्वासों, अनाचारों, साहित्यकारों के खोखलापन, अंग्रेज़ों पर व्यंग्य करने वाली कहानियाँ हैं, गिरिजादत्त वाजपेयी की पण्डित और पण्डितानी' (1903, सरस्वती) 'बीबी वर्णमाला छद्म नाम से माध्वप्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'अनूठा स्वप्न' (1990, सुदर्शन), बंगमाहिला की कहानी 'चन्द्रदेव से मेरी बातें (1904, सरस्वती) कुमुदबन्धु मित्र की

'अज्ञान और विज्ञान' (1904, सरस्वती) और माधवप्रसाद मिश्र की कहानी 'यक्ष युधिष्ठिर संवाद आदि।

2.8 राष्ट्रीय उन्नति की कहानियाँ

देश प्रेम और राष्ट्रीय चेतना की कहानियों की शुरुआत माधवराम सप्रे की कहानी 'टोकरी भर मिट्टी' (1900, छत्तीसगढ़ मित्र) में देखी जा सकती है। लेकिन यह संकेत में प्रकट थी। फिर 1907 में संकेत रूप में ही उदयनारायण वाजपेयी की अनूदित कहानी 'जननीजन्मभूमिश्च स्वर्गादपि करीयसी' (1907, सरस्वती) में देखा जा सकता है। लेकिन 1908 में प्रेमचन्द का कहानी संग्रह सोचेवतन (1908, जमाना प्रेस, कानपुर) जो उन्हीं के उर्दु कहानियों का हिन्दी रूपान्तरण है-से प्रकाशित हुई। इसमें प्रकाशित पाँच कहानियाँ हैं, 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन', 'शेख मखमूर', 'यही मेरा वतन है', 'शोक का पुरस्कार' और 'सांसारिक प्रेम और देश प्रेम'। इसमें 'शोक का पुरस्कार' को छोडकर शेष सभी उग्र राष्ट्रीय चेतना की कहानियाँ हैं।

तत्कालीन समाज की माँग समझकर कहानीकार राष्ट्रीय उन्नती की कहानियाँ भी लिखते थे। इनमें देश प्रेम, स्वाधीनता आन्दोलन के साथ राष्ट्रीय उन्नति के क्रांतिकारी भावों को व्यक्त करने वाली कहानियाँ भी थीं।

प्रेमचन्द की कहानियों में विभिन्न रूप और भाव में राष्ट्रीय चेतना तो मिलती है। 'जुगनू की चमक', 'सर पुरगुरूर', 'सेवा मार्ग', 'ज्वालामुखी',

'वियोग और मिलन' आदि उदाहरण हैं।

इनके अलावा विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की 'लीडरी का पेशा' (1924), 'स्वतन्त्रता' (1929), भगवती प्रसाद वाजपेयी की 'फितूर', 'स्वप्नों का राज्य', 'जरोखे की रानी', प्रयाण आदि देश प्रेम से युक्त कहानियाँ हैं।

पांडेय बैचन शर्मा उग्र की अधिकांश कहानियाँ राष्ट्रीय प्रेरित और क्रांतिकारी कहानियों के अंतर्गत आती हैं। उग्र की 85 कहानियों में अधिकांश देश प्रेम और क्रांतिकारी कहानियाँ हैं। गाँधी आश्रम (1920 के आसपास), 'बलिदान' (1922, प्रभा मासिक), 'रेन ऑफ टेरर', 'देश द्रोह', 'सिक्ख सरदार', 'प्यारी तलवाल', माँ कैसे मरी, 'वह दिन', 'सोसाइटी ऑप डेविल्स', 'कर्तव्य और प्रेम', 'नेता का स्थान' आदि उल्लेखनीय है। यै सन् 1922-1929 के बीच लिखी गई कहानियाँ हैं।

बनलता देवी की 'नवीन नेता', हेमन्त कुमारी चौधरानी की 'हिन्दी माता का विलाप', सुभद्राकुमारी चौहान की 'बिखरे मोती', 'उन्मादिनी', सीधे-सादे चित्र आदि भी इस कोटि की कहानियाँ हैं।

2.9 घटना प्रदान और जासूसी कहानियाँ

लोगों को साहित्य और कहानी जैसी विधाओं से आकृष्ट करने केलिए जासूसी और घटनाप्रधान कहानियाँ भी इस समय लिखी जाती थीं। लला पार्वती नन्दन की कहानियाँ, 'प्रेम का फुहारा' (1901, सरस्वती),

'भूतों वाली हवेली' (1902, सरस्वती), 'रामलोचन शाह' (1905, सरस्वती), 'मेरी चंपा' (1905, सरस्वती), 'नरक गुलजार' और 'एक के दो-दो' (1906, सरस्वती) आदि उदाहरण हैं। सत्यदेव परिव्राजक की कहानी 'आश्चर्यजनक घंटी' (1908, सरस्वती) और गोपाल राम गहमरी की कहानियाँ 'डाकू की पहनाई' और 'चातुर चंचला' भी उदाहरण हैं।

2.10 आदर्शोन्मुख और यथार्थवादी कहानियाँ

बीसवीं सदी की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है यथार्थवादी और अन्दर्शोन्मुखी कहानियों का आविर्भाव। लोककथाओं और काल्पनिक कथाओं के स्थान पर यथार्थवादी विषयों को प्रस्तुत करने में इस दशक के कहानीकार सफल रहे थे। यथार्थवाद के संबंध में जयशंकर प्रसाद का, मानना है, "यथार्थवादी की विशेषताओं में प्रधान है लघुता की ओर साहित्यिक दृष्टिपात। उसमें स्वभावतः दुःख की प्रधानता और वेदना की अनुभूति आवश्यक है। लघुता से मेरा तात्पर्य है, साहित्य में माने हुए सिद्धान्त के अनुसार महत्ता के काल्पनिक चित्रण से अतिरिक्त व्यक्तिगत जीवन के दुःखों और अभावों का वास्तविक उल्लेख।"[1]

प्रेमचन्द की अधिकांश कहानियाँ यथार्थवादी कहानियाँ हैं। 'सवा सेर गेंहू', 'ठाकुर का कुआ', बेटोंवाली विधवा', 'नशा', 'कफन', 'पूस की रात', 'बडे घर की बेटी', बूढी काकी कुछ उदाहरण हैं।

---

1. जयशंकर प्रसाद - काव्य और कला, तथा अन्य निबंध, भारती भण्डार लीडर प्रेस, इलाहाबाद, पृ. 120

प्रसाद की कहानियों में भी आदर्शीवादी और यथार्थवादी कहनियाँ देखी जा सकती हैं। 'रूप की छाया', 'मधुआ', 'घीसू', 'बेडी', 'व्रतभंग', 'विजया', 'अमिट स्मृति', 'नीरा', आदि उदाहरण है।

इसके अलावा चन्द्रधरशर्मा गुलेरी की कहानी 'सुखमय जीवन' (1911, भारत मित्र), 'उसने कहा था' (1915, सरस्वती), 'बुद्धु का कांटा (1914), विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की कहानी 'रक्षाबनधन' (1916, सरस्वती), भगवती प्रसाद वाजपेयी की कहानियाँ 'पुनर्विवाह', 'सपना', 'खिलौने', 'मुखबिर', मानलीला, अपराधी, अधिकार पत्र आदि इस कोटि की कहानियाँ हैं।

2.11 रोमानी कहानियाँ

बीसवीं सदी के संघर्षपूर्ण औपनिवेशिक वातावरण से मुक्ति केलिए अधिक कहानीकारों ने 'प्रेम' को कहानी का मुख्य विषय बनाया। चण्डीप्रसाद हृदयेश की कहानी संग्रह 'नन्दन निकुज' 91923), वनमाला आदि रोमानी कहानियों का संकलन हैं। 'प्रेम परिणय', 'प्रेम पुष्पांजली', प्रणय परिपाटी, योगिनी, 'मौन व्रत', और प्रतिज्ञा इनकी कुछ कहानियाँ हैं।

अन्य कहानियाँ हैं, चन्द्रधरशर्मा गुलेरी की कहानी 'सुखमय जीवन' (1911, भारत मित्र), राजा राधिकारमण प्रसाद की कहानी 'बिजली' (1913, इन्दु) और 'मरीचिका', विनोद शंकर व्यास की कहानियाँ 'हृदय की कसक' और 'भूली बात', गोविन्द वल्लभ पंत की कहानियाँ 'एकदशी'

और 'सान्ध्य प्रदीप', सुदर्शन की कहानियों 'कवि की स्त्री', 'प्रेम का पापी', 'स्त्री का हृदय' और 'बलिदान', भगवती प्रसाद वाजपेयी की कहानियाँ। 'अनिश्चय', 'कुलीनता', 'अन्ना', 'लाली', 'मेरा नाता' (1922-1926 के बीच), चतुर्सेन शास्त्री की कहानी, 'मैं तुम्हारी आखों को नहीं चाहता आदि।

जयशंकर प्रसाद की कहानियाँ जैसे, 'देवदासी', 'अपराधी', 'बिसाती', 'चूडीवाली', 'साँप', 'ग्राम गीत' आदि इस कोटी की कहानियाँ हैं। प्रेमचन्द की कहानियों में 'धोका', 'गैरत की कटार', 'राजपूत की बेटी', 'जंजीरे-हवस' आदि ऐसी कुछ कहानियाँ हैं।

2.12 मनोवैज्ञानिक कहानियाँ

बीसवीं सदी के दूसरे दशक के बाद के कहानीकार तत्कालीन सामाजिक-पारिवारिक संरचना का यथार्थ चित्र और मानव की आंतरिक तनाव के चित्रण में निपुण थे। इस तरह की मनोवैज्ञानिक चित्रण वाली कहानियाँ हैं, जी.पी. श्रीवास्तव की 'लंबी दाढ़ी' (कहानी संग्रह) की कहानियाँ। 'झूठमूठ' (1918), 'मैं न बोलूँगी' (1918, गल्पमाला), 'लंबी दाढी', 'पंडित जी', 'चाचा भतीजे', 'चुम्बन', 'अंटसंट' आदि कहानियाँ हैं।

इलाचन्द्र जोशी की कहानियाँ 'सजनवाँ' (1920, हिन्दी गल्प माला), अनाश्रित (1927) प्यारेलाल की 'समालोचक' (1918), ज्वालादतत शर्मा की कहानी 'भाव-परिवर्तन' (1916, सरस्वती) भगवतीप्रसाद वाजपेयी की कहानी 'अनिश्चय' (1929) और 'सपना', विनोदशंकर व्यास की

कहानी 'हृदय की कसक' (1927) आदि और जयशंकर प्रसाद की 'आँधी' और 'रमला', प्रेमचन्द की 'दो भाई', 'बूढी काकी', 'भूख' और 'सौत', सुदर्शन की कहानियाँ 'कवि की स्त्री', 'प्रेम की पापी', चतुरसेन शास्त्री की कहानियाँ 'सच्चा गहना', 'रोगी परीक्षा', 'बहिन तुम कहाँ' 'बहु-बेटे' आदि इस कोटी की हैं।

2.13 उपदेशात्मक कहानियाँ

इस दशक की उपदेशान्तमक कहनियों के उदाहरण हैं, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की 'दीक्षा', 'पथ-निर्देश', भगवतीप्रसाद वाजपेयी की कहानियाँ 'आदर्शनिष्ठा', 'अविवाहिता', 'क्षमा' सुदर्शन की 'सुभद्रा का उपहार', 'सच का सौदा', 'माया', 'प्रारंभ परिवर्तन', 'पाप-परिणाम', 'तीर्थ यात्रा', 'सेवा धर्म', 'आशीर्वाद' आदि।

2.14 अन्य मौलिक कहानियाँ

इस समय की अन्य मौलिक कहानियाँ कई विशेषताओं से युक्त हैं। इसमें वैज्ञानिक विषयों की कहानियाँ, आत्मकथ्य शैली की कहानियाँ, यात्रा वृत्तान्त की कहानियाँ, शिकार विषयक कहानियाँ, स्वप्न शैली की कहानियाँ आदि उपलब्ध है।

वैज्ञानिक विषयों की कहानियों में केशवप्राद सिंह की कहानी 'चन्द्रलोक की यात्रा' (1900, सरस्वती), कुमुदब्धु मित्र की 'अज्ञान और

विज्ञान 1904, सरस्वती) मधुमंगल मिश्र की 'बूतही कोठरी' (1908, सरस्वती) आदि आते हैं।

आत्मकथ्य शैली की कहानियाँ हैं, केशवप्रसाद सिंह की 'आपत्तियों का पर्वत, कार्तिक प्रसाद खत्री की 'दामोदर राव की आत्मकहानी' (1900, सरस्वती), यशोदा नन्दन अखौरी 'इत्यादि की आत्मकहानी', महेन्द्र लाल गर्ग की 'पेट की आत्म कहानी' और ईश्वरी प्रसाद शर्मा की 'वीर बालक' (1911, मर्यादा) आदि। इन कहानियों में अधिकांशतः 'मैं' शैली का प्रयोग हुआ है।

यात्रा वृत्तांत वाली कहानी है केशवपसाद सिंह की 'काश्मीर यात्रा' (1900, सरस्वती) और शिकार विषयक कहानी है, निजामशाह टंडन की 'सुअर का शिकार'।

इन कहानियों के अलावा इस कालक्रम की प्रमुख कहानियाँ हैं, किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी 'गुलबहार' (1902, सरस्वती), रामचन्द्र शुक्ल की कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903, सरस्वती), माधवप्रसाद मिश्र की 'सब मिट्टी हो गया' (1900, सरस्वती) और 'विश्वास का फल' '1902, सरस्वती), गिरिजादत्त वाजपेयी की कहानी 'पति का पवित्र प्रेम' (1903, सरस्वती), केशवप्रसाद सिंह की 'आपत्तियों का पर्वत' (1900, सरस्वती), लाला पार्वतीनन्दन की 'सुभाषित रत्न' (छत्तीसगढ़ मित्र), मास्टर भगवानदास की कहानी 'प्लेग की चुडैल' (1902, सरस्वती), बालकृष्ण भट्ट की कहानी 'प्यासा पथिक' (1905, हिन्दी प्रदीप) माधवराव सप्रे की

'सुभाषित रत्न 1' (1900, छत्तीसगढ़ मित्र), 'सुभाषित रत्न 2' (1900, छत्तीसगढ़ मित्रा) और 'एक टोकरी भर मिट्टी' (1900, छत्तीसगढ़ मित्र), बंगमहिला की कहानी 'दुलाईवाली' (1907, सरस्वती) आदि।

प्रेमचन्द ने 'सोजेवतन' की जब्ति के बाद नवाबराय नाम से 'प्रेमचन्द' नाम में कहानी लिखना शुरु किया। 1910 में उसकी कहानी 'बडे घर की बेटी' (1910, ज़माना में) प्रकाशित हुई थी।

इस प्रकार सन् 1900-1910 के बीच की हिन्दी कहानियों का अध्ययन करते वक्त पता चलता है कि पहले पाँच वर्षों में याने कि सन् 1905 तक हिन्दी कहानी का संघर्ष काल रहा था। तब बंगला और अंग्रेज़ी कहानियों का अनुवाद अधिक मात्रा में हो रहा था। इन कहानियों से प्रभावित होने के कारण इस समय की कहानियों की शैली में भी बंगला और अंग्रेज़ी का प्रभाव था। लेकिन आगे चलकर हिन्दी कहानी अपनी संपन्न परंपरा से ओतप्रोत होकर आधुनिक रूप में प्रकट होने में सफल हुई। गोपाल राय के अनुसार, "हिन्दी लेखकों को कहानी लिखने की प्रेरणा भले ही अंग्रेज़ी या बंगला से प्राप्त हुई हो, उनके सामने संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी की कथा-ख्यान परंपरा का विशाल रिक्थ भी था।"[1]

2.15 अन्य प्रमुख कहानियाँ

इस दशक की कुछ प्रमुख और चर्चित कहानियाँ हैं, बालकृष्ण भट्ट की 'नर नारी' (गृहलभ्मी, 1913), शिवपूजन सहाय की कहानियाँ

---

1. गोपाल राय - हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ. 27

'कहानी का प्लाट' (1914) और 'प्रायश्चित' (1922), पद्मलाल पुन्नालाल बख्शी की कहानी (झलमला' 1916, सरस्वती), विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की कहानियाँ 'लीडरी का पेशा' (1924), 'ताई' (1924), 'नर-पशु', माता का हृदय', 'सच्चा कवि,', 'फाँसी', 'पर्दा', 'अंतिम भेंट', सुदर्शन की कहानियाँ 'तीर्थयात्रा' (1927), 'सुदर्शन सुधा' (1926), 'हार की जीत', 'सच का सौदा', 'पुनर्जन्म', 'माया', 'आशीर्वाद', 'सेवा धर्म', 'गरीब का आह', अज्ञेय की कहानियाँ जिज्ञासा (1929), 'गैंग्रीन' (1934), शत्रु (1935) और रोज़ आदि।

2.15.1 प्रेमचन्द की कहानियाँ

प्रेमचन्द की कहानियों का कथ्य समकालीन जीवन-यथार्थ से संबंधित था। भारतीय पुनर्जागरण का व्यापक परिवेश प्रेमचन्द की कहानियों में है। इसलिए इनकी कहानियाँ आदर्श-यथार्थ की कहानियाँ हैं।

प्रेमचन्द की पहली हिन्दी कहानी 'सौत' 1915 में प्रकाशित हुई। उनकी हिन्दी कहानियों की संख्या 200 से ज़्यादा मानी जाती है। यह बाद में उनके कहानी संग्रह मानसरोवर 1, 2, 3 में संग्रहीत हैं। 'नामक का दरोगा', 'बडे घर की बेटी', 'घासवाली', 'ईदगाह', 'कफन', 'पूस की रात', 'बडे भाई साहब' 'शतरंज के खिलाडी', स्वामिनी', 'ठाकुर का कुआ', 'बेटोवाली विधवा', 'नशा', 'बूढी काकी, 'परीक्षा', 'सवा सेर गेहूँ', 'बलिदान', 'पंच परमेश्वर आदि कुछ प्रमुख कहानियां हैं। उनकी कहानियों में स्त्री,

दरित, बच्चा, बूढा, किसान, ज़मीन्दार, ग्राम, प्रकृति, जानवर सबको स्थान था। इसलिए ही राष्ट्र संकल्पना का उग्र स्वर उनकी कहानियों में प्राप्त हैं। उनके शब्दों में, "हम पराधीन हैं, लेकिन हमारी सभ्यता पाश्चात्य सभ्यता से कहीं ऊँची है। यथार्थ पर निगाह रखनेवाला योरप हम आदर्शवादियों से जीवन संग्राम में बाजी भले ही ले जाय; पर हम अपने परम्परागत संस्कारों का आधार नहीं त्याग सकते। साहित्य में भी हमें अपनी आत्मा की रक्षा करनी ही होगी। हमने उपन्यास और गल्प का कलेवर योरप से लिया है, लेकिन हमें इसका प्रयत्न करना होगा कि उस कलेवर में भारतीय आत्मा सुरक्षित रहे।"[1]

2.15.2 जयशंकर प्रसाद की कहानियाँ

जयशंकर प्रसाद प्रेम, सौन्दर्य और रहस्य-भावना के कहानीकार हैं। उनकी पहली कहानी 'ग्राम' सन् 1911 में 'इन्दु' पत्रिका में प्रकाशित हुई। उनका पहला कहानी संग्रह 'छाया' सन् 1912 में प्रकाशित हुआ। यह हिन्दी का पहला कहानी संग्रह है। इसमें 11 कहानियाँ संग्रहीत हैं। इसके अलावा उनका चार कहानी संग्रह जैसे 'प्रतिध्वनी', 'आकाशदीप', 'आँधी', और 'इन्द्रजाल' आदि भी प्रकाशित हुए। सन् 1936 तक उनकी सतर कहानियाँ प्रकाशित हुईं। उनकी कुछ प्रमुख कहनियाँ हं, 'ग्राम', 'शरणागत', 'दुखिया', 'प्रलय', 'आकाशदीप', 'ममता', 'आँधी', 'मधुआ', 'पुरस्कार', 'स्वर्ग के खण्डहार में', 'हिमालय का पथिक' आदि ।

---

1. प्रेमचन्द - प्रेम द्वादशी' की भुमिका, 1926

प्रसाद की कहानियों में मनुष्य के आंतरिक भाव की सूक्ष्म पकड विद्यामान है। उनकी कहानियों में ऐतिहासिक, प्रतीकात्मक, यथार्थवादी, उपनिवेश विरोधी और रोमानी प्रवृत्तियाँ विभिन्न रूपों और भावों में प्रकट हैं।

2.16 अचर्चित कहानियाँ

सन् 1900 से लेकर 1940 तक हिन्दी कहानी क्षेत्र में अनगिनत कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। गंभीर और प्रासंगिक विषयों वाली इन कहानियाँ अभी भी पाठकों से दूर हैं। इन अज्ञात या अचर्चित कहानियों के बिना नवजागरणकालीन कहानियों का अध्ययन पूरा नहीं होगा।

1990 से 1910 के बीच की अचर्चित कहानियों में महावीर प्रसाद द्विवेदी की कहानियाँ 'तीन देवत' (1903, सरस्वती), 'महारानी चन्द्रिका' ((1903, सरस्वती), 'भारत वर्ष का तारा' (1903, सरस्वती), और 'स्वर्ग की झलक' (1903, सरस्वती) लाला पार्वतीनन्दन की कहानियाँ 'भूतों वाली हवेली' (1902 सरस्वती), 'मेरी चम्पा' (1905, सरस्वती), 'तुम हमारे कौन हो' (1904, सरस्वती), राम लोचन साह (1905, सरस्वती), 'नरक गुलजार' 'मेरा पुनर्जन्म' (1907, सरस्वती) और एक के दो-दो (1906, सरस्वती), बावा वैद्यनाथ की कहानी 'तोंबी में तूफान' (1903, सरस्वती), कार्तिक प्रसाद खनी की कहानी 'दामोदर राव की आत्मकहानी' (1900, सरस्वती), यशोदा नन्दन अकौरी की कहानी 'इत्यादि की आत्म कहानी, महेन्दु लाल गर्ग की कहानी 'पेट की आत्म कहानी', वासुदेव मिश्र

की कहानी 'अद्‌भुत योगायोग' (1904, सरस्वती), राजा पृथ्वीपाल सिंह की कहानी 'एक अलौकिक घटना' (1904, सरस्वती), पुरुषोत्तमदास टंडन की कहानी 'भाग्य का फेर', 'निजाम शाह की कहानी 'सुअर का शिकार', माधवप्रसाद मिश्र की कहानियाँ 'यक्ष युधिष्ठिर संवाद', 'लडकी की बहादुरी', 'दया का फल', 'दयालू मिथिलेश', 'पितृभक्ति का फल', 'सत्य और सन्तोष का फल', पंडित जगन्नाथ प्रसाद त्रिपाठी की कहानी 'सम्मान किसे कहते है' (1900, छत्तीसगढ़ मित्र), 'आजम' 1900, छत्तीसगढ मित्र), चाँदनी की कहानी 'प्रेषित पत्रिका' (1906, सरस्वती), सेठ कन्हैयालाल पोद्धार की कहानी 'एक अद्‌भुत स्वप्न' (1906, सरस्वती), प्रेमनाथ भट्‌टाचार्य की कहानी 'पक्का गठिबन्धन' (1907, सरस्वती), कुन्दनलाल शाह की कहानी 'प्रत्युपकार का अद्‌भुत उदाहरण' (1909, सरस्वती), बंगमहिला की कहानी 'दालिया' (1909, सरस्वती) शिवनारायण शुक्ल की कहानी 'सात सुनार' (1909, सरस्वती), वृन्दावनलाल वर्मा की कहानी 'तोतार और वीर राजपूत' (1910, सरस्वती), लल्ली प्रसाद पाण्डेय की 'कविता का दरबार' (1906, सरस्वती), उदय नारायण वाजपेयी की कहानी 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गदार्प गरीयसी' (1907, सरस्वती) रामजी लाल शर्मा की 'आख्यायिका' (1907, सरस्वती), बालकृष्ण भट्‌ट की कहानी 'पढ़ने वालों के समझ की परख' (1908, हिन्दी प्रदीप), ईश्वरी प्रसाद शर्मा की कहानियाँ, 'वीर बालक' (1911, मर्यादा) और 'पत्नीव्रत' (1911, मर्यादा) प्रेमनाथ भट्‌टाचार्य की कहनी 'राजपूतानी' (1907, सरस्वती), सत्यदेव परिव्राजक की 'आश्चर्यजनक घंटी' (1908, सरस्वती), गंगा प्रसाद अग्निहोत्री की कहानी 'सच्चाई का

शिखर (1907, सरस्वती), सत्यदेव की कहानी 'कीर्तिकलिमा' (1908, सरस्वती) आदि।

सन् 1911 के बाद प्रकाशित अचर्चित कहानियाँ हैं, ईश्वरी प्रसाद शर्मा की 'पत्नी व्रत' (1911), जोगेन्द्रपाल सिंह की कहानी 'भाग्यवती' (1911), छबीले लाल गोस्वामी की कहानी 'तीज की साडी' (1911, मर्यादा), वृन्दावनलाल वर्मा की कहानियाँ 'सेफ्रेजिस्ट की पत्नी' (1914, सरस्वती), बावली बहु की कहानी 'वीरंगना' (गृहलक्ष्मी,1912), सरस्वती देवी की कहानी 'सच्ची सहेली (1912, गृहलक्ष्मी), बनारसीदास चुतुर्वेदी की कहानी 'एक गणितज्ञ की आत्मकथा (1912) कालीचरण त्रिवेदी की कहानी 'बांदी' (1912), कु. राजवती सेठ की कहानी 'ईश्वर का अस्तित्व' (1912, सरस्वती), रामजी दास वैश्य की कहानी 'हीरा और लाल की कहानी (1912) भगवती देवी की कहानी 'फूलजानी बेगम' (1913, गृहलक्ष्मी), गिरिजाकुमार घोष की कहानियाँ 'करम रेखा' (1913, गृहलक्ष्मी) और 'अमरसिंह का दरवाज़ा' (1913, गृहलक्ष्मी), गोविन्द शास्त्री दुग्वेकर (मराठी लेखक की कहानी 'सती सुनन्दिनी' (1915 नवनीत), परशुराम शर्मा की कहानियाँ 'धोका' (1915, इन्दु) और 'भयंकर भूल' (1915, इन्दु), विश्वेश्वर दयाल चतुर्वेदी की कहानी 'हृदय की अशान्ति' (1915,इन्दु), प्यारो लाल गुप्त की कहानी, 'रूपरानी' (1915, इन्दु), विश्वंभरनाथ जिज्जा की कहानी 'विदीर्ण हृदय' (1915, इन्दु), ठकुरानी शिवमोहिनी की कहानी 'पति हत्या में पतिव्रथ' (1915, इन्दु), ज्वालादत्त शर्मा की कहानी 'मिलन'

(1914, सरस्वती), बावली बहु की ओर एक कहानी 'कृतघ्न सुरेश' (1914, सरस्वती), छबीले लाल गोस्वामी की ओर एक कहानी 'विमाता' (1914, सरस्वती), बंगमहिला की 'हृदय परीक्षा (1914, सरस्वती), बदरीनाथ भट्ट की कहानी 'मुंसिफ साहब की मरम्मत' (1914), महावीर प्रसाद द्विवेदी की कहानियाँ, 'खानखाना और सुमेर पर्वत' (1911, सरस्वती), शायरों के शाहंशाह अबूतालिब (1911, सरस्वती), शाहजहाँ (1911, सरस्वती), ज्वालादत्त शर्मा की कहानियाँ 'विधवा' (1914, सरस्वती), 'अनाथ बालिका' (1916, सरस्वती), 'भाव परिवर्तन' (1916, सरस्वती), 'मिहनताना' (1916), 'बूढे का ब्याह' (1917, सरस्वती) आदि।

चण्डी प्रसाद हृदयेश की कहानियाँ 'प्रेम परिणय', 'प्रम पुष्पांजली', 'प्रणय परिपाटी', 'योगिनी', 'मौन व्रत', 'प्रतिज्ञा', 'उन्मादिनी' (1919) 'नन्दन निकुज (1923), और 'वनमाला' हैं। पद्मलाल पुभालाल बख्शी की कहानियाँ 'अन्नपूर्णा के मन्दिर में (1916, सरस्वती), 'नन्दिनी' (1917, सरस्वती), प्यारेलाल की कहानी 'समालोचक' (1918, गल्पमाला), फूलमती की 'बडे की बेटी', रुद्रदत्त भट्ट की कहानी 'अजीबदास की जासूसी' (1918, गल्पमाला), अज्ञेय की कहानियां 'जिज्ञासा' (1929) 'गैंग्रीन' (1934) 'रोज' और 'शत्रु' (1935), गिरिजादत्त शुक्ल किरीश की कहानी 'देश-द्रोही (126, सरस्वती) इलाचन्द्र जोशी की कहानियाँ 'सजनवाँ' (1920, हिन्दी गल्पमाला) और 'अनाश्रित' (1926, सरस्वती), विनोदकुमार व्यास की कहनी 'सुख' (1927 , सरस्वती), श्री. नरेन्द्रदेव की कहानी 'शार्दू

लकीर्ण की कथा (1928, सरस्वती), बदरीनाथ भट्ट की कहानी 'ग्रेजुएट की नौकरी' (1928, सरस्वती), जगदीश झा विमल की कहानी 'विधवा' (1928, सरस्वती), पृथ्वीनाथ शर्मा की कहानी 'रज्जू का सौदा (1929, सरस्वती), भगवतीचरण वर्मा की कहानी 'दो बाँके', विद्यालंकार की कहानी 'कामकाज', कमलाकान्त वर्मा की कहानी 'पगडण्डी' इसी दृष्टि से विचारणीय है।

बीसवीं शती के तीसरे दशक के अंतिम चरण में आते आते कहानी संग्रह प्रकाशित होने लगे। विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक के चार कहानी संग्रह जैसे 'गल्प मन्दिर' (1919), 'चित्रशाला' (1924), 'मणिमाला' (1929) और कल्लोल (1933) में प्रकाशित अधिकांश कहानियाँ अचर्चित हैं। स्वाभिमानी नमहलाल' 'उद्धार', 'नास्तिक प्रोफेसर', 'अशिक्षित का हृदय', 'वह प्रतिमा' (1913 मर्यादा) 'विधवा' 1924 और 1929 के बीच प्रकाशित 'सुधार', 'प्रेम का पापी', 'परिणाम', 'सन्तोष धन', 'साधु की होली', 'पथ-निर्देश', कर्तव्य पालन', 'ईश्वर का डर', 'सुप्रबन्ध', 'निराश प्रेमी', 'मिथ्याभिमान', 'संशोधन', 'स्वेच्छाचारिता', 'विचित्रता', 'देवरानी जेठानी' 'विश्वास', ननकू चौधरी, 'दीवाली आदि कुछ अचर्चित कहानियाँ हैं।

चतुरसेन शास्त्री के कहानी संग्रह 'रजकण', 'अक्षत', 'बाहर भीतर' 'दुखवा मैं कोसों कहूँ मोरी सजनी', 'सोया हुआ शहर', 'धरती और आसमान',आदि में प्रकाशित अधिकांश कहानियाँ अचर्चित ही हैं। 'सच्चा गहना', 'रोगी परीक्षा', 'बहिन तुम कहाँ, 'बहु -बेटे', 'जीजा-जी' 'भग्न हृदय' आदि कुछ उदाहरण हैं।

राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह को कहनी संग्रह 'कुसुमांजली' (1913) की कहानियाँ भी अचर्चित के श्रेणी में रका जा सकता है। 'सुरबाला', 'बिजली', 'मरीचिका','वीरबाला', 'इस हाथ दे उस हाथ लें' (1936 सरस्वती) आदि भी इस कोटि का उदाहरण हैं।

शिवपूजन सहाय का कहानी संग्रह 'महिला महत्व (1922) दस कहानियों का संग्रह हैं। इसमें संग्रहीत कहानियाँ है 'शरणागत रक्षा', 'बुलबुल और गुलाब', 'खोपडी के अक्षर', 'कुंजी' और 'मानमोचन' आदि। साहित्य पत्रिका में सन् 1914 में प्रकाशित 'तूती-सुगी-मैनी' नामक कहानी भी अचर्चित है।

सुदर्शन के कहानी संग्रह 'पुष्पलता' (1919), 'सुप्रभात' 91923), 'सुदर्शन सुधा' (1926), 'तीर्थ यात्रा' (1927) में संग्रहीत 'न्याय मन्त्री', 'काल-चक्र', 'पन्थ की प्रतिष्ठा', लंबी कहानी 'परिवर्तन', 'सुभद्रा का उपहार', 'कवि', 'प्रारब्ध परिवर्तन', 'पाप-परिणाम', 'बैंजू बावरा', 'स्पप्न', 'भलाई का बदल', 'शिक्षा', 'राजपुतानी का प्रायश्चित', 'न्याय का परख', 'प्रतिकर' 'पाप की कमाई', 'थाडा का झूठ', 'कवि की स्त्री', 'प्रेम का पापी', स्त्री का हृदय' आदि कहानियाँ अचर्चित हैं।

पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र की कहानियों में 'चाकलेट' के अलावा बाकी कहानियाँ अचर्चित ही री हैं। उन्होंने 85 कहानियाँ लिखीं। उनके 7 कहानी संग्रह प्रकाशित हैं। वे 'चाकलेट' (1924), 'चिनगारियाँ' (1925),

'घोडे की कहानी' (1927), 'इन्द्रधनुष' (1927), 'बलात्कार' (1927), 'निर्लजजा' 91929), 'दोजख की आग' (1929) और क्रांतिकारी कहानियाँ' (1939) हैं। 'चाकलेट' की 8 कहानियों में 'जेल में', 'पालट', 'व्यभिचारी समाज', 'हम फिदाये लखनऊ' आदि उग्र क्रांतिकारी है।

'बलात्कार' में प्रकाशित कहानियों में 'बलात्कार', 'ब्राह्मणद्रोही', 'विधवा', 'समाज के चरण', 'हत्यारा समाज', 'अभागा किसान' आदि सामाजिक उन्नति पर केन्द्रित है। 'निर्लज्जा' और 'दोजख की आंग' में संकलित 'अछूत', 'निर्लज्जा', 'परीक्षा', 'मुसलमान', 'ब्राह्मण', 'हिन्दु', 'क्षत्रिय', 'खुदा के सामने', 'दिल्ली की बात', 'दोजख की आग', 'शाप' आदि कहानियाँ राष्ट्रीय, सामाजिक और सांस्कृतिक विषयों की ओर संकेत किये हैं।

इनके अलावा सन् 1920 और 1923 तक 'प्रभा', 'आज' आदि पत्रिकाओं में भी कहानियाँ प्रकाशित हुईं, जैसी 'गाँधी आश्रम' (1920), 'बलिदान' (1922), 'स्वदेश केलिए', 'प्यारी पताका', 'देशद्रोह', 'नेता का स्थान', 'ब्राह्मण विरोधी', आदि।

भगवती प्रसाद वाजपेयी की कहानियाँ 'यमुना' (1922, श्रीशारदा), 'अनधिकार चेष्टा' (1926, मर्यादा), 'फितूर', स्वप्नों का राज्य' 'झरोखे की रानी', 'प्रयाग', 'कुलीनता', 'अन्ना', 'लाली', 'मेरा नाता', 'पुनर्विवाह', 'सपना', 'खिलौने', मुखबिर', 'मानलीला', 'झरोखे की रानी', 'सत्य की जय', 'अपराधी', 'अधिकार पत्र', 'आदर्शनिष्ठा', 'नन्दा', 'अविवाहिता',

'दो संपादक', 'अमूल्य भेंट', 'मोती', 'क्षमा' 'पुरस्कार', 'झरोखे की रानी', 'मिठाईवाला', 'निंदिया लागी' आदि। उनके कहानी संग्रह हैं 'मधुपर्क' (1929) और 'दीपमलिका' (1930)।

जैनेन्द्र की कहानियाँ हैं 'चोरी' (1928), 'फोटोग्रामी' (1928), 'देश -प्रेम' (1928), 'आतिथ्य' (1930) 'ब्याह', 'साधु की हठ', 'चलित-चित्त', 'भाभी'।

रायकृष्ण दास की कहानियाँ 'प्रसन्नता की प्राप्ति', 'अन्तः पुर का आरंभ' 'आश्रित', 'सुहाग' आदि। 'अनाख्या' (1929) और सुधांशु (1929) उनके कहीनी संग्रह हैं।

विनोदशंकर व्यास की कहानी 'हृदय की कसक' (1927) और कहानी संग्रह 'नवपल्लव' (1928), 'तूलिका' (1928), 'भूली बात' (1929) में संग्रहीत 36 कहानियाँ अल्पज्ञात ही हैं। पद्मलाल पुन्नलाल बख्शी के कहानी संग्रह हैं 'झलमला' (1934) और अंजली की कहानियाँ । तन्द्रगुप्त विद्यालंकार की कहानियाँ हैं 'आँसू', 'पहला नास्तिक', 'प्रथम मृत्यु', 'तीन दिन', 'गुलाब', 'अमीरों का भगवान', 'कौफियत', 'मेरे मास्टर साहब' (1924), 'ताड का पत्ता'। 'चन्दकला' (1929) उनका कहानी संग्रह है। जनार्दन प्रसाद झा द्विज के कहानी संग्रह 'किसलय' 'मलिका' (1930) और मृदुदल (1932) आदि। इन तीन कगानी संग्रहों में 38 कहानियाँ संग्रहीत हैं। जी.पी. श्रीवास्तव की कहानियाँ हैं 'झूठमूठ' (1918),

'मैं न बोलूँगी' (1918), 'लम्बी दाढी', 'पंडित जी', 'चाचा भतीजे', 'चुम्बन', 'अंटसंट' आदि।

1930 के बाद सरस्वती में प्रकाशित कुछ अचर्चित कहानियाँ हैं, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की 'कमला' (1932), लक्ष्मीकान्त झा की कहानी 'रात का सफर' (1932), श्री धनीराम प्रेम की कहानी 'बहन' (1932), समुत्रानन्दन पंत की कहानी 'ज्योत्स्ना' (1933), श्रीमती उषादेवी की कहानी प्रतीक्षा (1933), रामकुमार वर्मा की कहानी 'दस मिनट' (1933), 'कृष्णदेव प्रसाद गैड की कहानी 'चिकित्सा का चक्कर' (134) श्रीनाथ सिंह की कहानी 'गरीबों का स्वर्ग' (1934) भगवतीचरण वर्मा की कहानी 'विवशता' (1936), लक्ष्मीनारायण मिश्र की कहानी 'रंगीन सपना' (1936), श्रीयुत मोहनलाल मेहतो की कहानी 'वे बच्चे' (1937), हजरत तस्लीम रखनवी की कहानी 'मुंशी भक्तवरलाल' (1939), सेठ गोविन्ददास की कहानी 'ईद और होली' (1940), श्रीमती विपुलादेवी की कहानी 'कायर' (1940) आदि।

1.17 महिला कहानीकारों की कहानियाँ

किसी भी समाज की उन्नति केलिए सबसे पहले स्त्रियों की उन्नति करना ज़रूरी है। क्योंकि समाज के सबसे शोषित वर्ग स्त्री ही है। इसलिए नवजागरणकालीन समाज सुधारकों की प्रमुख समस्या स्त्रियों की उन्नति थी। लेकिन उस ज़माने में अनेक महिला समाज सुधारक और लेखिकायें भी थे,

जो इन प्रवृत्तियों में पुरुषों के बराबर ही थे। लेकिन शुरुआती दौर में अधिकांश महिला कहानीकार छद्मनाम से कहानियाँ लिखती थीं। इससे इस पुरुषसत्तात्मक समाज का खुला चित्रण सामने आता था।

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानीकारों में महिला कहानीकार अज्ञात ही रहे हैं। बंगमहिला को छोडकर अन्य महिला कहानीकारों की चर्चा नवजागरण के महत्व को और तीखा बना देती है। इन स्त्रियों द्वारा सिर्फ स्त्री संबंधित विषय ही नहीं, बल्कि राजनीति, राष्ट्रीय उन्नति और सामाजिक उन्नति जैसे विषयों पर भी कहानियाँ लिखती थीं।"... पुरुष-वर्चस्व के बावजूद जो सैकडों लेखिकाएँ कलम पकडकर आगे बढती रहीं तो उनमें पुरुष-समाज से बदला लेने की भावना नहीं थी बल्कि वे अपनी पीडा, अपनी अनुभूति, अपने अनुभवों को एक विस्तृत समाज तक पहुँचाना चाहती थीं...।"[1]

बीसवीं सदी की महिला लेखिकाओं में सबसे प्रमुख थी 'बंगमहिला'। उनका असली नाम 'राजेन्द्रबाला घोष' थी। भाषा और संरचना की दृष्टि से हिन्दी कहानी को संपन्न बनाने में बंगमहिला का बडा योगदान रहा है। उनकी पहली कहानी 'दुलाईवाली' सन् 1907 में सरस्वती में प्रकाशित हुई थी। इसके बाद उन्होंने बंगला से कहानियों का अनुवाद करके हिन्दी में लिखा। इन अनूदित कहानियों में भी हिन्दी भाषा को एक नये रूप देने में सफल हुई।

---

1. सुरेन्द्र तिवारी (सं) बीसवीं सदी की महिला कथाकारों की कहानियाँ, पृ. 11

उनकी अनूदित कहानियाँ हैं, 'दान प्रतिदान' (1906, सरस्वती) 'राई से पर्वत' (1902, सिद्धेश्वर प्रेस, बनारस) 'तिल से ताड़' (1902, सिद्धेश्वर प्रेस, बनारस), 'अपूर्व प्रतिज्ञा पालन', कुंभ में छोटी बहु' (1906), 'दालिया' (1909), 'मुरला' (1908, सरस्वती), 'मातृहीन', मन की दृढ़ता (1915, सरस्वती), 'संसार सुख', हृदय परीक्षा (1915, सरस्वती), 'भाई -बहन' (1909, सरस्वती) आदि।

बीसवीं सदी के दूसरे दशक की महिला लेखिकाएँ और उनकी कहानियाँ हैं, सरस्वती देवी की कहानी 'सच्ची सहेली' (1912, गृहलक्ष्मी), भगवती देवी की कहानी 'फूलजानी बेगम' (1913, गृहलक्ष्मी), बावली बहू की कहानी वीरांगाना (1912, गृहलक्ष्मी), कुमारी राजवती सेठ की कहानी 'ईश्वर का अस्तित्व', ठकुरानी शिवमोहिनी की कहानी 'पति हत्या में पतिव्रत' (1915, इन्दु), बावली बहु की कहानी 'कृतह्न सुरेश (1914, सरस्वती) आदि। इस दशक का क्रांतिकारी कार्य था श्रीमती. कौशल्या देवी संपादित हिन्दी गद्य माला का प्रकाशन। सने 1918 में प्रकाशित इस पत्रिका में अनेक पुरुष कहानिकारों की कहानियाँ भी छपीं। इसके अलावा 'इन्दु', 'गृहलक्ष्मी' जैसी पत्रिकाएँ भी उल्लेखनीय हैं।

बीसवीं सदी के तीसरे दशके की महिला लेखिकाएँ और उनकी कहानियाँ हैं, श्रीमति जानकी देवी की कहानी 'घरबिगाड़ बुढ़िया', टकुरानी शिवमोहिनी की कहानी 'सुशीला' श्रीमती रामप्यारी देवी की कहानी 'चतुर

बहु' श्रीमती मिश्र महिला की कहानी 'वसीयतनामा' कुमायुंमहिला की कहानी 'अवसान', मुसम्मात ठकुरसुहाती की कहानी 'बहु का सपना' आदि।

राष्ट्रीय जागरण और राजनीतिक चेतना से भरित कहानियाँ लिखनेवाली लेखिकाएँ भी इस दशक में सक्रिय थीं। शिवरानी देवी, वनलता देवी, हेमन्त कुमारी चौधरानी आदि इस कोटि की कहानियाँ लिखती थी। शिवरानी देवी की पहली कहानी 'साहस' सन् 1927 में 'चांद' पत्रिका में प्रकाशित हुई। उनकी एक और कहानी है 'कुरबानी'। उनका कहानी संग्रह 'नारी हृदय कौमुदी नाम से प्रकाशित हुआ था। वनलता देवी की कहानी है 'नवीन नेता' और हेमन्त कुमारी चौधरानी की कहानी है 'हिन्दी माता का विलाप'। इस दशक की प्रमुख महिला पत्रिकाएँ थीं, 'चाँद' (1922) और माधुरी (1922)।

बीसवीं सदी के तीसरे दशक तक आते आते अनेक कहानी संग्रह निकलने लगे। उषा देवी मित्र के कहानी संग्रह 'आँधी के छन्द महावर', 'रात की रानी', 'नीम चमेली', 'मेघ मल्लार', 'रागिनी', सांध्य पूरबी आदि उल्लेखनीय है।

सत्यवती मल्लिक के कहानी संग्रह 'दो फूल', 'वैशाख की रात', 'दिन रात', 'नारी हृदय की साध' आदि, कमला चौधरी के 'उन्माद', 'पिकनिक', 'यात्रा', 'बेलपत्र' आदि सुभद्राकुमारी चौहान के कहानी संग्रह 'बिखरे मोती', 'उन्मादिनी', 'सीधे-सादे चित्र', चन्द्रकिरण सोनेरिक्सा का

'आदमखोर', होमवती देवी के 'धरोहर' और 'स्वप्नभंग' सुमित्रा कुमारी सिन्हा के 'वर्षगांठ', 'सुलगाते कायले', अचल सुहाग' आदि प्रमुख कहानी संग्रह हैं।

इसके अलावा तीजरानी पाठक की कहानी 'गुप्ताकर्षण' (1931) और अंजली' (कहानी संग्रह) सत्यवती मलिक की कहानी 'बाई-बहन', होमवती देवी की कहानी 'आधार', उषादेवी मित्रा की कहानी 'घर की रानी' उषादेवी की कहानी 'प्रतीक्षा' (1933), श्रीमती विपुलादेवी की कहानी 'कायर' (1940) आदि उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

2.18 प्रतिबन्धित कहानियाँ

सन् 1857 की क्रांति के बाद अंग्रेज़ी सरकार नवजागरणकालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशिक होने वाली साहित्यिक विधाओं के संबंध में सतर्क रहने लगी थी। लेकिन सरकार की बढ़ती सतर्कता और दमन जितना अधिक बढ़ता जा रहा था, भारतीय लेखकों विशेषकर कहानिकारों की सक्रियता उतनी ही अधिक बढ़ रही थी। तत्कालीन सामाजिक, राष्ट्रीय और राजनीतिक आन्दोलनों से प्रेरणा पाकर इन लेखकों ने लेखनी चलाई और ब्रिटीश सरकार ने इन कहानियों को प्रतिबन्धित कर दिया।

सन् 1908 में प्रकाशित प्रेमचन्द का कहानी संग्रह 'सोजेवतन' सबसे पहले प्रतिबान्धित किया था। इसमें संकलित कहानियों में से 'दुनिया

का सबसे अनमोल रतन', 'यही मेरा वतन है', 'शोक का पुरस्कार' और सांसारिक प्रेम और देश प्रेम' जैसी कहानियों में उभरती राष्ट्रीय चेतना अंग्रेज़ी सरकार को परेशान करने वाली थी।

पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र की अधिकांश कहानियाँ क्रान्तिकारी रही हैं। उनका 7 कहानी संग्रहों में से 'चिगारियाँ' जब्त कर दी गयीं। यह सन् 1924 में प्रकाशित हुई थी। इस कहानी संग्रह में 12 कहानियाँ संकलित थीं।

उग्र का दूसरा कहानी संग्रह 'क्रांतिकारी कहानियाँ' भी प्रतिबन्धित किया गया। सन् 1939 में प्रकाशित इन संकलन में भी 12 कहानियाँ थीं। 'पागल', 'प्रस्ताव स्वीकार', 'नेता का स्थान', 'उसकी माँ', 'ऐसी होली खेली लाल', 'कर्तव्य और प्रेम', 'नागा नरसिंह दास', 'वीर कन्या', 'ध्रुव धारणा', 'नादिरशाही', वह दिन', 'निहलिस्ट' आदि कहानियाँ हैं। सन् 1940 में इसको प्रतिबन्धित किया गया था।

सन् 1932 में ऋषभचरण जैन का कहानी संग्रह 'हड़ताल' भी जब्त कर दिया गया। इसमें 11 कहानियाँ थीं। 'हड़ताल' छोटी बेटी', 'आराध्य देव', 'परार', 'उसके बाद', 'और मेरे भी', 'रहस्य', बलि', 'उन्हें दिखा दो', 'जडाऊ हार', 'मौन आकर्षण' आदि कहानियाँ हैं।

मुनीश्वर दत्त का कहानी संग्रह 'बागी की बेटी' 17 फरवरी 1933 में जब्त कर लिया गया। इसमें संकलित 20 कहानियाँ हैं, 'बागी की बेटी',

'स्वदेश केलिए', 'बालदान की भावना', 'ऋणी परिशोध', 'आश्रयदाता', 'भीषण प्रतिकार', 'चमेली का चौरा', 'प्रतिरोध', 'पाश्चाताप', 'फांसी का कैदी', 'क्रान्ति कामना', 'गुरुदक्षिण', 'विजयोत्सव', 'तरुण तापसी', 'धर्मदृष्टि', 'संकल्प', 'बलिदान', 'मायाजाल' और 'समर्पण' आदि।

इसके अलावा कुछ पत्रिकाओं के विशेषांक प्रतिबन्धित कर दिये गये। उसमें प्रकाशित कहानियों की भी इस प्रकार जब्ति हो गयीं। चाँद के फाँसी अंक (1928) में प्रकाशित कहानियाँ जैसे, आचार्य चतुरसेन शास्त्री की कहानी 'फन्दा', पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र की कहानी 'जल्लाद', जनार्दन प्रसाद झा द्विज की कहानी 'विद्रोही के चरणों पर', विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की कहानी 'फांसी' आदि।

सन् 1928 में 'सैनिक' पत्रिका में प्रकाशित श्रीमुक्त की कहानी 'भिखारिन', सन् 1933 में 'बुन्देलखण्ड केसरी' पत्रिका में प्रकाशित कहानी 'सफल जीवन', 'अलंकार' पत्रिका में प्रकाशित प्रेमबन्धु की कहानी 'स्नेह की ज्वाला', 'बलिदान' पत्रिका में प्रकाशित सरदारी लाल की कहानी 'ईश्वरीय न्याय', 'क्रान्ति' पत्रिका में प्रकाशित विजयकुमार मिश्र की कहानी 'मज़दूरिन', 'विप्लव' पत्रिका में प्रकाशित यशपाल की कहानी 'दोस्त' और इसी अंक में लीलावती बी.ए की कहानी मज़दूरिन' आदि भी पत्रिकाओं की जब्ति के साथ प्रतिबन्धित किया गया।

प्रतिबन्धित की गयी इन कहानियों के अध्ययन से पता चलता है कि यह सिर्फ राष्ट्रीय और राजनीतिक चेतना से युक्त कहानियाँ मात्र नहीं इनमें स्वाधीनता आन्दोलन में साहित्य की भूमिका व्यक्त करने वाली कहनियाँ हैं, विदेशी क्रान्तियों और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में लिखी गयी कहानियाँ हैं, और सामाजिक जीवन के यथार्थबोध से जुडी कहानियाँ भी हैं।

निष्कर्ष

हिन्दी साहित्य की गद्य विधाओं के साथ पैदा हुई नवजागरणकालीन कहानियाँ सन् 1900 से पहले शैशव स्थिति में ही थीं। हिन्दी भाषा को प्रतिष्ठित करने और आम जनता को साहित्य से जोडने हेतु लिखी गई इन कहानियों में आधुनिक कहानी के कोई भी रूप, भाव और संरचना नहीं थे। इसी कारण इनमें पौराणिक आख्यानों से युक्त कथाएँ और स्वप्न पद्धति के आधार पर लिखी गई कहानियाँ ही मिलती हैं। लेकिन इन कहानियों का प्रारंभिक दौर के प्रयत्न समझकर उन्हें तिरस्कृत नहीं किया जा सकता ।

बीसवीं सदी को पहले दशक में अंग्रेज़ी और बंगला साहित्य से अनुदित कहानियों ने हिन्दी कहानी साहित्य को आधुनिक संरचना देने में सहायता दी। दूसरे और तीसरे दशक तक आते-आते हिन्दी कहनियाँ अपनी अस्मिता पहचानकर प्रकट होने लगीं। देश के तत्कालीन राजनैतिक परिवेश समझकर सामाजिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और प्रेम के विषयों

की कहानियाँ प्रकाशित होने लगी। ये कहानियाँ भारत को राष्ट्र संकल्पना का नया मार्ग दिखा रही थीं। अंग्रेज़ों ने यह पहले से समझ लिया था। इसलिए प्रतिबन्धित कहानियों में उन्होंने सिर्फ राष्ट्रीय प्रेरित कहानियाँ ही नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक कोटि की कहानियों को भी चुनी।

लेकिन साहित्यिक अध्येता इन कहानियों को 'तिलस्मी ऐय्यारी' कोटि में रखते आये हैं। इसलिए इन कहानियों में से अधिकांश कहानियाँ अचर्चित ही रही हैं। इन कहानियों का पाठ एवं शोध नवजागरणकालीन उस राष्ट्र संकल्पना को समझने और समझाने में सहायक होगी। ये कहानियाँ वैविध्यपूर्ण संस्कृति कायम रखने में सक्षम होंगी। इसलिए इन कहानियों का नामोल्लेख एक साहित्यिक सर्वेक्षण मात्र नहीं बल्कि अध्येताओं एवं शोधकर्ताओं की जनकारी केलिए फायदामंद निकलेगा। इन कहानियों को भी चुन-चुनकर प्रयुक्त किया गया आगामी अध्यायों में।

❖ ❖ ❖

तीसरा अध्याय

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में राजनैतिक संकल्पना

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में राजनैतिक संकल्पना

भूमिका

नवजागरणकालीन साहित्यकारों का प्रमुख लक्ष्य था भारतवासियों पर समन्वय की भावना को जगाना और स्वशासन का सपना दिखाना। वे जानते थे कि एक केन्द्रीय राजनैतिक स्वशासन के बिना राष्ट्र की संकल्पना पूरी नहीं होगी। इसलिए उनका प्रमुख लक्ष्य था लोगों में स्वदेशी प्रेम बढ़ाना और राष्ट्र के विकास केलिए काम करना। वे जानते थे कि राजनीतिक स्तर पर किसी एक राष्ट्र का विकास राष्ट्र संकल्पना की रीढ़ की हड्डी बन जाएगा - "एक राजनीतिक और प्रशासनिक छतरी के तरह केन्द्रीकृत भारत ही पहली बार राष्ट्र बना और इसके नागरिकों में एक राष्ट्र होने का बोध पैदा हुआ।"[1]

3.1 राष्ट्रीय क्रांति और अंग्रेज़ों का अत्याचार

राष्ट्रीय एकता केलिए किये गये विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों जैसे 1857 की लड़ाई, स्वदेशी और असहयोग आन्दोलन आदि सब को कहानी का मुख्य विषय बनाने की प्रवृत्ति उस समय की खासियत रही थी। सन् 1857 की क्रांति का हार पर भी उसका जोश भारतीयों के मन में एक कोयला बनकर रहा था। इस कोयले को न बुझाने केलिए कई कहानिकारों ने 1857 की लडाई को कहानी का प्रमुख विषय बनाया। क्योंकि यह जोश

1. प्रमोद कुमार - राष्ट्रीयता की अवधारणा और भारतेन्दु युगीन साहित्य, पृ. 136

भारतवासियों केलिए अपने देश की स्वतंत्रता की पहली माँग थी। पांडेय बेचन शर्मा उग्र की कहानी 'एक भीषण स्मृति' इसी संदर्भ में विचारणीय है। अंग्रेज़ों ने क्रांति के समय में भारतवासियों पर किये गये अत्याचारों का खुला चित्रण है इस कहानी में। लडाई के समय बच्चों को भी अंग्रेज़ फाँसी की सज़ा देते थे। इस निर्दय दृश्य को कहानी में यों व्यक्त हुआ है - "गदर के दिनों में अपराधियों का फैसला सुनाने में उतनी देर भी न लगती थी, जितनी शराब का एक घूँट पीने में। आज्ञा हुई - 'सबको फाँसी!' हाय! हाय! गुलाब के फूल आग में झुलसाए जाएँगे? ये बच्चे, जिनके लिए एक तमाचा ही बंदूक से भी भयंकर है, फाँसी पर लटकाए जाएँगे?"[1] अंग्रेज़ी सिपाही दोस्त से कहता है, "दोस्त! जी करता है, इस्तीफा दे दूँ। मुझ से तो यह सब नहीं देखा जाता। भाई अगर यही 'सैनिकता' है, तो मैं ईश्वर से प्रार्थना करूँगा- वह मुझे कभी सैनिक न बनाए। क्या 'सैनिकता' का पर्याय 'कसाईपन' ही है?"[2]

1857 की क्रांति के समय में भारतवासियों की वीरता दिखाने वाली कहानी है 'रेन ऑफ टेरर'। उग्र की इस कहानी में भारतीयों की वीरता का यथार्थ खुलता है। "शहर में चारों ओर हाहाकार मच गया। गोरे और अधगोरे भाग-भागकर किले में शरण लेने लगे।"[3]

---

1. पांडेय बेचन शर्मा उग्र, 'ऐक भीषण स्मृति' मेरी माँ' पृ. 98
2. वही
3. वही

देश में प्रसारित सभी राष्ट्रीय और राजनीतिक आन्दोलनों का प्रभाव मात्र युवकों और युवतियों तक नहीं, बल्कि विद्यार्थियों के बीच में भी अधिक चर्चित रहा। असहयोग आन्दोलन और गाँधीजी के आगमन से प्रभावित पूरे देश और विद्यार्थियों का उल्लेख मिलता है श्री. गिरिजादत्त शुक्ल गिरिश की कहानी 'देश-द्रोही' से। असहयोग आन्दोलन के प्रचार केलिए महात्मा गाँधी का आगमन और इसमें सहयोग लेने वाले विद्यार्थी को सम्मान प्राप्त होना कहानी का विषय है। इन राष्ट्रीय आन्दोलनों का महत्व हमें तब मिलता है, जब उसमें भाग न लेने के कारण 'राघवशरण' नामक विद्यार्थी को अन्य विद्यार्थी 'देशद्रोही' कहते हैं। उन लोगों के अनुसार राघवशरण "कितना नीच आदमी है, महात्माजी का दर्शन करने तक नहीं आया अंग्रेज़-प्रोफसरों की चापलूसी करने को कह दो उसकी जिह्वा न थके।"[1] भारतवासियों को 'एक राष्ट्र के नागरिक' की संकल्पना में लाने में ये अंग्रेज़ी विरोधी आन्दोलन सहायक बने हैं। साथ ही लेखक इस कहानी के माध्यम से यह भी दिखा रहे हैं कि मात्र आन्दोलनों में भाग लेने से सच्चा देशभक्त नहीं बनता।

3.2 विदेशी क्रांति से प्रेरणा

आधुनिक राष्ट्र की अवधारणा पश्चिम की देन है। राष्ट्र संकल्पना की प्रेरणा स्रोत बनने वाली विदेशी क्रांतियाँ जैसी रूस, फ्रांस, अमेरिका, आयर्लेंड की और वहाँ के स्वतंत्रता आन्दोलन हमेशा भारत में चर्चित रहे हैं।

---

1. श्री. गिरिजादत्त शुक्ल गिरीश - देशद्रोही, 'सरस्वती' कहानी -खंड, (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 231

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में भी इनकी खूब प्रधानता दी गयी ताकि भारतीय जनता भी अपने देश की स्वतंत्रता की कामना करें। उग्र की कहानी 'कर्तव्य और प्रेम' इसी कोटी की कहानी है। यह कहानी रूस की क्रान्ति पर आधारित है। कहानी का नायक रोवस्की अपनी पुत्री को देश-सेवा केलिए भेजते वक्त कहता है - "जब तक मातृभूमि की छाती पर अत्याचारियों का तांडव नृत्य हो रहा है, जब जननी जन्मभूमि के बच्चे 'मातृप्रेम' रूपी अपराध के कारण विविध यातनाएँ भोग-भोगकर प्राण-विसर्जन कर रहे हैं, जब तक स्वदेश पर भयंकर विषमता का राज्य है, तब तक सुखभोग की कल्पना कायरता है, आत्महत्या नहीं, मातृहत्या है। इस समय रूस की प्रत्येक संतान का एक और केवल एक ही-कर्तव्य है। और वह है माता के उद्धार की चेष्टा।"[1]

उग्र इस कहानी के द्वारा देशप्रेम का एक ऐसा तीव्र रूप दिखाते हैं, कि देशप्रेम से विचलित पुत्री की पिता द्वारा हत्या की जाती है। प्रेमचन्द की कहानी 'सांसारिक प्रेम और देश प्रेम' इटली की राष्ट्रीय क्रांतियों से संबंधित कहानी है। जन्मभूमि की सेवा केलिए सबकुछ खोनेवाले 'मैजिनी' की कहानी है यह। देशसेवा केलिए अपनी प्रेमिका, धन, संपत्ति सबकुछ खोकर स्वराज्य में मर मिटने वाला है इसका नायक। इस कोटि में आनेवाली अन्य कहानियाँ हैं - मुनीश्वर दत्त की कहानी 'ऋणी परिशोध', 'धर्मदृष्टि', 'आश्रयदाता' और बलिदान की भावना' आदि। ये आयरलैण्ड की स्वाधीनता आन्दोलन पर

---

1. पांडेय बेचन शर्मा उग्र -ऐक भीषण स्मृति https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-एक-भीषण-स्मृति.CSPX

आधारित हैं। दक्षिण आफ्रिका के क्रांतिकारी परिवेश पर लिखी गई कहानियों में ऋषभचरण जैन की कहानी 'और मेरे भी', उग्र की अन्य कहानियाँ जैसे 'वीर कन्या' 'निहलिस्ट' आदि उल्लेखनीय हैं। इन कहानियों का प्रभाव भारतवासियों पर इतना पडा था कि अंग्रेज़ी सरकार द्वारा इनको प्रतिबंधित किया गया।

3.3 विज्ञान का महत्व

नवजागरण वास्तव में भारतीय जनता में आधुनिक बोध जगाने में सहायक बना। अपनी अस्मिता को पहचानने और आंतरिक शक्ति का इस्तेमाल करने केलिए नवजागरण ने उन्हें प्राप्त किया। आधुनिकता बोध ने विज्ञान का महत्व जानने केलिए सहायता प्रदान किया। भारतीय जनता 'क्या', 'क्यों' 'कैसे', 'कौन', जैसे सवाल पूँछने लगीं। प्रश्न पूछने की इस प्रणाली से वैज्ञानिक अविष्कारों तक पहूँचने की कहानी है 'चन्द्रलोक की यात्रा'। अपनी गरीबी में भी देश की परंपरागत संपत्ति जैसे शिल्पकला और ज्योतिष विद्या के इस्तेमाल करके वायुमण्डल में उडनेवाले एक बेलून (Parachute) बनाता है 'हंसपाल'। वैज्ञानिक विकास का उदाहरण इसमें यों प्रस्तुत है, "मैंने कार को उसमें बाँध दिया और इसमें एक टेलिस्कोप, एक बैरोमीटर, एक थर्मोमीटर, एक एलोक्ट्रोमीटर, एक परकाल, एक दिग्दर्शक, एक सेकन्ड (पल) बतलाने वाली घटी, एक घंडी, एक तुरही, एक वायुशून्य शीशे का गेंद... इत्यादि के पूरे समान से परिपूर्ण कर लिया।"[1]

1. बाबू केशवप्रसाद सिंह - चन्द्रलोक की यात्रा, सरस्वती कहानी - खण्ड, जनवरि, 1905, पृ. 148

इसप्रकार इस कहानी के माध्यम से भारतीयों को वैज्ञानिक विकास में अपने आप को गर्व करने केलिए प्राप्त बनाया है।

श्री सत्यदेव परिब्राजक की कहानी 'आश्चर्यजनक घंटी' में जापान में बनायी गयी एक घंटी के माध्यम से वैज्ञानिक प्रगति का उल्लेख किया गया है। वायू के कंपन से घंटी से 'टन' टन स्वर निकलता था और उस स्वर के कारण घंटी वजती थी। लेकिन अशिक्षित लोग इसे दैवी भक्ति मानते थे। उसीप्रकार भूत-प्रेत के अस्तित्व की रूढ़िवादी मान्यताओं के विरुद्ध लिखी गई कहानी है 'मधुमंगल मिश्र', की 'भूतही कोठरी'। नवजागरण केलिए कारणीभूत विज्ञान को प्रतिष्ठित करती है यह कहानी। इन कहानियों के माध्यम से लेखक यह दिखा रहै हैं कि अशिक्षा अंधविश्वास फैलाती है तो वैज्ञानिक समझ राष्ट्र को उन्नति की ओर ले जाने में सहायक हो। वह मनुष्य को अपने आप सोचने में और नये की ओर ले जाता है।

3.4 औद्योगीकरण बनाम पूँजीवाद

अठारहवीं शताब्दी से यूरोपीय देशों में शुरु हुए औद्योगीकरण का प्रभाव भारत में भी पडने लगा। उपनिवेशवाद के बाद भारत में औद्योगीकरण के फलस्वरूप पूँजीवाद का भी उदय हुआ। रामविलास शर्मा के अनुसार 'व्यापारिक पूँजीवाद के युग में मुख्य अन्तर्विरोध किसानों - कारीगरों तथा ज़मीन्दारों में होता है। औद्योगिक पूँजीवाद के युग में सर्वहारा उद्योगपतियों में है।"[1]

1. रामविलास शर्मा - भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरणकालीन की समस्याएँ, पृ. 22

इस 'औद्योगिक पूँजीवाद' के फलस्वरूप भारतीय कृषिव्यवस्था और कुठीर उद्योगों का नाश हो गया। भारतीय ग्रामीण व्यवस्था भी बदलने लगी। पंचायत और सरपंच भी गायब हुए। प्रेमचन्द की कहानी 'यही मेरा वतन है' में औद्योगीकरण के फलस्वरूप आए बदलाव दिखाए गए हैं। कहानी का केन्द्र पात्र भारत से दूर अमेरिका में रहने के बावजूद अपनी मातृभूमि से अगाध प्रेम और लगाव रखनेवाला है। इस स्वदेश प्रेम के फलस्वरूप जब वह वापस आता है तो औद्योगीकरण के फलस्वरूप आए परिवर्तन देखकर चौंक जाता है। इस परिवर्तन को कहानी में यों संकेत किया है, "मैं खूब रोया, क्योंकि यह मेरा प्यारा देश न था, यह वो देश न था जिसके दर्शन की लालसा हमेशा मेरे दिल में लहरें लिया करती थी। यह कोई और देश था। यह अमरीका था, इंग्लिस्तान था, मगर प्यारा भारत नहीं।"[1] अपने गाँव में आए परिवर्तन को इस प्रकार संकेत किया गया है कि पुराने चौपाल के स्थान पर आये टीका लगाने का स्टेशन और डाकखाना, कोल्हाडे की जगह पर सन लपेटने वाली मशीन, तंबोली और सिगरेट की दूकान आदि।

माधवप्रसाद मिश्र ने अपनी कहानी 'विश्वास का फल' में कलकत्ता महानगर का एक ऐसा द्वन्द्वात्मक चित्र प्रस्तुत किया था जिससे भारत में उभरते पूंजीवादी चेहरे का अभिलेख मिलता है - "बडे-बडे मकानों, बडी-बडी दूकानों, लंबी-चौडी सडकों, एक से एक बढ़ के कारखानों ... कलकत्ता

---

1. प्रेमचन्द - यही मेरा वतन है, सोजेवतन, पृ. 40

शहर जितना मशहूर और लक्ष्मी के कृपापात्रों का घर हो रहा है..."[1] लेकिन इसके साथ लेखक यह भी दिखाते है, "साथ ही इसके इस शहर में जैसे अमीरों और बड़ी-बड़ी सड़कों और मकानों की भरमार है उसी तरह मज़दूरी पेशेवाले, दीन लाचार तथा और तरह से औकात गुजारी करने वाले गरीबों और उनके रहने वाले छोटे-छोटे तंग, गंदे और पुराने मकानों तथा उसी ढल की गंदी गलियों की भी कमी नहीं है।"[2] औद्योगीकरण और पूँजीवाद का यह विकास भारतीय जनता के एक हिस्से को और गरीब बनाने का कार्य हुआ। इसी युग में मध्यवर्ग का उदय हुआ यह भारत को राष्ट्र में रूपायित करने का कारण बना।

3.4.1 बाज़ारीकरण की जड़

औद्योगीकरण के फलस्वरूप भारत के बाज़ारों में भी बदलाव आने लगे। औपनिवेशिक शक्तियाँ पूरी तरह भारत को पाश्चात्य बनाने की कोशिश में थीं। भारत का परंपरागत व्यापार और लेन-देन की पद्धति नष्ट होती जा रही थी। ब्रिटिश पूँजीपतियाँ पूरे बाज़ार का मालिक होने लगे। उनका लक्ष्य तो यह था कि भारत में बाज़ारू संस्कृति उत्पन्न करे ताकि लोग पाश्चात्य संस्कृति के निकट आए। नवजागरणकालीन कहानियों में चित्रित यह मामला विकसित होकर आज भूमण्डलीकरण और बाज़ारीकरण में परिणत हो गया। इसने भारत के राष्ट्रीय जागरण को विलोम मार्ग दिखाएगा।

---

1. माधवप्रसाद मिश्र - विश्वास का फल, सुदर्शन अप्रेल 1901, पृ. 10
2. वही

विनिमय को आसान बनाने वाले हमारे बाज़ार को उपनिवेशवादी शक्तियों ने मात्र बिक्री का केन्द्र बनाया।

पहले हम बाज़ार के मालिक थे। लेकिन अब बाज़ार हमारे मालिक बन गये। प्रेमचन्द की कहानी 'ईदगाह' का 'हामिद' इस बाज़ारी चाल के खिलाफ चलता है। जब सारे लड़के बाज़ार में देखे रंग-भरे खिलौने पर मोहित हो जाते हैं, तब हामिद जो सोचता है उसमें बाज़ारीकरण की पहचान दर्ज है "हम समझते हैं इसकी - चालाकी। जब हमारे सारे पैसे खर्च हो जायेंगे, तो हम ललचा-ललचाकर खायेंगे।"[1] बाज़ार में पडे खूबसूरत आकर्षित सामानों पर हार मानने केलिए हामिद तैय्यार नहीं। इस कहानी के माध्यम से प्रेमचन्द यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि हम बाज़ार की ज़रूरतों को नहीं बल्कि बाज़ार हमारी ज़रूरतों को पूरा करना चाहिए। इसलिए हामिद अपनी ज़रूरत के अनुसार दादी केलिए एक चिमटा खरीदता है । हामिद सोचता है, "सच ही तो है, खिलौने का क्या भरोसा? टूट-फूट जायेंगे। हामिद का चिमटा तो बना रहेगा बरसों।"[2]

3.5 धर्म और राजनीति

भारत धार्मिक मूल्यों पर आधारित देश है। भारत की राष्ट्र संकल्पना में धर्म एक प्रमुख तत्व है। लेकिन धर्म और राजनीति दोनों अलग-अलग है। राजनीति में धर्म और धर्म में राजनीति का हस्तक्षेप भारत की धर्मनिरपेक्षता केलिए हानिकारक होगा। विभिन्न धर्मावलंबियों और विश्वासों से मिल

1. प्रेमचन्द - ईदगाह, प्रेचन्द रचनावली, (सं) डॉ. रामविलास शर्मा - 15, पृ. 209
2. वही, पृ. 210

जुलकर रहने वाले भारत में एक धर्म को मात्र स्थान देना भी खतरनाक होगा। इसलिए भारत की राजनैतिक संकल्पना में धर्म हमेश बाहर है। "सभी धर्मों से एक समान दूरी का अर्थ यह तो हो सकता है कि अन्यों की अपेक्षा किसी एक धर्म या पन्थ को वरीयता नहीं दी जाए पर इसकी सही व्याख्या यह नहीं होगी कि सरकारी स्कूलों में अन्य धर्मानुयायियों पर रोक लगाकर केवल एक धर्म के चिह्नों का प्रदर्शन होने दिया जाए।"[1]

उग्र की कहानी 'दहीबडे' में भारत को एक बावर्चीखाने से उपमा करके कांग्रेस के नेता कहते हैं, "इस बावर्चीखाने की हालत? मैं कहता हूँ इस बावर्चीखाने को हिंदू या मुसलमान नहीं सँभाल सकते। हुकूमत करने की कला ही और है...।"[2] इसमें ध्यान देने की बात यह है कि आध्यात्मक पक्ष में धर्म व्यक्तिस्वातंत्र्य के अंतर्गत आता है और यह स्वीकार्य भी है। लेकिन राजनैतिक संकल्पना में धर्म के भौतिक पक्ष का मिलना यह स्वीकार्य नहीं।

3.5.1 सांप्रदायिकता का प्रतिरोध

भारत में संप्रदायिकता की शुरुआत औपनिवेशिक सत्ताओं ने की। सन् 1857 की क्रांति में भारतीयों की वीरता देखकर अंग्रेज़ों ने फैसला लिया कि भारतवासियों की एकता को नष्ट करने का एकमात्र हथियार सांप्रदायिकता है - "साँप्रदायिकता का मूल कारण केवल धार्मिक मतभेद नहीं, इसकी बुनियाद में अर्थ और राजनीति भी है।"[3] सभी धर्मवासियों के

1. अमर्त्य सेन - भारतीय अर्थतन्त्र इतिहास और संस्कृति, पृ. 33
2. पांडेय बेचन शर्मा उग्र, 'दहीबडे' https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-दहीबडे-CSPX
3. डॉ. एलाङ्बम विजयलक्ष्मी, 'समकालीन हिन्दी उपन्यास समय से साक्षात्कार, पृ.144-145

मन में द्वेष पैदा करके सभी क्षेत्रों में यह विष फैलाने में अंग्रेज़ सफल हुआ। उग्र की कहानी 'खुदाराम' का नायक खुदाराम एक सांप्रदायिक दंगे को रोकता है। एक मुसलमानी औरत को आश्रय देने के कारण हिन्दू धर्म से निकाले गये देवनन्दन प्रसाद बाद में अल्फत अली नाम से मुसलमान बन जाने और सालों बाद उसके पुत्र 'इनायत अली' को वापस हिन्दू धर्म में जबरदस्ती बुलाने में मुसलमानों की नामंजूरी है। आपस लडने केलिए तैयार होने वाले धर्मवासियों को खुदाराम रोकते हुए कहते हैं, "तो धर्म के नाम खून की नदी बहेगी? हा हा हा। तुम लोग इन्सान क्यों हुए? तुम्हें तो भालू होना चाहिए था। शेर होना चाहिए था, भेडिया होना चाहिए था। वैसी अवस्था में तुम्हारी रक्त-पिपासी मजे में शान्त होती। धर्म के नाम पर लड़ने वाले इन्सान क्यों होते हैं?"[1] इन्सान को जानवर बनाने वाली एक हिंसात्मक प्रवृत्ति के रूप में यहाँ सांप्रदायिकता को चित्रित किया गया है।

बच्चे भी सांप्रदायिक षड्यंत्रों के शिकार बनते हैं। श्रीयुत सेठ गोविन्ददास की कहानी 'ईद और होली' के बच्चे 'हमीदा' और 'राम' चार वर्ष के बच्चे हैं। वे अच्छे दोस्त हैं और आपस में मिलकर खेलना चाहते हैं। लेकिन इन बच्चों के माँ-बाप उन्हें एक दूसरे से अलग रहने की चेतावनी देते हैं। उनकेलिए हमीदा 'म्लेच्छ' और राम 'काफिर' है। बाद में शहर में होने वाले दंगे में फँस जाने वाले बच्चों को हमीदा का पिता बचाता है और इस

---

1. उग्र -खुदाराम, मेरी माँ, पृ. 50

प्रकार दोनों धर्मवासियों के मन में मित्रता आ जाती है। राम की माँ 'रतना' कहती है, "म्लेच्छ ने काफिर का मकान जलाया था। भाई खुदाबख्श ने बहन रतना का नहीं।"[1] लेकिन यहाँ यह याद दिलाने की कोशिश की जा रही है कि हम एक देश के निवासी है और इसलिए ही एक दूसरों के भाई-बहन ही हैं। बच्चे हर एक देश के भाविष्य वाणी हैं। बच्चों के मन में भाईचारे की यह संस्कृति देना बहुत ज़रूरी है। यही राष्ट्ररूपायति का पहला पडाव है।

सांप्रदायिकता के कारण मानवीय मूल्यों का लोग अक्सर भूल जाते हैं। उग्र की कहानी 'ईश्वरद्रोही' में सांप्रदायिक भेदों को मिटाकर मानवीय मूल्यों पर बल दिया जाता है। एक मुसलमानी औरत को आश्रय देने के कारण गोपालजी और उसका पुत्र रामजी अपने धर्मवासियों की घृणा के पात्र बनते हैं। तब गोपालजी कहते है, "मुसलमान भी आदमी है, हिन्दू भी। मैं आदमीपरस्त हूँ, हिन्दू या मुसलमानपरस्त नहीं। "[2] इसप्रकार अपनी बेटी की तरह उस औरत को पालने वाला गोपालजी मानवीय मूल्यों का अच्छा उदाहरण है।

सांप्रदायिकता देश की उन्नति केलिए बाधा बन जाती है। भारत की विविधता में एकता की भावना नष्ट करती हैं। राजनीति में सांप्रदायिक विष फैलाने का काम सबसे पहले अंग्रेज़ों ने शुरु किया। लेकिन इसका दुष्परिणाम

1. श्रीयुत सेठ गोरिन्ददास - ईद और होली, सरस्वती कहानी - खंड (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 343
2. उग्र 'ईश्वरद्रोही' https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार-पांडेय-बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-ईश्वरद्रोही-CSPX

आज भी हम भोग रहे हैं। यह राष्ट्र रूपयति केलिए खतरनाक सिद्ध होता है।

3.6 गुलामी से मुक्ति और राष्ट्रीय एकता

व्यक्ति स्वातंत्र्य केलिए संघर्ष करने वाली भारतीय जनता में सबसे सशक्त प्रतिरोध गुलामी के विरुद्ध था। अपने ही देश में दूसरों के गुलाम बनकर रहना उसकेलिए मृत्युतुल्य था। बडे-बडे स्थानों में नियुक्त अंग्रेज़ी अफसरों के गुलाम बनकर भारतीय जनता काम करती थी। इतना ही नहीं कानून, अदालत और आर्थिक संपत्ति सब इनके हवाले में थे।

प्रेमचन्द की कहानी 'विचित्र होली' में इसी गुलामी से मुक्ति चाहने वाले नौकरों की है। ए.बी. क्रास जो एक अंग्रेज़ था, के बँगला में काम करने वाले ये नौकर अपनी गुलामी से तंग आकर कहते हैं, "अजी लानत भेजो! अब मुझसे गुलामी न होगी । यह हमें जूतों से ठकरायें और हम इनकी गुलामी करें! आज यहाँ से डेरा कूच है।"[1] इसप्रकार मालिक की अनुपस्थिति में सारे नौकर होली मनाते हैं और खुशियाँ बाँटते हैं। वे पूरा बँगला के कमरे में घुसकर नाचने गाने लगे। प्रेमचन्द ने इसके बारे में यों व्यक्त किया है, "सब ऐसे निडर हो गये थे। मानो अपने घऱ में है। कुर्सियाँ उलट गयी। दीवारों पर तस्वीर टूट गयी। एक ने मेज़ उलट दी। दूसरे ने रिकाबियों को गेंद बनाकर उछालना शुरु किया।"[2] यहाँ नौकर अपना स्वातंत्र्य मना रहा था। नौकर सारे भारतीयों का प्रतीक है। यहाँ प्रेमचन्द ने आज़ादी केलिए तड़पने वाले भारतीयों की और इशारा किया है।

---

1. प्रेमचन्द - विचित्र होली- प्रेमचन्द रचनावली -(सं) डॉ. रामविलास शर्मा , 12, पृ. 257
2. वही

अशिक्षित नौकरों के साथ शिक्षित भारतीयों पर भी अंग्रेज़ ऐसे ही बर्ताव करते थे। इस कहानी का 'सेठ उजागरमल' इसका उदाहरण है। सेठ अंग्रेज़ों के दोस्त था। रहन-सहन भी अंग्रेज़ों का ही था। ए.बी. क्रास उसके परम मित्र थे। जब घर में नौकर होली मना रहे थे तब सेठ वहाँ पहुँचा और नौकरों के साथ उन्होंने भी होली मनायी। जब क्रास वापस आया तो नौकरों से साथ होली खेलने वाला सेठ उजागरमल को देखकर क्रोध से उसे गोली मारना भागा। अपने जीवन के खातिर सेठ भी भागा। इस प्रकार सेठ का घोर अपमान हुआ। दूसरे शब्दों में 'अंग्रेज़ी की भावी शुभकामनाओं पर पूर्णविश्वास रखने वाला, शहर सहयोगी समाज के नेता' सेठ लाला उजागरमल का भी अपमान हुआ। यह उसकेलिए सहनीय नहीं था। उसने सोचा, "यह लोग होली नहीं खेलते तो इनका इतना क्रोधोन्मता होना इसके सिवाय और क्या बतलाता है कि हमें यह लोग कुत्तों से बेहतर नहीं समझते।... मन में यह हमें अब नीच और कमीना समझते हैं.... इतना अपमान! मुझे उसके सामने ताल ठोककर खडा हो जाना चाहिए था। भागना कायरता भी। इसी से यह सब शेर हो जाते हैं।"[1] इसप्रकार अंग्रेज़ों के साथ मिलकर उनकी सहायता करने वाले भारतीयों केलिए एक चेतावनी है यह कहानी। प्रेमचन्द उन्हें स्वाभिमान रहने का आह्वान देते हैं। इसलिए सेठ उजागरमल बात में अपनी देश की राष्ट्रीय एकता केलिए काम करने तैय्यार हो जाते हैं।

श्रीमती विपुलादेवी की कहानी 'कायर' में भी विदेशियों से अपमानित 'मानसिंह' को उसकी ही छाया पूछती है, ".... जब कर्नल घंटले ने तेरा

---

1. प्रेमचन्द - विचित्र होली, प्रेमचन्द रचनावली - 12, (सं) डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. 260

अपमान किया था क्या तेरे शरीर में शक्ति नहीं थी।... तुझे नहीं मालूम कि जिनकी आत्मा में शक्ति नहीं होती, जो आत्माभिमान से सर्वथा शून्य होते हैं, जो शरीर में बल रहते हुए भी हिचककर पीछे हट जाते हैं, वहीं इस प्रकार अपने आपको धोखा दिया करते हैं।"[1]

यहाँ राष्ट्र के हित को ही प्रमुखता दी गई है। एक स्वाभिमान व्यक्ति ही अपनी स्वतंत्रता की आशा करेगा। अपने अंदर से गुलामी की जंजीरें तोडकर बाहर निकलने से यह सफल होगा। यह राष्ट्र के हित और उसकी स्वतंत्रता के लिए अनिवार्य है।

3.6.1 व्यक्ति स्वातंत्र्य

स्वातंत्र्य हर एक मानव केलिए जीवन से भी मूल्यवान है। राजनैतिक स्वतंत्रता में सबसे प्रमुख है नागरिक यानि व्यक्ति का स्वातंत्र्य। क्योंकि देश की स्वतंत्रता का पहला चरण व्यक्ति स्वातंत्र्य से शुरु होता है। दूसरे शब्दों में अपनी स्वतंत्रता केलिए लडने वाले हर व्यक्ति के मेहनत का फल है देश की स्वतंत्रता ।

हर एक राष्ट्र में व्यक्ति या नागरिक का निजी स्वातंत्र्य है। धर्म, विश्वास, खान-पान, वेश-भूषा, रहन सहन, रीति-रिवाज यह सब व्यक्ति का अपना अधिकार है। उग्र की कहानी 'रेन आफ टेरर' में अपनी इच्छा के अनुसार खान-पान करने के अधिकार के उल्लंखन करने वाले अंग्रेज़ी

1. श्रीमति विपुलादेवी - कायर', सरस्वती, कहानी - खण्ड, (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, 1905, पृ. 344

सिपाहियों का अभिलेख देखा जा सकता है। गोमांस न खाने वाले ब्राह्मण के मुँह में गोमांस घूँसकर उसे ज़बरदस्ती खिलाने की कोशिश की जाती है। कहानी में इसके बारे में यों कहा गया है - "यह 'बीफ' क्या बला है, ब्राह्मण देवता नहीं समझ सके। सम्मुख आने पर उन्हें मालूम हुआ कि 'बीफ' का अर्थ गोमांस होता है। ब्राह्मण के मुँह में गोमांस! लाठीसीधी कर बूढ़ा खडा हो गया। .... गोरों ने राक्षसों की तरह उसे मारा, उसके मुँह में गोमांस ठूँस दिया...।"[1] यहाँ व्यक्ति के अधिकार को नकारा जाता है। जहाँ चित्रित व्यक्ति स्वातंत्र्य उसके धर्म से संबंधित है। गाय को ईश्वर मानने वाले धर्म पर विश्वास करने के कारण वह गोमांस नहीं खा सकता। यह उसका स्वातंत्र्य है। उसी प्रकार ही गाय के मांस खानेवालों पर हमला करना भी व्यक्ति स्वातंत्र्य के खिलाफ ही है।

धर्म परिवर्तन भी व्यक्ति का निजी अधिकार है। व्यक्ति किस धर्म को स्वीकार करे, किस धर्म में परिवर्तित करे, ये सब व्यक्ति का ही अधिकार है। उग्र की कहानी 'खुदाराम' में ज़बरदस्त धर्म परिवर्तन करने केलिए तंग करने वाले लोगों को देखा जा सकता है। एक मुसलमानी औरत को आश्रय देने के कारण लोग देवनन्दन को हिन्दू धर्म के योग्य नहीं समझते, उसे 'म्लेच्छ' कहकर निकालना चाहते हैं। वे कहते हैं, "अब देवनन्दन पूरे म्लेच्छ हो गए। यह किसी तरह भी हिन्दू नहीं हो सकते।"[2]

---

1. उग्र - रेन ऑफ टेरर - मेरी माँ, पृ. 96
2. उग्र - खुदाराम, मेरी माँ, पृ. 44

इसी प्रकार वेश-भूषा में भी व्यक्ति का अपना अधिकार और स्वातंत्र्य है। व्यक्ति को अपनी इच्छा के अनुसार वस्त्र पहनने का हक है। उसपर दूसरों का कोई अधिकार नहीं। चाहे वह मामला धार्मिक हो या धर्म के परे। उग्र की कहानी 'ईश्वरद्रोही' में इस बात का उल्लेख किया गया है। गोपाल जी मौलवी साहब से कहता है, "लुंगी लगाने वाला धोती पहनने वाले को काफिर नहीं कह सकता। पगडी पहनने वाले तूर्की के टोपी वाले को म्लेच्छ नहीं कह सकता। अपनी अपनी पसन्द है।... मैं कुछ भी नहीं हूँ, आदमी हूँ - जो जी में आएगा पहनूँगा।"[1]

शादी, चुनाव सब में व्यक्ति का अपना हक है। एक राष्ट्र के संसाधनों पर हर व्यक्ति का समान अधिकार है। चाहे वह प्रकृति हो, नीति-विधि व्यवस्था हो या प्रतिरोध करने का अधिकार हो। भारत की राजनैतिक संकल्पना में हर नागरिक को स्थान है। नहीं तो प्रतिरोध किया जा सकता है। जहाँ प्रतिरोध का अधिकार नहीं, वहाँ जनतंत्र की मृत्यु माननी चाहिए।

3.6.2 आर्थिक स्वतंत्रता

राजनैतिक स्वतंत्रता केलिए आर्थिक दृढ़ता अनिवार्य है। दूसरे शब्दों में एक राष्ट्र की रूपायिति का मूल आधार आर्थिक स्थिरता और विकास ही है। उपनिवेशवाद के बाद भारत की परंपरागत अर्थव्यवस्था में ठोस क्षति पहूँची। भारत के व्यापार, कृषि, कुटीर उद्योग सबकुछ टूट-फूट हो गये। गाँवों का पतन हुआ और बोरोज़गारी बढ़ने लगी। फलस्वरूप

1. उग्र - ईश्वर द्रोही- https://www.hindisamay.com/content/350/1/रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-ईश्वरद्रोही-CSPX

भारतीय जनता गरीब से गरीब होने लगी। इसका खुरदरा यथार्थ नवजागरणकालीन कहानियों में प्रस्तुत है।

भारत के शिल्प-कला और कुटीर उद्योगों के पतन ने भारतीय व्यापार को हिला दिया। बाबू केशवप्रसाद सिंह की कहानी 'चन्द्रलोक की यात्रा' में इस भयानक स्थिति का खुलासा हुआ है। कहानी का पात्र 'हंसपाल' भाथी बनाने वाला एक शिल्पकार था। लेकिन औद्योगिक पूँजीवाद के फलस्वरूप उन्हें अपना बाज़ार और व्यापार नष्ट हुआ। वह कहता है, "मैं शीघ्र व्यापार मन्द हो जाने के कारण शीघ्र ही दरिद्र हो गया।... जो लोग पहले अच्छे ग्राहकों में से थे, अब उनको हमारे तक आने का अवकाश भी नही मिलता था। मैं शीघ्र अतिशय कङ्गाल हो गया।"[1] यहाँ ग्राहक नष्ट हो जाने से व्यापार का पतन और गरीब होने की ओर संकेत किया गया है तो बंगमहिला की कहानी 'दुलाईवाली' में स्वदेशी चीज़ों का ग्राहक बनने का आह्वान दिया जाता है। विदेशी चीज़ों को छोड़कर स्वदेशी चीज़ों को अपनाने का नया मार्ग बंगमहिला दिखा रही है। अपने मित्र नवलकिशोर से मिलने केलिए विदेशी धोती पहनकर आने वाला वंशीधर खुद सोचता है, "... एक देशी धोती पहिनकर आना था, सो भूलकर विलायती ही पहिन आये। नवल कट्टर स्वदेशी हुए हैं न ।... और बात भी ठीक है! नाहक विलायती चीज़ें मोल लेकर क्यों रुपये की बरबादी की जाये। देशी लेने से भी दाम लगेगा सही; पर रहेगा तो देश ही में।"[2] यहाँ लेखिका ने पाश्चात्य प्रभाव में पडकर देश की आर्थिक स्थिति नष्ट होने की ओर प्रकाश डाला है।

1. बाबू केशवप्रसाद सिंह - चन्द्रलोक की यात्रा, सरस्वती कहानी खंड, जनुवरी 1905, पृ. 147
2. बंगमहिला - दुलाईवाली, बंगमहिला रचना समग्र, (सं) अस्मिता तिवारी, पृ. 48

विदेशी चीज़ों पर हमारा जो लगाव है, वह हमारी अर्थ व्यवस्था पर बुरा असर डालने की ओर संकेत किया गया है। उस ज़माने में लिखित वे कहानियाँ आज भी कितने प्रासंगिक नज़र आती है।

माधवप्रसाद मिश्र की कहानी 'विश्वास का फल' में औद्योगीकरण के फलस्वरूप शहर की गरीबी के बढ़ने का चित्रण उतारा गया है। उग्र की कहानी 'एक भीषण स्मृति' में आर्थिक संकटों से परेशान भारतीय गावों का चित्र पेश है - "वे गाँव....दरिद्रता की तस्वीर थे! मिट्टी की दीवारों के हृदय फट गए थे, मानो वे हमसे कह रही थीं कि हम दुर्बलों को प्रलय का संदेश सुनाने क्यों आ रहे हो?... वे दीवारें मांस हीन हड्डियों की तरह खडी थीं, और उनके सिरपर बूढ़ियों के बाल की तरह सूखे तृण थे।"[1] यहाँ अंग्रेज़ी शासन में हमारे देश की शोचनीय स्थिति को खींचा गया है।

उपर्युक्त कहानियाँ हमें सचेत करती है कि एक स्वतंत्र राजनैतिक शासन केलिए आर्थिक उन्नति अनिवार्य है। राजनैतिक स्वतंत्रता और आर्थिक स्वतंत्रता परस्पर पूरक हैं।

3.7 देशप्रेम

अंग्रेज़ी शासन काल में भारतवासियों के बीच में फैले गुलामीपन का भाव बडा खतरनाक था। इसी गुलामीपन को दूर करके अपने देश के प्रति गर्व बढ़ाना और अंग्रेज़ों के सामने 'देशप्रेम' जगाकर अपनी अस्मिता को जागृत करना बहुत ज़रूरी था। इसी दृष्टि ध्यान में रखकर देश की

---

1. उग्र - ऐक भीषण स्मृति- मेरी माँ, पृ. 100

स्वतंत्रता और स्वदेशी भावनाओं को जागृत करने वाले प्रवृत्तियाँ नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों का विषय बनें। उदाहरण के तौर पर प्रेमचन्द की कहानी 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न' का नायक 'दिलफिगार' अपनी प्रेमिका केलिए दुनिया के सबसे अमनोल रत्न ढूँढने केलिए जाता है। विभिन्न परिस्थितियों से गुज़रकर वह हिन्दुस्तान पहुँचता है। वहाँ वह अपनी जन्मभूमि केलिए युद्ध करके बुरी तरह घायल सैनिक से मिलता है। मातृभूमि केलिए खून बहाने वाला उस सैनिक की मृत्यु उसके सामने होती है। सैनिक का रक्त अपने रुमाल से लेकर अपने प्रेमिका को 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न' सौंप देता है और वह प्रसन्न हो जाती है। कहानी में इसके बारे में यों लिखा है- "खून की वह आखिरी बूँद जो वतन की हिफ़ाजत में गिरे दुनिया की सबसे अनमोल चीज़ है।"[1] देश सेवा में युद्ध करने वाले सैनिकों पर प्रकाश डालकर देशप्रेम का महत्व दिखाते हैं प्रेमचन्द।

विभिन्न कारणों से स्वदेश छोड़कर विदेशों में रहने वाले लोगों का प्रतिनिधि है 'यही मेरा वतन है' कहानी का नायक। वह विदेश में रहकर भी स्वदेश प्रेम के मारे उनके प्रति आशंकित होकर जीवन बिताता है। अपने देश की यादों में रहने वाला वह आदमी अंत में देश वापस आकर गंगा के किनारे एक झोंपडी बनाकर रहता है। उसका कथन विचारणीय है - "मैंने बैशुमार दौलत, वफादार बीवी, सपूत बेटे और प्यारे-प्यारे जिगर के टुकड़े, ऐसी-ऐसी अन्मोल नेमतें छोड दीं। इसलिए कि प्यारी भारत-मात्र का अंतिम दर्शन लूँ।"[2] प्रेमचन्द की इस कहानी के नायक का कोई नाम नहीं, बल्कि

---

1. प्रेमचन्द्र - दुनिया का सबसे अनमोल रतन, सोजेवतन, पृ. 19
2. प्रेमचन्द्र - यही मेरा वतन है, सोजेवतन, पृ. 39

'मैं' शैली में प्रस्तुत कर स्वदेश प्रेम का जीता जागता चित्र पेश करते हुए उस समय के भारतीय जन-मानस में स्वतंत्रता की अभिवाँछा जागृत करने की कोशिश करते हैं।

देशप्रेम से अपनी सारी संपत्ति देश केलिए समर्पित करना नवजागरणकालीन आम घटना थी। स्त्री और पुरुष के भेद के बगैर समाज के सभी स्तर के लोग इसमें शामिल थे। प्रेमचन्द की कहानी 'वियोग और मिलाप' कहानी का बाप और बेटे उस कोटि में आते हैं। अपनी ज़िन्दगी का पूरा समय, अपना स्वास्थ्य, संपत्ति सबकुछ देश केलिए समर्पित कर देशप्रेम का अनूठा रूप सामने रखते हैं प्रेमचन्द उपर्युक्त कहानी के माध्यम से देशप्रेम के साथ देशद्रोहियों का भी चित्रण मिलते हैं। सने 1857 की क्रांति से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक की लडाई में भारत ने विभिन्न लडाइयाँ, आन्दोलनों और सत्याग्रहों का सामना किया। मातृभूमि केलिए जीवन त्याग करने केलिए भी भारतवासियाँ तैय्यार थे। लेकिन इनमें से कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्होंने खुद की भलाई केलिए अंग्रेज़ों का साथ दिया। अंग्रेज़ों के साथ मिलकर इन लोगों ने मातृभूमि को पराजित किया। पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र की कहानी, 'सिक्ख-सरदार' में सन् 1857 की क्रांति की पराजय का कारण यों प्रकट है, "यदि उस दिन भी हमारे सेनापतियों ने हमें धोखा न दिया होता, तो हमारी विजय तो होती ही, साथ ही एक विदेशी जीवित न बचता... सेनापति तो अंगरेज़ों से मिले थे, उन्हें तो स्वदेश-विक्रय की धुन थी।"[1] सरदार श्यामसिंह

---

1. उग्र, 'सिक्ख सरदार' https://www.hindisamay.com/ content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-सिक्ख - सरदार-CSPX

का यह कथन अत्यंत निराशा का है। उग्र की ही कहानी 'देश-द्रोह' में भी अंग्रेज़ों का साथ देने वाले सेनापति को प्रस्तुत किया गया है। कहानी में सेनापति लालसिंह को देश-द्रोही' के रूप में चित्रित किया गया है। वह खुद सोचता है, "इस समय मैं सेनापति हूँ। एक टुकड़ा कागज़, जरा-सी स्याही और दो शब्द, बस। ब्रिटीश सेनापति लॉर्ड गफ को मैं अपने वश में कर लूँगा।... देश-द्रोह ? हटा! देश-द्रोह कुछ भी नहीं। चारों और स्वार्थ-फिर देश-द्रोह कैसा? देश किसी के साथ चलता है? सब भ्रम है-माया है - प्रवंचना है-..."[1] यह हर एक देश का शाप है। इस कहानी के माध्यम से उग्र जी यह व्यक्त करते हैं कि इन देश-द्रोहियों को कभी भी शान्ति नहीं मिलेगी। इस कहानी का सेनेपति भी अपनी पुत्री जया के सामने हार जाता है। वह अंग्रेज़ों से लडकर मृत्यु को अपनाती है और मरते वक्त भी पिता को 'देश-द्रोही' बुलाती है। वह कहती है, "मेरी पवित्र मृत्यु को अपने स्पर्श से भ्रष्ट न करो। हाय प्रभो! मेरा पिता और देश-द्रोही!"[2]

देशद्रोहियों का दूसरा रूप श्री. गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' की कहानी 'देश-द्रोही' में प्राप्त है। देश-सेवा में लगे रहने का दिखावा करके देश को लूटने वाले राजनीतिज्ञों को भी लेखक देश-द्रोही कहते हैं। हर एक देश के विकास केलिए राजनीतिक स्तर का विकास अनिवार्य है। देश की संपत्ति के लूटने से राष्ट्र के विकास केलिए वह हानीकारक बन जाएगा। इस कहानी का नायक 'राधाशरण' ऐसा एक व्यक्ति है जो विद्यार्थी जीवन से

---

1. उग्र - देश-द्रोह, मेरी माँ, पृ. 71
2. वही

लेकर असहयोग आन्दोलन जैसे आन्दोलनों में भाग लेकर लोगों के मन में 'देशभक्त' स्थान पाने में सफल हुआ। लेकिन राजनीतिक भ्रष्टाचार से उन्हें जेल जाना पडता है। कहानी में उन लोगों के बारे में यों व्यक्त किया गया है। "यह बडे खेद की बात है कि जिन लोगों से स्वार्थ-त्याग, देश भक्ति और सदाचार की आशा की जाती है, वे ही सार्वजनिक संस्थाओं में प्रवेश करके नीच से नीच श्रेणी के स्वार्थ की उपासना में रत होते और देश-द्रोह करते हैं। कार्य-कर्त्ताओं की यह स्थिति किसी भी देश केलिए शोचनीय है, किन्तु भारतवर्ष में तो इससे बहुत बडी हानि की संभावना है।"[1] सन् 1926 में लिखी गई इस कहानी में 'भारतवर्ष' शब्द का प्रयोग भारत को राष्ट्र बनाने की संकल्पना की ओर का संकेत ही है।

3.7.1 अहिंसा

यह भारत का आत्म तत्व है इसलिए गाँधिचिंतन के मूल तत्वों में एक बन गया । भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति तक की लडाई में विभिन्न क्रांतिकारी भगावतों और आन्दोलनों में यह सफलता से प्रयुक्त किया गया। अहिंसा सिद्धांत ने ही भारत को कट्टरता रहित देश साबित करने में सहायता प्रदान की। इसी सिद्धांत के बल पर माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' की विधवा को भी इन्साफ मिलती है। जैसे कि अपने ही देश में हमें अंग्रेज़ों की इजाजत लेनी पड़ती थी, उसी प्रकार विधवा को भी ज़मीन्दार द्वारा अन्याय से हासिस की गयी अपनी ही झोंपडी से एक टोकरी

---

1. श्री. गिरिजादत्त शुक्ल गिरीश - देश - द्रोही, सरस्वती, कहानी खंड (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 231

भर मिट्टी लेने की इजाजत लेनी पडती है - ताकि उस मिट्टी से वह चूल्हा बनाकर अपनी पोती केलिए रोटी पका सके। बाद में वह उस टोकरी भर मिट्टी उठाने केलिए ज़मींदार से सहायता माँगती है, लेकिन पूरी कोशिश के बात ज़मींदार हार जाता है। तब विधवा कहती है, "महाराज नाराज न हों, आपसे एक टोकरी भर मिट्टी नहीं उठायी जाती और इस झोंपड़ी में तो हज़ारों टोकरियाँ मिट्टी पडी है। उसका भार आप जन्म-भर क्योंकर उठा सकेंगे? आप ही इस बात पर विचार कीजिए।"[1] विधवा के इन शब्दों से ज़मींदार का पश्चाताप दिखाकर सप्रे जी प्रतिरोध का एक नयी तरीका प्रस्तुत करते हैं, जो तलवार से प्राप्त नहीं, बल्कि अहिंसा से प्राप्त है।

प्रेमचन्द की कहानी 'जुलूस' में 'शंभू' और 'दीनदयाल' देश की स्वतंत्रता केलिए अहिंसा पथ को स्वीकारते हैं। उनके अन्य दोस्त जब सत्याग्रह करने केलिए जुलूस निकाला तब वे कहते हैं "जुलूस निकालने से स्वराज्य मिलजाता तो अब तक कब का मिल गया होता।"[2] इसप्रकार शान्त प्रतिरोध का इस मार्ग ने भारत को सफलता प्रदान की। गाँधीजी का यह सिद्धांत ही भारत की राष्ट्र संकल्पना को दूसरे देशों से अलग बनाता है।

3.7.2 अंग्रेज़ी षड्यंत्र का खुला चित्रण

भारत को यानि भारतवासियों को शून्य दिखाकर अपना अधिकार स्थापित करने की अंग्रेज़ी प्रणाली बहुचर्चित ही है। इसकेलिए अंग्रेज़ी लेखक जैसे 'जैम्स मिल्लर' और 'मार्क्स मूलर' की कोशिश का उल्लेख पहले

1. माधवराव सप्रे - एक टोकरी भर मिट्टी', आरंभिक हिन्दी कहानियाँ, (सं) विजयदेव झारी, पृ. 251
2. प्रेमचन्द - जुलूस, प्रेमचन्द रचनावली - 12, (सं) डॉ. रामविलास शर्मा, पृ. 282

अध्याय में दिया गया है। उन्होंने यह साबित किया कि अंधविश्वासों और अनाचारों से भरे एक देश में शासन करने का अधिकार सिर्फ उनको ही है। उग्र की कहानी 'दही बडे' ने इस विषय की ओर संकेत किया है। इस कहानी में भारत को एक बावर्चीखाना के रूप में प्रस्तुत किया गया है। बावर्चीखाने का अधिकार हासिल करने केलिए विभिन्न धार्मिक प्रतिनिधियाँ और राजनीतिज्ञ भी कोशिश करते हैं। तब बावर्चीखाने का महाबावर्ची अंग्रेज़ अपने साथियों से मिलकर यह षड्यंत्र रचना है कि वे बावर्चीखाने में दंगा पैदा करेंगे। इसकेलिए वहाँ के बर्तनों को आपस में लडाई करवायेगा। जब विभिन्न धर्मवाले और राजनीतिज्ञ आते हैं तो महाबावर्ची अंग्रेज़ कहते हैं, "जिस बावर्चीखाने के बर्तनों तक में मिल्लत नहीं उस पर हिंन्दुस्तानी हुकूमत होने से गजब हो जाएगा। हुकूमत करना तो हमीं जानते है।"[1] अंग्रेज़ों के इस षड्यंत्र के खुले चित्रण से उग्र यह दिखा रहे हैं कि अंग्रेज़ों केलिए 'शासन' कितना प्रमुख है। यहाँ उग्र राजनीति और स्वशासन का महत्व भी दिखा रहे हैं।

3.7.3 अशिक्षित शासकों पर व्यंग्य

शिक्षा के महत्व के साथ-साथ अशिक्षित शासकों पर व्यंग्य करने में भी नवजागरणकालीन कहानीकार हिचकते नहीं। क्योंकि शासक वैज्ञानिक, दूरदर्शी, शिक्षित और दयालू न होने से राष्ट्र विकास की ओर नहीं, बल्कि अविकास की ओर बढ़ेगा। श्री. बदरीनाथ भट्ट की कहानी 'ग्रेजुएट की नौकरी' में एक अशिक्षित शासक पर व्यंग्य करता है। इस कहानी में राजा

---

1. पांडेय बेचन शर्मा उग्र - दहीबडे https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-दहीबडे -स्मृति.CSPX

'कर्णसिंह' के यहाँ एक ग्रेजुएट नौकरी केलिए आता है तो राजा उससे पूछता है कि वह अभी तक क्या करता था। ग्रेजुएट जवाब देता है कि वह अभी तक पढ़ाता था। तब मूर्ख राजा कहता है, "अजी लिखते थे या नहीं? मुझे तो पढ़ने वाला नहीं, लिखने वाला बी.ए. चाहिए; क्योंकि मेरे यहाँ तो छिट्ठी-विट्ठियाँ लिखने-लिखाने का काम है, न कि पढ़ने-पढ़ाने का।"[1] लेखक यहाँ ऐसा यथार्थ दिखा रहे हैं कि जब शासक मूर्ख होता है तब शिक्षित नागरिकों या प्रजा को भी मूर्ख होने का नाटक करना पडता है, इसलिए ग्रेजुएट जवाब देता है "मैं डंके की चोट से इस बात को कहता हूं कि पढ़ना व लिखना साथ-साथ न तो होता है, न कभी हुआ और न कभी होगा।"[2] यहाँ ग्रेजुएट की गरीबी ने उन्हें यह कहने केलिए मज़बूर बनाया। लेकिन यहाँ लेखक पाठकों को यह चेतावनी भी देता है कि अगर हम शासकों के नंगेपन खुलकर बोलने में हिचकते हैं तो हमारा राष्ट्र संबंधी सपना, सिर्फ सपना ही रह जाएगा। इसका मतलब है कि राजनीति में शासन की आलोचना करना अनिवार्य है। यह शासकीय व्ववस्था में परिवर्तन लाने में मदद देगा और जनता को हमेशा प्रतिपक्ष में खडे होकर राजसत्ता के साथ राजनीति का पोल खोलना एक जनतंत्रीय देश में राष्ट्र की उन्नति केलिए सहायक सिद्ध होगा।

3.8 भौगोलिक सीमा

राष्ट्र संकल्पना में भूमि यानि भौगोलिक सीमा की प्रधानता पर पहले अध्याय में प्रकाश डाला गया है। भूगोल के बिना राष्ट्र की रूपायिति

1. श्री. बदरीनाथ भट्ट - ग्रेजुएट की नौकरी, सरस्वती कहानी खंड, (सं) हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, जनुवरी 1905, पृ. 244
2. वही

नहीं हो सकती। लेकिन यह भी ध्यान देने की बात है कि भौगोलिक सीमा राष्ट्र संकल्पना की अंतिम कडी मात्र है। विभिन्न छोटे छोटे प्रदेशों में विभक्त भारत में पहले एक एकीकृत भूमि की कमी महसूस हो रही थी। एक केन्द्रीकृत शासन व्यवस्था की ज़रूरत समझने वाले भारतवासियाँ एक सुनिश्चित भौगोलिक सीमा केलिए भी काम करने लगे। उन्हें मालूम हुआ कि सन् 1857 की लडाई से लेकर हम अपनी भूमि केलिए लड रहे थे। हमारेलिए 'स्वदेश' का मतलब निजी शासकीय भूमि मात्र थी। उस समय पूरे भारत केलिए नहीं बल्कि 'पंजाब', 'महाराष्ट्र', 'मलबार' आदि अलग अलग देशों केलिए हम लड रहे थे। उस समय हुए सभी आन्दोलनों की पराजय का कारण भी यहीं था। यह राष्ट्र कोलिए बाधा बन गया था। उदाहरण केलिए 'सिक्ख सरदार' कहानी में मात्र पंजाब केलिए लडनेवाले सिक्खों को हम देख सकते हैं।

जब से हम पूरे भारत को 'स्वदेश' के रूप में मानने लगे, तब से भौगोलिक सीमा भी सुनिश्चित होने लगी। श्रीमती विपुलादेवी की कहानी 'कायर' में एक विदेशी कर्नल के अपमान का पात्र बनने वाला मानसिंह से उसकी ही छाया पूछ रही है, "क्या सोचकर तूने उस अपमान को सह लिया - वह अपमान जो न केवल तेरा था, वरन तेरे साथ तेरी उस वीरप्रसविनी जननी जन्मबूमि का भी था जो हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक फैली हुई है?"[1] यहाँ हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक फैली हुई भौगोलिक सीमा को भारत की सीमा सुनिश्चित की गई ।

---

1. श्रीमती विपुलादेवी - कायर', सरस्वती, कहानी - खंड, जनवरी 1905, पृ. 344

निष्कर्ष

औपनिवेशिक शक्तियों ने जब भारत की सभी क्षेत्रों में अपना अधिकार जमा दिया तब भारतीय जनता गुलामी महसूस करने लगी। शिक्षा प्रशासन, भाषा, विधि, कानून, न्यायालय, व्यापार, बाज़ार आदि सब के सब अंग्रेज़ों के कब्जे में आने लगे। भारतीयों को उनके हिसाब से चलने वाले एक 'रोबोर्ट' मात्र बनाने में वे सफल हुए । भारत से 'भारतीयता' नष्ट होने वाली यह स्थिति खतम करने केलिए गुलामी से पीडित स्वाभिमान जनता ने अपने देश के स्वशासन की माँग की। भारत की राजनैतिक संकल्पना की इस शुरुआत ने देश का बाहरी ढाँचा दृढ़ बनाने में सहायता प्रदान की। सबको प्रतिष्ठित करने वाली भारत की राजनैतिक संकल्पना बाद में सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर की उन्नति का कारण बना। भारत की इस राजनैतिक संकल्पना से लोगों ने यह महसूस किया कि सच्ची स्वतंत्रता वही है, जहाँ सबका स्वातंत्र्य सुरक्षित रह सके और सबको अपनी उन्नति का समान अधिकार है। व्यक्ति-व्यक्ति से शुरु होने वाला यह स्वातंत्र्य खाने-पीने, वस्त्र पहनने से लेकर समान आर्थिक सुविधाओं पर भी निर्भर है। अतः यह संविधान में सभी नागरिक को समान अधिकार देता है। भारत का यह राजनैतिक रूप भारत की राष्ट्र संकल्पना का पहला पडाव था।

❖ ❖ ❖

चौथा अध्याय

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सामाजिक संकल्पना

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सामाजिक संकल्पना

भूमिका

भारत की राष्ट्र संकल्पना में एक ऐसी समाज की ज़रूरत थी जहाँ सभी मानव वर्ग, वर्ण, धर्म, जाति के भेद-भाव से मुक्त रहें। एक सुसंस्कृत समाज में ही समन्वय का भाव पैदा हो जाएगा। इस सामाजिक समन्वय से देश का समन्वय आसान हो जाएगा। यह जानने वाले नवजागरणकालीन कहानिकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज की हर धड़कन उजागर करने की कोशिश की।

4.1 व्यक्ति विकास

समाज का विकास व्यक्ति से शुरु होता है। भौतिक और आध्यात्मिक स्तर पर व्यक्ति की उन्नति समाज की सकारात्म गति केलिए अनिवार्य है। इसलिए समाज का स्वरूप व्यक्ति-सामर्थ्य पर निर्भर है। अतः व्यक्ति समाज का एक हिस्सा होकर उसका सृष्टा और सृष्टि की भूमिका निभाता है।

अज्ञेय की कहानी 'शत्रु' में यह दिखाने की कोशिश की गई है कि समाज से विच्छिन्न व्यक्ति आत्म केन्द्रित हो जाता है। यह व्यक्ति और समाज केलिए हानिकारक बनेगा। इस कहानी में संसार का पुनर्निर्माण करने केलिए भगवान ज्ञान को अपना प्रतिनिधि बनाकर संसार में भेजता है। ज्ञान मनुष्य

के सबसे बडे 'शत्रु' के रूप में धर्म को पाता है। फिर पता चलता है कि धर्म नहीं समाज सबसे बड़ा शत्रु है। समाज के बाद विदेशी और विदेशियों के बाद भूख को मनुष्य के सबसे बड़ा शत्रु समझा जाता है। इसप्रकार एक के बाद एक को शत्रु के रूप में पाकर लड़ने की तैयारी की जाने लगी है। लेकिन अंत में पराजित होकर व्यक्ति जब आत्महत्या केलिए तैयार हो जाता है, तब उसका प्रतिबिम्ब उससे पूछता है, "बस अपने आप से लड चुके?... जीवन की सबसे बडी कठिनाई यही है कि हम निरन्तर आसानी की ओर आकृष्ट होते है।"[1] यहाँ लेखक ने मानव के व्यक्ति विकास की ओर संकेत किया है। आसान कार्यों के पीछे भागने वाला मानव अपनी क्षमता और बुद्धि का इस्तेमाल न करके पुरानी धारणाओं के अनुसरण करने में इच्छुक है। अपने आप में विश्वास और अपने प्रति प्रेम करने से व्यक्ति विकास होगा। तभी व्यक्ति अपना अधिकार के प्रति जागृत होगा।

एक ईमान्दार व्यक्ति ही समाज और राष्ट्र केलिए उपयोगी होगा। सत्य के बल पर चलने से असत्य की हार होगी। अपना वचन और प्रतिज्ञा का पालन करके दूसरों के हृदय जीतने का उदाहरण मिलता है बंगमहिला की कहानी 'अपूर्व प्रतिज्ञा पालन' कहानी में। अंग्रेज़ों द्वारा फांसी की सज़ा मिलने वाला नायक बिलकुल निडर रहता है, फिर भी अपनी माँ से मिलने केलिए तडपता है। उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अंग्रेज़ी सैनिक उसे माँ से मिलने और जल्दी वापस आने का वादा लेकर छोड देता है। अपनी

---

1. अज्ञेय - शत्रु - छाडा हुआ रास्ता कहानी संग्रह, पृ. 207

रोगिणी माँ से मिलकर वह शीघ्र वापस आता है और फाँसी की सज़ा स्वीकारने केलिए तैयार हो जाता है। इससे सैनिक उसके व्यक्तित्व से आकर्षित होकर उसे छोड देते हैं। तब सेनापति ने अपने साथियों से कहा - "खुदा की मेहरबानी से लेफ्टिनेंट गवर्नर साहिब ने मेरे कहने से इसकी जाँ बखसी की। नहीं तो इस बेगुनाह की जान लेनी बडी बेइंसाफी की बात होती।"[1] इसप्रकार एक ईमान्दार लडके के प्रभाव से सेनापति में भी परिवर्तन आने लगा।

प्रेमचन्द की कहानी 'घमंड का पुतला' में भी व्यक्ति शुद्धि केलिए घमंड छोड़ने और समाज के अन्य जीव-जन्तुओं के साथ समन्वय से रहने का आह्वान दिया जाता है।

हर एक क्षेत्र में व्यक्ति को अपनी ईमान्दारी प्रकट करना ज़रूरी है। नौकरी के क्षेत्र में भी यह ज़रूरी है। नौकरी के क्षेत्र में ईमान्दार होने से राष्ट्र की प्रशासनिक दृढता और विकास आसान होगा। और समाज और राष्ट्र के विकास केलिए सहायक बनेगा। सुदर्शन की कहानी 'प्रलय की रात्री' इस प्रकार की कहानी है। इसक नायक साधुराम अपनी नौकरी में पक्का और ईमान्दार व्यक्ति था। उसकी ही वजह से सारे प्रशासनिक कार्यक्रम ठीक से चलते थे। साधुराम के बारे में उसके बोस यों कहते हैं, "... दस से चार बजे तक सिर नीचा किया वह बराबर अपने काम में लगा रहता था।... मैंने उसे कभी किसी से लड़ते झगडते नहीं देखा।... वेतन थोडा होने पर भी उसके

1. बंगमहिला - अपूर्व प्रतिज्ञा पालन, बंगमहिला रचना समग्र, (सं) अस्मिता तिवारी, पृ. 89

वस्त्र दूसरों से साफ होते थे और मुख मण्डल खिला हुआ फूल। मैंने उसे कभी उदास नहीं देखा।"[1]

इसी प्रकार सुदर्शन की कहानी 'सच का सौदा' और प्रेमचन्द की कहानी 'नमक का दारोगा' भी नौकरी की ईमान्दारी की ओर इशारा करती है। 'नमक का दारोगा' में मुशी वंशीधर का पिता आर्थिक स्थिति संकट से बचने केलिए बडी आय का काम ढूँढने का सलाह देता है और नौकरी में ईमान्दारी करने का उपदेश भी देता है। वह कहता है - "वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती हैं, गरजवाले आदमी के साथ कठोरता करने में लाभ ही लाभ है। लेकिन बेगरज को दाँव पर पाना ज़रा कठिन है।"[2] बाद में वंशीधर जब नमक का दारोगा बन जाता है और ईमान्दारी से नौकरी करता है, तब रिश्वत देने केलिए तैयार होने वाला आलोपदीन से वह कहता है - "एक हज़ार नहीं, एक लाख भी मुझे सच्चे मार्ग से नहीं हटा सकते।"[3]

4.1.1 शिक्षा का महत्व

शिक्षा हर व्यक्ति को उन्नत बना देता है। शिक्षा के बल पर व्यक्ति तर्कशील बन जाता है और अपनी अस्मिता के प्रति सजग बन जाता है। अंधविश्वासों और अनाचारों के विरुद्ध संघर्ष करने केलिए शिक्षा सहायक बनती है। नवजागरणकालीन कहानीकारों ने व्यक्ति विकास में शिक्षा की

1. सुदर्शन - प्रलय की रात्रि, सरस्वती कहानी खण्ड (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 226-227
2. प्रेमचन्द - नमक का दारोगगा, प्रेमचन्द्र रचनावली - 11 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 298
3. वही - पृ. 300

अहम भूमिका समझकर अपनी कहानियों में उसे सही ढंग से उतार लिया था।

व्यक्ति का जागरण राष्ट्र का जागरण है, यह शिक्षा के माध्यम से आसान होगा। ज्वालादत्त शर्मा की कहानी 'मिलन' में समाज के विभिन्न स्तर के व्यक्तियाँ शिक्षित होकर एक साथ सामाजिक उन्नति के लिए काम करते दिखाई देते थे। एक तो गरीब बाप का लडका 'रामानंद' है तो दूसरी पंडित देवधर इंजिनीयर की पुत्री 'मोहिनी' है। दोनों की आर्थिक स्थिति में बहुत अंतर है, फिर भी उच्च शिक्षा के माध्यम से दोनों समाज में बराबर बन जाते हैं। बचपन उनकी पढाई और लिखाई एक साथ हुई। बाद में वे अलग हो गए। रामानन्द गरीब होने के कारण मोहिनी के पिता मोहिनी और रामानन्द की दोस्ती को पसन्द नहीं करते थे। रामानन्द बी. ए. के बाद सिविल सर्वीस का परीक्षा पास होकर इलाहाबाद का कलक्टर बना। मोहिनी हिन्दू-गर्ल्स कॉलेज की प्रिंसिपल बनी। शिक्षा दोनों को उन्नत बनाने के साथ साथ अमीर-गरीब के भेद-भाव मिटाने में सहायता प्रदान करती है और समाज में बराबर बन जाते हैं।

शिक्षा की कमी से आने वाले दुष्परिणामों को हास्य-व्यंग्य से प्रस्तुत करती है 'ग्रेजुएट की नौकरी' नामक कहानी। इस कहानी के राजा को अंग्रेज़ी में चिट्ठियाँ लिखने केलिए एक ग्रेजुएट की ज़रूरत थी। ग्रेजुएट के आने से राजा कहता है कि उसको बस लिखने वाला चाहिए, पढ़ने वाला नहीं। आश्चर्य से ग्रेजुएट राजा को समझाने की कोशिश करता है, लेकिन

हार जाता है। वह ऐसे अशिक्षितों पर व्यंग्य करने केलिए एक गधा और उल्लू को लेकर आता है और कहता है - "...अपना अनुभव बढाने, उनसे बातचीत करने और उनके साथ काम करने का ढंग सीखने केलिए मैं इन दोनों जीवों को ले आया हूँ, क्योंकि जिस तरह एक और एक दो होते है, उसी तरह मुझे पूरा विश्वास है कि बिना इनकी संगति किये आपके यहाँ काम करने का शऊर मुझे कदापि नहीं आवेगा।"[1] राजा परिहास के ये वचन नहीं समझा । यहाँ लेखक आशिक्षा को देश का शाप दिखाना चाहते हैं। दो मित्रों की दोस्ती की कहानी के माध्यम से शिक्षा का महत्व प्रस्तुत करती है जैनेन्द्र कुमार की कहानी 'आतिथ्य' में प्रसाद और उसके मित्र एक साथ कॉलेज में पढ़ने थे। लेकिन विभिन्न कारणों से प्रसाद अपनी पढ़ाई छोड देता है। लेकिन मित्र अपनी पढ़ाई को आगे बढ़ाके ज़िन्दगी में सफल बन जाता है और अपना एक डायरी फार्म चलाता है। प्रसाद इसके बारे में यों कहता है - "कुछ आँधी की झोंक में, कुछ दिल दिमाग की झोंक में, कुछ समझकर और कुछ शर्माशर्मी में मैं तो कॉलेज छोड बैठा। मित्र वही रहे।"[2] बाद में प्रसाद के जीवन में आयी सभी आर्थिक कठिनाइयों का कारण भी यह रहा। इसलिए उसको पश्चाताप से जीवन बिताना पड़ा ।

उसी प्रकार उच्च शिक्षा का महत्व दिखाने वाली अनेक कहानियाँ नवजागरण काल में प्राप्त हैं। पृथ्वीनाथ शर्मा की कहानी 'रज्जू का सौदा' की

---

1. बदरीनाथ भट्ट - ग्रेजुएट की नौकरी, सरस्वती कहानी खण्ड, (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 251
2. जैनेन्द्र - अतित्थ्य, वही, पृ 262

नायिका 'रत्ना', गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरिश' की कहानी 'देश-द्रोही' का 'राघवशरण', छबीले लाल गोस्वामी की कहानी 'विमाता' का 'विश्वभूषण' आदि इसी कोटि में आनेवाली कहानियाँ हैं।

4.2 पारिवारिक दृढ़ता

समाज व्यक्तियों से निर्मित है। व्यक्ति विकास की नींव डाली जाती है परिवार में। पारिवारिक दृढ़ता अनेक परिवारों से निर्मित समाज की बुनियाद बनती है। समन्वय की भावना की पहली कडी परिवार से शुरु होती है। माँ-बाप, बच्चे, भाई-बहन, बेटा-बेटी, विमाता, साँस-बहु जैसे संबंधों से परिवार को सुदृढ़ बनाना हर व्यक्ति का दायित्व है। परिवार की शान्ति देश की शान्ति का कारण बन जाती है। स्वस्थ, दृढ़ परिवार से स्वस्थ मन और इससे सुदृढ़ राष्ट्र की संकल्पना आसान होगी। इस संदर्भ में भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. अब्दुलकलाम के शब्द याद आते हैं - "When there is beauty in the character, harmony in the home; when there is harmony in the home an order in the nation, when there is an order in the nation, there is peace in the world."[1]

4.2.1 माता- पिता - संतान

उत्तरदायित्व हीन व्यक्ति बुद्धिमान होने पर भी हार जाता है। स्वस्थ परिवार समेत रहकर भी परिवार के साथ अन्याय करने वाला हमेशा पराजित

---

1. डॉ. ए.पी.जे अब्दुल कलम - स्पीचस गिवण इन ब्रिटिश पार्लमेंट

हो जाता है। विनोदशंकर व्यास की कहानी 'सुख' का नायक 'श्यामलाल' इसका उदाहरण है। अपनी पत्नी और दो वर्ष के बच्चे के साथ वह नीच व्यवहार करता है। लेकिन समाज में और अपने मित्रों के साथ खुशियाँ बाँटता है। तंग आकर पत्नी बच्चे को लेकर घर से निकलता है। इससे और खुश बनने वाला श्यामलाल खूब घूमने और शराब पीने शुरु करता है। लेकिन उसे चैन नहीं मिलता। अंत में वह एक स्वामीजी के चरणों में गिरकर दीक्षा लेने की तैयारी कर लेता है। तब उसकी पत्नी आकर स्वामीजी से कहती है, "क्या संसार भर को भिक्षुक बनाकर आप पुण्य कर रहे हैं? कायर मनुष्य जो स्वयं जिम्मेदारी उठाने में असमर्थ हैं, इनके बोझ आप दूसरों से उठवाना चाहते हैं।"[1] आगे श्यामलाल अपने परिवार के साथ-दुख बाँटकर जीवन बिताता है। इस प्रकार वह समाज केलिए भी हितकारी बन जाता है।

4.2.2 पति-पत्नी

जैनेन्द्र की कहानी 'पत्नी' में पत्नी के साथ अपना दायित्व न निभाने वाला पति प्राप्त है। इसका नायक 'कालिकाचरण' सिर्फ देश और समाज की चिन्ता में रहता है। अपनी पत्नी सुख-दुःख से बहुत दूर है। उसकी उपेक्षा भी करता है। दुखी, उदास और अकेली पत्नी का पता न होने वाले व्यक्ति को समाज से कोई सम्मान नहीं मिलेगा। इसलिए देश केलिए समर्पित रहने के बावजूद कालिकाचरण से पाठकों नाराज़ हो जाते हैं।

1. विनोदशंकर व्यास - सुख, सरस्वती कहानी खण्ड, (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 243

4.2.3 भाई-भाई

प्रेमचन्द की कहानी 'दो-भाई' में दो भाइयों के गहरे रिश्ते और उसे टूटने से होने वाले दुष्परिणाम प्रस्तुत है। बड़ा भाई 'केदार' और छोटा भाई 'माधव' के बीच इतना गहरा रिश्ता था कि दोनों एक ही पालथी पर बैठते थे और एक ही थाली में खाते थे। लेकिन शादी के बाद उन्हें एक घर में और एक गाँव में रहना कठिन हो गया। जब 'माधव' की आर्थिक स्थिति दयनीय थी और अपनी बेटी की शादी केलिए पैसे की ज़रूरत थी तो बडे भैय्या से वह सहायता माँगता है। बडे भाई 'केदार' के पास पैसा होते हुए भी उन्होंने अपनी चाल से उन दोनों का घर अपने नाम पर करवाता है और पैसा देता है। इस तरह भाई-भाई का वह रिश्ता हमेशा केलिए टूट जाता है। यहाँ प्रेमचन्द यह स्पष्ट करते हैं कि एक ही परिवार के बीच की रिश्तों को सुरक्षित न रखनेवाले देश के लोगों के बीच भाइचारे का रिश्ता कैसे निभायेंगे।

4.2.4 भाई-बहन

भाई-बहन का रिश्ता प्रस्तुत करने वाली कहानी है विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की 'रक्षाबन्धन'। अपने से दूर चले गये भैय्या की याद में रहनेवाली बहन और बहन को ढूँढने वाला भाई की कहानी है यह। 'रक्षाबन्धन' की प्रथा से अंत में दोनों का मिलन होता है।

4.2.5 विमाता

माँ परिवार क ऐश्वर्य है। माँ के बिना परिवार को दृढ़ बनाने की ज़िम्मेदारी पिता पर है। लेकिन छबीले लाल गोस्वामी की कहानी 'विमाता' का 'राममोहन' इसके विरुद्ध है। वह अपनी ज़िम्मेदारी और सत्रह वर्ष के अपने पुत्र विश्वबूषण के बारे में न चिंतित होकर एक युव सुन्दरी 'चमेली' से विवाह करता है। चमेली के दुर्व्यवहार के कारण विश्वभूषण अपना घर छोड़ देता है। दस वर्ष के बाद विश्वभूषण के पिता को अपनी पत्नी-चमेली की विष-पान से मृत्यु होने के जुर्म में गिरफ्तार किया गया। उस समय विश्वभूषण एक विख्यात वकील बना था और उसे बचाता है। इस प्रकार बाप-बेटे का मिलन होता है। इसमें बाप-बेटे के अटूट संबंध का पर्दाफाश हुआ है।

4.2.6 माँ- बेटा

वृद्धावस्था में माता-पिता को अकेले छोडने वाले बच्चों के सामने एक आदर्श पुत्र के रूप में आता है बंगमहिला की कहानी 'अपूर्व प्रतिज्ञा पालन' का नायक। फाँसी की सज़ा देते वक्त भी निडर और दृढ़ रहने वाला उस युवक का हृदय अपनी वृद्धा माँ की याद में दुर्बल बन जाता है। मरने से पहले एक बार माँ से मिलने केलिए उसका दिल तडपता है। वह सेनापति से कहता है - "....मेरे लिए मौत बडे दुख की चीज़ नहीं है। लेकिन एक दुख-...एक दुखिनी माता को छोडकर मेरे और कोई नहीं है। यदि मैं उनको एक बार देख लूँ तो खुशी से मर सकूँगा।"[1] माँ के प्रति ममता और प्यार

1. बंगमहिला - अपूर्व प्रतिज्ञा पालन, बंगमहिला रचना समग्र, (सं) अस्मिता तिवारी, पृ.86-87

देखकर सैनिक उसे माँ से मिलने की इजाज़त देता है। माँ-बेटे के अटूट रिश्ते का सच्चा उदाहरण है यह कहानी।

4.3 समाज

व्यक्ति विकास से पारिवरिक शिथिलता दूर हो जाएगी और उससे सामाजिक विकास भी हो जाएगी। सुस्थिर और गतिमय समाज केलिए समाज के अन्य घटकों में अवस्थिति होनी चाहिए। उसकेलिए जाति, धर्म, लिंग, वर्ण, रंग, वर्ग आदि के बीच के भेद-भाव को समाप्त करना है। इसके साथ समाजिक व्यवस्थाओं पर भी बदलाव आना ज़रूरी है।

4.3.1 स्त्री की उन्नति

स्त्री हमेशा शोषण का शिकार होती है। नवजागरणकाल से पहले स्त्रियाँ एक ऐसे अंधकार में रहती थीं, जहाँ अपने मत प्रकट करने, शिक्षित होने या अपने घऱ से बाहर निकलने तक का अधिकार न था। सभी क्षेत्रों में स्त्रियों को अबला समझकर पीछे हटा दिया देता था। इसलिए ही सामाजिक उन्नति में सबसे प्रमुख आधी-आबादी स्त्रियों की उन्नति थी।

4.3.1.1 अनमेल विवाह

नवजागरणकालीन सामाजिक कुरीतियों में अनमेल विवाह प्रमुख था। चोटी उम्र वाली स्त्री के साथ उसके दुगुणा या तिगुणा उम्र वाले पुरुष से विवाह होने की प्रक्रिया है यह। इससे बूढे पति की सेवा और देख-भाल

करने केलिए छोटी उम्र वाली पत्नी प्राप्त होगी। यहाँ स्त्री की अस्मिता और स्वातंत्र्य का पूरा हनन हो रहा है। गिरिजादत्त वाजपेयी की कहानी 'पण्डित और पण्डितानी' अनमेल विवाह के विरोध करती है। पैंतालीन वर्ष की उम्र वाला पण्डित और बीस वर्ष की उम्र वाली उनकी पत्नी की कहानी है यह। हास्य और व्यंग्य द्वारा अनमेल विवाह के दोष को कहानीकार ने प्रस्तुत किया। पच्चीस वर्ष की छोटी पत्नी की अर्थहीन इच्छाओं के सामने अधिक उम्रवाले पति के मानसिक उत्पीडन और विवशता इसमें पेश है। अंग्रेज़ी-संसकृत आदि भाषाओं में ज्ञानी पण्डित एक दिन विश्व-विख्यात कवि कालिदास की कविता चातुर्य पर समीक्षा लिख रहे थे, तभी किसी अखबार में तोते का विज्ञापन देखकर पण्डितानी तोते खरीद लाने की ज़िद करती है। यह फालतू ज़िद तोड नहीं पाती है। क्योंकि पण्डितानी कहती है - "ओह, मैं किसी काठ के पुतले को ब्याही गयी हूँ।"[1] इसप्रकार व्यंग्य रूप से एक बडे सामाजिक प्रश्न की ओर इशारा किया है लेखक ने।

जैनेन्द्र की कहानी 'मास्टरजी' में भी अनमेल विवाह का विरोध अभिव्यक्त है। अपने से आधी उम्र की पत्नी के प्रति मास्टरजी का श्रृगारभाव नहीं वात्सल्य भाव है। क्योंकि उनके विवाह के समय पत्नी बालिका थी और मास्टर युवक थे। उनकी पत्नी चाहती है कि वे उसके साथ पति जैसा व्यवहार करें। पत्नी केलिए खाने-पीने और पहनने केलिए सबकुछ लाने वाला पति उसके जैविक मांग की पूर्ति करने में असमर्थ बन जाते हैं. इसलिए

---

1. गिरिराज वाजपेयी - पण्डित और पण्डितजी, सरस्वती, पृ. 189

पत्नी अपने समवयस्क नौकर के साथ भाग जाती है। प्रेमचन्द की कहानी 'नरक का मार्ग' में अनमेल विवाह के दुष्परिणामों को खुले ढ़ंग से प्रस्तुत हुआ है। बूढ़े पति के मरने के बाद पत्नी को विधवा बनकर जीना पडता है। इस कहानी की नायिका उदासीन है। वह हमेशा बूढ़े पति के व्यवहार से परेशान है। उससे बात न करने वाला, उसपर संदेह रखने वाला, उसको किसी से बात करने का इजाज़त न देने वाला, कहीं जाने की स्वतंत्रता न देने वाला पति से घृणा भी करती है। बाद में निमोनिया से जब पति की मृत्यु होती है, तब उसे खुशी होती है। इसप्रकार कहानी के अंत में नायिका के माध्यम से प्रेमचन्द उपदेश देते हैं - "अब भी अपनी बालिकाओं केलिए मत देखो धन, मत देखो जायदद, मत देखो कुलीनता, केवल वर देखो। अगर उसेकिलए जोड का वर नहीं पा सकते तो लडकी को कुंवारी रख छोडो, जहर देकर मार डालो, गला घोंट डालो, पर किसी बूढ़े कूसट से मत ब्याहो।"[1]

4.3.1.2 विधवाओं की उन्नति

पति के मरने के बाद विधवा होने वाले स्त्री को समाज बूरी नज़र से देखता आ रहा है। रंगीले कपडे और आभूषण पहनने या घर से बाहर निकलने तक की अनुमति उसको नहीं है। घर के अंधकार में रहने वाली इन विधवाओं की उन्नति भी नवजागरणकालीन कहानियों का मुख्य विषय बनी है। विधवाओं की उन्नति का एक सशक्त उदाहरण है पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र

1. प्रेमचन्द - नरक का मार्ग, प्रेमचन्द रचनावली - 13, (सं) राम आनंद, पृ. 166

की कहानी, 'मेरी माँ'। जहाँ स्त्रियाँ खुद अपने आपको विधवा समझकर सबसे दूर चली जाती हैं, वहाँ अपने आपको विधवा कहना पसन्द न करने वाली एक स्त्री है इस कहानी की 'भीम' की माँ। बीम माँ के बारे में कहता है - "मेरी माँ विधवा है, मगर आप यह समझे की उक्त बात मैं फुसफुसाकर कह रहा हूँ। माँ के डर से।... क्योंकि वह बड़भागिनी अपने को विधवा नहीं समझती। उसके आगे यदि युधिष्ठिर भी उसे विधवा कहें, तो वह उनका मुँह नोच ले। पति के मर जाने पर स्त्री को विधवा या अबला कहना वह स्त्रीत्व या मातृत्व का अपमान समझती है। वह विधवा नहीं, वीरेन्द्र की माँ है.... वह अबला नहीं, भीम की माँ - माँ है।"1 स्त्री की उन्नति केलिए यहाँ स्त्री ही आगे आती है। यह है स्त्री जागरण असल में जागृत स्त्री दूसरी स्त्री को समझती है। प्रेमचन्द की कहानी 'नरक का मार्ग' की नायिका भी विधवा होकर भी विधवाओं के जैसा रहना नहीं चाहती है।

ज्वालादत्त शर्मा की कहानी, 'विधवा' स्त्री संघर्ष का उदाहरण है। राधाचरण की मृत्यु के बाद ससुराल में रहने वाली उसकी विधवा पार्वती की कथा है यह । पढी-लिखी होने के कारण ससुराल वाले उसे और अधिक तंग करते हैं। बाद में वह एक स्कूल की प्रिंसिपल बन जाती है, जहाँ उसका ससुर चपरासी की नौकरी केलिए आवेदन देता है। पार्वती ने चपरासी की नौकरी देने के बजाय उससे अपने साथ रहने का निमन्त्रण दिया। लेकिन ससुर ने नहीं माना। इसके बारे में लेखक ने यों लिखा - "आत्मग्लानि की तीव्र अग्नि

---

1. पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र - मेरी माँ, पृ. 10

में वह अन्दर-ही-अन्दर जल रहा था।"[1] उसी प्रकार जगदीश झा 'विमल' की कहानी 'विधवा' में विधवाओं को चुडैल समझकर बाहर निकाला जाता है। अपने बडे भाई के मरने के बाद घरवाले विधवा भाभी के बारे में कहते हैं - "तुम्हारी विधवा भाभी अच्छी नहीं है। उसकी नज़र लग जाती है। उसी की कृपा से तुम्हारा भाई दुनिया से चलता बना।"[2] इस प्रकार समाज में विधवाओं से संबंधित गलत धारणाएँ प्रस्तुत करती है यह कहानी।

कमला देवी चौधरी की कहानी 'करुणा' विधवा विवाह का समर्थन करती है। इसकी नायिका विधवा होने के नाते किसी भी शुभ कार्य में भाग लेने से वंचित रह जाती थी। उसे अशुभ माना जाता है। जब उसका देवर आई. सी.एस की परीक्षा उत्तीर्ण कर देश लौट रहा था तब घर के सभी सदस्य उसके स्वागत केलिए स्टेशन पर जाते हैं, पर उसे आदेश दिया जाता है। लल्ला के घर में आने पर कही पहले तुझ कुलक्षिणी पर ही दृष्टि न पड जाये।"[3] इस प्रकार की दुरवस्था से बचने का एक ही मार्ग है 'विवाह। वह सोचती है, "रात-दिन-बहने वाले इन आँसुओं में कोई सार नहीं रहा गया है। 'क्या करूँ विवाह एक ही उपाय है किन्तु यह उपाय मेरे बस का नहीं।"[4] अतः लेखिका यह बताने की कोशिश करती हैं कि 'पुनर्विवाह' ही विधवाओं की उन्नति का पहला पडाव है।

विधवाओं को पीडित करने वाली उन धार्मिक प्रथाओं के विरुद्ध

1. ज्वालादत्त शर्मा - विधवा, पृ. 20
2. जगदीश झा विमर - विधवा, सर्स्वती कहानी खण्ड, पृ. 252
3. कमला देवी चौधरी- करुणा, सरस्वती कहानी खण्ड, पृ. 300
4. करुणा देवी चौधरी - करुणा, सरस्वती कहानी खण्ड, पृ. 301

लिखी गयी कहानी है 'ममता'। जयशंकर प्रसाद की इस कहानी की नायिका है रोहतास दुर्गपति के मंत्री चूडामणि की पुत्री 'ममता'। ममता युवती थी, लेकिन विधवा भी। मंत्री-पुत्री होने पर भी विधवा होने के कारण वह दुखी थी। इसका कारण प्रसाद यों बताते हैं - "हिन्दु-विधवा संसार में सबसे तुच्छ निराश्रय प्राणी है - तब उसकी विडंबना का कहाँ अंत था?"[1] यहाँ लेखक हिन्दू धर्म के अनाचारों की कटु आलोचना करते हैं।

4.3.1.3 पर्दा प्रथा

स्त्री की उन्नति केलिए समाज में व्याप्त सारी कुरीतियों को तोड़ना नवजागरणकालीन कहानिकारों के मुख्य लक्ष्य थे। स्त्री को 'आदर्श नारी' संज्ञा में बाँधकर उसका स्वातंत्र्य नष्ट करने वाली एक प्रणाली थी पर्दा प्रथा। इसके अनुसार स्त्री को बाहर निकलने तक का स्वातंत्र्य नहीं था। अपनी अस्मिता, सोच आदि पुरुष वर्चस्ववादी समाज में बन्द करके रखने वाली इस प्रथा के खुलकर विरोध प्रकट किया है प्रेमचन्द की कहानी 'दुराशा' ने। कहानी का नायक दयाशंकर पुराने रीति-रिवाज़ों अनाचारों और अंधविश्वास पर विश्वास रखता था। इसलिए उसने अपनी पत्नी 'सेवती' को भी पर्दा के पीछे रखना चाहा।

सेवती' को घर से बाहर निकलने और पुरुषों से बातें करने की इजाज़त नहीं थी। एक दिन जब दयाशंकर अपने मित्रों को दावत केलिए घर में लाता है, तब पत्नी कुछ खाना न बनाके बैठी थी। इसका कारण यह था

1. जयशंकर प्रसाद - ममता, प्रतिनिधि कहानियाँ, राजकमल प्रकाशन, पृ. 31

कि घर में दियासलाई नहीं थी। अपमानित दयाशंकर दियासलाई का इन्दज़ाम न करने का कारण पूछा जाता है तो सेवती जवाब देती है - "तुम्हारे परदे ने मुझे पंगु बना दिया है। कोई मेरा गला भी घोंट जाय तो फरियाद नहीं कर सकती।... बाहर के सैकड़ों आदमी जमा थे दूसरी ओर बंगाली बाबू रहते हैं। उनके घर की स्त्रियाँ किसी संबन्धी से मिलने गयी हैं। ... बाज़ार जाने से मुझे तुम गली-गली घूमनेवाली कहते और गला काटने पर उतारू हो जाते। तुमने मुझे इतनी स्वतंत्रता नहीं दी।"[1] इस प्रकार एक मामूली 'दियासलाई' के माध्यम से पर्दाप्रथा जैसे कूरीती के खिलाफ प्रेमचन्द ने आवाज़ उठायी है। ध्यान देने वाली बात यह है कि स्त्री को दूसरों से मिलने का अधिकार नहीं था, लेकिन उनके हाथों से बनाया गया खाना सब लोग खा सकते हैं। दावत केलिए दोस्तों को आमंत्रित करने वाला दयाशंकर भी यही चाहता था। लेकिन कहानी के अंत में दयाशंकर बदल जाता है।

4.3.1.4 वेश्या जीवन

स्त्री को हमेशा चुनौतियों का सामने करना पड़ता है। अपनी ज़िन्दगी को आगे बढ़ाने केलिए स्त्री द्वारा करने वाले सभी कार्य समाज से उसे बाहर निकालने का कारण बन जाता है। उसी काम करने वाले पुरुष इस कोटि के बाहर है। वेश्या बनने वाली स्त्री भी इसका उदाहरण है। स्त्री का उपयोग करने वाला पुरुष हमेशा ईश्वर का प्रतीक है तो स्त्री 'सिर्फ वेश्या' मात्र है।

---

1. प्रेमचन्द - दुराशा, प्रेमचन्द रचनावली - 12, पृ. 358-359

विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' की कहानी 'फाँसी' उसी तरह की कहानी है। एक वेश्या से मित्रता करने वाले दो दोस्तों की कहानी है यह। अमीर 'रेवतीशंकर' और मध्यम श्रेणी के पंडित 'कामताप्रसाद'। दोनों सुन्दरबाई नामक वेश्या के पास जाते हैं। वेश्याओं के बारे में कामताप्रसाद ने यों सोचा था - "वेश्या का सौन्दर्य तो उस पुष्प के समान है, जो देखने में तो बडा सुन्दर है, परन्तु नीरस तथा निर्गन्ध है।"[1] उन्होंने वेश्याओं के बारे में यह भी सेचा था कि वे सिर्फ धनवानों पर ही आकर्षित होते हैं। लेकिन सुन्दरबाई धनवान रेवतीशंकर पर नहीं बल्कि कामताप्रसाद पर आकर्षित होती है वह कहती है - "हम भी आदमी पहचनते हैं। हर एक आदमी से रण्डीपन का व्यवहार काम नहीं देता।" वेश्या भी प्रेम करना चाहती है, परिवार समेत रहना चाहती है। लेकिन जिन परिस्थितियाँ उन्हें रण्डीपन करने को प्रेरित करती हैं, उनसे बचाना मुश्किल है । इसलिए सुन्दरबाई रेवतीशंकर से कहती है, "आपका जोर हमारे शरीर पर है, हृदय पर नहीं।"[2] वेश्या कहकर समाज मात्र स्त्रियों पर ही दोष आरोप लगाते रहते हैं। लेकिन पुरुष समाज में सपरिवार सुखी और सम्मानित रहते हैं।

यहां लेखक वेश्याओं की उन्नति करने की कोशिश करते हैं। साथ ही समाज को यह दिखाते हैं कि हमें वेश्याओं को नहीं, बल्कि वेश्या बनाने वाली उन परिस्थितियों को भ्रष्ट करना चाहिए।

---

1. फाँसी - कौशिक https://www.hindisamay.com/content/447/1/2 रचनाकार - विश्वंभरनाथ - शर्मा - कौशिक की- कहानी-फाँसी.CSPX
2. वही

4.3.1.5 दहेज-प्रथा

जिस प्रकार समाज की उन्नति परिवार से शुरु होती है, उसी प्रकार स्त्री की उन्नति भी सबसे पहले परिवार से ही होनी चाहिए। परिवार में सम्मान या आदर न मिलने वाले को समाज का सामना वह नहीं कर पाएगा। इसलिए परिवार में स्त्री की उन्नति केलिए उन कुरीतियों को मिटाना ज़रूरी है, जो पूरे समाज में एक बिमारी जैसी फैली थी। ऐसी एक प्रथा थी दहेज-प्रथा।

स्त्री शिक्षित और सर्वगुण संपन्न होते हुए भी उनका माप-तोल हमेशा धन-संपत्ति से किया जाता था। प्रेमचन्द की कहानी 'कुसुम' इसका उदाहरण है। इसकी नायिका कुसुम शिक्षित, समाज-धर्म नीति और गृह प्रबंध में निपुण होते हुए भी पति के दुर्व्यवहार का शिकार बनती है। कुसुम के पिताजी से ज़्यादा पैसे मिलने केलिए उसका पति कुसुम को घर से निकालता है। पिताजी उसको पैसे देने केलिए तैयार होते हैं। लेकिन कुसुम कहती है - "ऐसे देवता का रूठे रहना ही अच्छा। जो आदमी इतना स्वार्थी, इतना दंभी, इतना नीच है, उसके साथ मेरा निर्वाह न होगा। मैं कह देती हूँ, वहाँ रुपये गये; तो मैं ज़हर खा लूँगी। इसे दिल्लगी न समझना। मैं ऐसे आदमी का मुँह भी नहीं देखना चाहती।.. मैंने स्वतंन्त्र रहने का निश्चय कर लिया है।"[1] यहाँ स्वावलंबन की दृढ़ता है, साथ ही स्वाभिमान और स्वतंत्रता की घोषणा भी है।

कन्यापक्ष वालों से विभिन्न चीज़ों पर शिकायत करने की एक प्रथा

1. प्रेमचन्द - कुसुम, प्रेमचन्द्र रचनावली - 15 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 67

समाज में व्याप्त थी। ऐसी एक कहानी है प्रेमचन्द द्वारा लिखित 'पेपुजी'। इसमें कन्यापक्ष वालों से सिकरेट, वर्फ, तेल, शराब आदि विभिन्न चीज़ों पर शिकायत करने वाली बारातियों को देखा जा सकता है। बारातियों को इससे रोकने का प्रयास करने वाले नायक से वे कहते हैं - "हम यहाँ लड़का ब्याहने आये हैं, लडकी वालों को हमारी सारी फरमाइशें पूरी करनी पड़ेगी, सारी। हम जो कुछ मैंगेगे उन्हें देना पडेगा, रो-रोकर देना पडेगा।"[1] इन बातों से तंग आकर नायक यह प्रतिज्ञा की कि वह आगे किसी बारात में न जाऊँगा। उन्होंने सोचा- "... ये सब पशु हैं, इन्सानियत से खाली।"[2]

4.3.1.6 वृद्धाओं की समस्या

बुढ़ापा बचपन का पुनरागम है। तन-मन कमज़ोर होने की इस स्थिति में बूढों पर अधिक ध्यान रखना ज़रूरी है। लेकिन सभी कार्यों को व्यापारिक दृष्टि से देखने वाली संतान केलिए बूढे सिर्फ 'खर्च' पैदा करनेवाली चीजें हैं। इसलिए अपने बूढे माँ-बाप की देखबाल करने केलिए वे तैय्यार नहीं होती। नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में ऐसी अनेक वृद्धाओं की दर्दनाक स्थितियाँ प्रस्तुत हैं जिससे संतान इन कुरीतियों से मुक्त हो और अपने माँ-बाप को सम्मान के साथ सँभाले।

बुढ़ापे में अपनी देखभाल करने केलिए अपनी सारी संपत्ति-रिश्तेदारों को देते हैं अधिकांश वृद्ध। लेकिन संपत्ति-मिलने के बाद ये लोग वृद्धों की

---

1. प्रेमचन्द - पेपुजी, प्रेमचन्द्र रचनावली - 15 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 387
2. वही

देखभाल नहीं, बल्कि पीडा ही देते हैं। प्रेमचन्द की कहानी 'बूढ़ी काकी' का बुद्धिराम भी ऐसा एक व्यक्ति है जो अपनी काकी के सारी संपत्ति अपने नाम लिखवाने के बाद, उसे पेट भर भोजन देने केलिए भी तैयार नहीं होता है। बेटे के तिलक के दिन में आये मेहमानों को विभिन्न प्रकार के भोजन के प्रबन्ध करने वाले बुद्धिराम और उसकी पत्नी 'रूपा' बूढ़ी काकी को खाना नहीं देते हैं। भूख से परेशान बूढी काकी को बुद्धिरम की छोटी लड़की 'लाड़ली' अपने हिस्से की पूडियाँ लेकर देती है, जिससे काकी का पेट नहीं भरा। इसलिए उन्होंने लाडली से यह अनुरोध किया कि उसे वहाँ ले चलो जहाँ मेहमानों ने बैठकर खाना खाया है। वहाँ का दृश्य लेखक ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है - "दिन, क्षुधातुर, हत-ज्ञान बुढिया पत्तलों से पूडियों के टुकडे चुन-चुन कर भक्षण करने लगी।.. काकी बुद्धिहीन होते हुए भी इतना जानती थीं कि मैं वह कम कर रही हूँ, जो मुझे कदापि न करना चाहिए। मैं दूसरों की जूठी पत्तल चार रही हूँ।"[1] बुद्धिराम की पत्नी 'रूपा' यह दृश्य देखकर पछताती है । यहाँ वृद्धावस्था का मार्मिक चित्र रुबरू करते हैं 'प्रेमचन्द।'

'पंच परमेश्वर' में जुम्मनशेख की बूढी खाला की भी यही स्थिति है। बुढापे में अपनी देख-भाल करने की प्रतीक्षा में जुम्मन शेख को सारी संपत्ति देती है वह। लेकिन सबकुछ मिलने के बाद उसको पेट-भर खाना भी नहीं मिलता। 'बूढी काकी' कहानी में सहायता केलिए 'लाडली' आती है तो

---

1. प्रेमचन्द - बूढ़ी काफी, प्रेमचन्द्र रचनावली - 12 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 214

पंचपरमेश्वर की खाला का सहायक है पंच। पंच की नीती में विश्वास रखने के कारण वृद्धा अपना शिकायत पंच से करती है और उसे इन्साफ मिलती है।

वृद्धाओं पर अत्याचार करने वालों पर ही नहीं बल्कि वृद्धाओं की अनुभव संपत्ति पर प्रकाश डालकर उनके महत्व दिखाना भी नवजागरणकालीन कहानिकारों के लक्ष्य थे। माधरावसप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' में एक ऐसी वृद्धा को प्रस्तुत किया गया है, जिसे उम्र भर के अनुभवों से युक्त वाक्य एक ज़मीन्दार के मानसिक परिवर्तन की वजह बनती है। अपनी झोंपडी हासिल करने वाले ज़मीन्दार को अपने वचनों से वह पराजित करती है। वृद्धावस्था में भी अपनी पोती की देखभाल करने की शक्ति है उसमें। अपनी मिट्टी का महत्व समझनेवाली ऐसी वृद्धायें एक समाज की उन्नति केलिए सहायक बनेगी। 'ईदगाह' कहानी में 'हामिद' की बूढी दादी 'अमीना' अस्मिताबोध से खडी है। हामिद के माँ-बाप की मृत्यु के बाद वह बूढी औरत उसकी देख-भाल करती है। दूसरे बच्चों से अलग दया, बुद्धिमान और समझदार बच्चे के रूप में हामिद को बनाने के पीछे इस वृद्धा का हाथ है।

4.3.2 दलित जीवन

समाज के विकास केलिए हाशिएकृत दलितों का उन्नमन ज़रूरी है। नवजागरण के प्रमुख लक्ष्यों में एक यह भी था। निम्नों की उन्नति से समता

और एकता की भावना पैदा हो जाएगी। इसलिए सभी क्षेत्रों में व्याप्त अनाचारों और अंधविश्वासों को रोकना ज़रूरी था। क्योंकि दलितों को आगे आने में ये कूरीतियाँ ही बाधा बन रही थी।

4.3.2.1 जाति व्यवस्था का विरोध

दलित हमेशा जातिव्यवस्था के शिकार थे। समाज में जो जातिगत भेद-भाद था, वह दलितों की स्वतंत्रता और अधिकार छीन लेता था। इसलिए इस व्यवस्था को दूर कर मानवाधिकारों से वंचितों को हाशिए से केन्द्र लाना तत्कालीन समय की माँग रही थी।

प्रेमचन्द की कहानी 'ठाकुर का कुआँ' जाति व्यवस्था के विरोध में लिखित कहानी है। बीमार पति की प्यास मिटाने केलिए ठाकुर का कुआ से एक लोटा पानी लेने का प्रयास करने वाली 'गंगी' की कहानी है यह। गंगी और उसके पति निम्न जाति के होने के कारण उसे ठाकुर का कुआ से पानी लेने की इजाज़त नहीं थी। गंगी के विद्रोही मन इसके बारे में प्रतिक्रिया जताती है - "हम क्यों नीच हैं और यह लोग क्यों ऊँचे हैं? इसलिए कि ये लोग गले में तागा डाल लेते हैं? यहाँ तो जितने हैं, एक-से-एक छँटे हैं? चोरी ये करें, जाल-फ़रेब ये करें, झूठे मुकद्दमे ये करें... किस बात में हमसे ऊँचे। हाँ मुँह में हमसे ऊँचे हैं।"[1]

इस प्रकार गंगी ठाकुर के कुए से पानी लेने की कोशिश करती है,

1. प्रेमचन्द - ठाकुर का कुआँ - प्रेमचन्द्र रचनावली - 15 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 55

लेकिन वह पराजित हो जाती है और घर में रखे मैला-गंदा पानी पति को पीना पडता है। यह कहानी जाति-व्यवस्था का खुला चित्रण प्रस्तुत करती है। गंगी के विद्रोही भाव में इस भेद-भाद को रोकने की शक्ति है। लेखक यहाँ यह उम्मीद दे रहे हैं कि दूसरे दिन वह ठाकुर के कुए से पानी अवश्य ले लेगी।

प्रेमचन्द की कहानी 'मंत्र' का विद्रोही बूढ़ा भी जातिभेद के विरुद्ध खडा है। हिन्दु समाज में व्याप्त भेद-भाव को रोकने की कोशिश करने वाले पंडित लीलाधर से वह पूछता है - "हम कितने ही विद्वान, कितने ही आचारवान हो जायें, आप हमें यों ही नीच समझते रहेंगे।"[1] यह आवाज़ जातिव्यवस्था से पीडित एक व्यक्ति का है। इसलिए उनके शब्दों में दर्द होती है। यह दर्द हर पाठक को जाति व्यवस्था के खिलाफ लड़ने में शक्ति देगी। यह भारत की सामाजिक संकल्पना को उजागर कर जनता को उसके मार्मिक स्वरूप से अवगत कराती है।

4.3.2.2 छुआछूत और ब्राह्मणवाद का विरोध

दलितों को अपने अधिकारों से दूर रखने का प्रमुख कारण था 'छुआछूत'। जाति व्यवस्था से पीडित दलितों को उच्च वर्ग के रास्ते पर चलने और उसे छूने तक का अधिकार नहीं था। दलितों के निकट आने से अपनी पवित्रता नष्ट होने वाले बाह्मण, उसे मानव नहीं मानते थे। दलितों के उभार केलिए छुआछूत जैसी कुप्रथाओं को रोकना ज़रूरी था। सामाजिक प्रगति केलिए यह एक अनिवार्य शर्त था।

1. प्रेमचन्द - मंत्र, प्रेमचन्द्र रचनावली - 13 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 264

समाज के आदरणीय लोग भी अपने अंदर ही अंदर जाति-भेद-भाव को पालते हैं। समय आने पर उनके अन्दर से वह भेद-भाव बाहर आता है। प्रेमचन्द की कहानी 'सौभाग्य के कोडे' कहानी का राय साहब ऐसा एक व्यक्ति है। रायसाहब समाज में एक दयाशील व्यक्ति के रूप में जाने जाते हैं। अपने घर के नौकरों को भी दया की दृष्टि से देखते और उनको पेट भर खाने और पैसे भी देते थे। नथुवा उन्हीं में एक था, लेकिन अनाथ भी था। वह निम्न जाति का लडका था। एक दिन रायसाहब की पुत्री रत्ना के कमरे में झाड़ू लगाते वक्त उसको रत्ना के पलंग पर सोने की इच्छा हुई और वह पलंग पर लेट गया। यह देखकर आये रायसाहब ने उसे खूब पीटा। उसके अंदर के वह उच्च वर्गीय बर्ताव बाहर निकल आया। उन्होंने कहा- "क्या बे सुअर, तू यह क्या कर रहा है? ... ज़रा देखो तो चारपाई की गत, पाजी के बदन की मैल भर गयी होगी। भला, इसे सूझी क्या? क्यों वे, तुझे सूझी क्या?"[1] रायसाहब ने अपने हंटर से उसे कूल पीटा। अपने प्राण छोडकर वहाँ से भागने वाला नथुवा सालों बाद एक प्रमुख आचार्य बनकर वापस आता है और उसी रत्ना से शादी करता है। लेकिन रायसाहब उसे पहचानता नहीं। नथुआ को ब्राह्मण समझने वाले रायसाहब से वह कहता है - "योरोप की यात्रा के बाद वर्णभेद नहीं रहता। जन्म से चाहे जो कुछ हूँऊ कर्म से तो शूद्र ही हूँ।"[2] लेकिन फिर भी रायसाहब उसे ब्राह्मण ही समझते हैं उसके मत में नम्रता, शील, विनय, आचार धर्मनिष्ठा, विद्याप्रेम यह सब

---

1. प्रेमचन्द - सौभाग्य के कोडे, प्रेमचन्द्र रचनावली - 13 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 59
2. वही - पृ. 65

ब्राह्मणों के गुण है। यहाँ प्रेमचन्द व्यंग्य करते हैं कि इन सभी गुणों से युक्त एक दलित को लोग ब्राह्मण कहेंगे तो क्या रायसाहब जो जातिभेद दिखाता है, वह किस कोटि में आ जाएगा?

छुआछूत का विरोध करने केलिए सबसे पहले दलितों को यह विचार से मुक्त करना ज़रूरी है कि वह नीच है। 'सौभाग्य के कोडे' के नथुवा' अपने आपको ऊँचा करने का प्रयास करता है और वह सफल हो जाता है। लेकिन प्रेमचन्द की कहानी 'सद्गति' का नायक 'दुखी' अपने आपको नीच समझता है। इसमें छुआछूत का विरोध करने के साथ-साथ ब्राह्मणवाद का हँसी उठाता है। अपनी बेटी की सगाई केलिए शगुन विचारने हेतु, पंडित जी को अपने घर बुलाने केलिए तैयारियाँ करने वाला दुखी पत्नी झुरिया कहता है - "महुए के पत्ते तोडकर एक पत्तल बना लूँ तो ठीक हो जाय। पत्तल में बडे-बडे आदमी खाते हैं। वह पवित्तर है।... पत्तल में सीधा भी देना।... मुदा तू छूना मत'।"[1] इस प्रकार पत्नी को बीच-बीत में 'न छूना' की चेतावनी देकर दुखी यह याद दिलाता है कि हम 'नीच' है। फिर ब्राह्मण को बुलाने केलिए उसके घर पहुँचने वाला दुखी से वह सारे काम करवाते हैं, लेकिन खाने-पीने केलिए कुछ नहीं देता और वह मर जाता है। यह ब्राह्मणों की निर्दयता का स्पष्ट उदाहरण है। अपने घर में पडे चमार की लाश से परेशान होने वाला ब्राह्मण अंत में एकेला एक रस्सी का फन्दा बनाकर मुरदे के पैर में डालकर लाश को गाँव के बाहर घसीट ले गया। दुखी की इस

---

1. प्रेमचन्द - सद्गति, प्रेमचन्द्र रचनावली - 14 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 310

स्थिति को प्रेमचन्द व्यंग्य रूप में 'सद्गति' में कहते हैं। प्रेमचन्द के मत में - "यही जीवन-पर्यन्त की भक्ति, सेवा और निष्ठा का पुरस्कार था।"[1] अपने आपको नीच समझने वालों की यही स्थिति होगी। प्रेमचन्द यहाँ यह संदेश देते हैं कि खुद का बदलाव से समाज का बदलाव हो जाएगा। इसके अलावा 'दोनों तरफ से' कहानी का 'श्यामस्वरूप' और पत्नी 'कालेसरी', अछूतों के साथ भाइचारे का सलूक करने का उपदेश देने वाली 'सिर्फ एक आवाज़' कहानी का वक्ता आदि पात्रों के माध्यम से छुआछूत का विरोध और दलितों के सुधार की कोशिश की गई है।

4.3.3 बालकों की प्रतिष्ठा

किसी भी राष्ट्र का भविष्य वहाँ के बालकों पर निर्भर है। इसलिए सामाजिक उन्नति केलिए बालकों की उन्नति प्रमुख है। बचपन से सद्गुणों से युक्त बालक भविष्य का अच्छा नागरिक बनेगा। इसलिए ही बालकों को प्रमुख स्थान देकर कहानियाँ लिखना शुरु हुआ। बच्चों को सिर्फ 'बच्चा' कहकर दूर भगाना नहीं, बल्कि बच्चों के महत्व समझकर उन्हें साथ लेने का उपदेश देते हैं ये कहानीकार।

श्रीयुत सेठ गोविन्ददास की कहानी ईद और होली' दो बच्चों की दोस्ती की कहानी है। 'राम' और हमीदा नाम के ये बच्चे उनके माँ-बाप की नज़र में 'म्लेच्छ' और 'काफिर' है। क्योंकि ये दोनों दो धर्मों के प्रतिनिधि हैं। चार साल के इन बच्चों पर इसका कोई असर नहीं पडता। वे एक दूसरे से

1. प्रेमचन्द - सद्गति , प्रेमचन्द रचनावली - 15, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 308

अपनी खुशी और संस्कृति बाँटते हैं। इन दोनों की दोस्ती उनके माँ-बाप की दोस्ती का कारण बन जाती है और इसप्रकार सांप्रदायिक दंगे को रोका गया है।

जैनेन्द्र की कहानी 'खेल' भी दो बच्चों की दोस्ती दिखाती है। 'सूरबाला' और 'मनोहर' की दोस्ती झगडा और फिर दोस्ती होने की कहानी है यह दोनों खेलते वक्त भाँड बनाते हैं और फिर तोड देते हैं। लेखक इससे यह दिखाने की कोशिश करते हैं कि जहाँ बडे लोग धर्म, जाति, वर्ण धन के भेद से एक दूसरे को दुश्मन मानते हैं, वहाँ बच्चे सिर्फ स्नेह बाँटते हैं। इसलिए लेखक कहते हैं - "इन निर्जन प्रांत में यह निर्मल शिशु हास्य-रख लहरें लेता हुआ व्याप्त हो गया।"[1]

बच्चे सिर्फ खेल-कूद या दोस्ती करने में मात्र लीन नहीं होते। प्रेमचन्द की कहानी 'ईदगाह' का हामिद इससे बिलकुल अलग है। ईद के मेले में जाने वाले सभी बच्चे विभिन्न खिलौने खरीदते हैं और पैसा खर्च करते हैं। लेकिन हामिद लोहे की दूकान से चिमटा खरीदता है। उसने सोचा- "दादी के पास चिमटा नहीं है। तवे से रोटियाँ उतारती है, तो हाथ जल जाता है।"[2] यहाँ एक समझदार लडका नज़र आता है। उनके हिसाब से चिमटा कितना काम की चीज़ है। खिलैने तो गिरते ही टूट जाते हैं। इस प्रकार बचपन से बाज़ारवाद के खिलाफ खडे होने वाला, अर्थतंत्र में निपुण एक लडका है हामिद। छः पैसे का चिमटा को तीन पैसे में खरीदना उसकी निपुणता का ही उदाहरण है।

---

1. जैनेन्द्रकुमार - खेल, https;///www.bharatdarshan.co.nz/lit-collection/literature/783/khel-story-jainedra-html
2. प्रेमचन्द - ईदगाह, प्रेमचन्द्र रचनावली - 15 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 209

बच्चों की दयाशीलता और उत्तरदायित्व पर प्रकाश डालने वाली कहानी है 'बीमार बहिन'। प्रेमचन्द की इस कहानी का 'भोंदु' अपनी बडी बहन सेवती की सेवा करता है। बीमार सेबती केलिए पानी देता है, कहानियाँ सुनाता है और जल्दी ठीक होने केलिए प्रार्थना भी करता है। इस प्रकार एक माँ की तरह बहन की सेवा करने वाला 'भोंदु' एक आदर्श बालक ही है।

'बंगमहिला की कहानी 'भाई-बहन' में बच्चों के माध्यम से स्वदेशी चीज़ों के महत्व दिखाया गया है। श्रीराम, साहब और सुन्दर भाई-बहन हैं। साहब के पास पांच आने की एक रेलगाडी थी और सुन्दर जो छोटी बहन थी के पास एक मिट्टी का खिलौना था। इसलिए सुन्दर को दुख हुआ। यह देखकर बडे भय्या श्रीराम उसे समझाता है - "तुम्हारा खिलौनै बहुत अच्छा है, सुन्दर। साहेब तो पूरा बेवकूफ हैं, नाहक पांच आने पैसे दूसरे देश के कारीगर को दे आया।"[1] आगे वह अपने भाई और बहन को समझाता है कि ऐसी विदेशी चीज़ें भारतीय पूँजी को शून्य बना देंगी। इस प्रकार अपना देश के महत्व जाननेवाला साहब बीस वर्ष के बाद एक ऐसी दूकान खोलता है, जिसमें हर मनुष्य के काम लायक सब स्वदेशी और बनी चीजें मिलती हैं। लेखिका यह सिद्ध करती हैं कि बच्चों में देश की उन्नति करने की क्षमता है। इसलिए श्रीराम के माध्यम से बंगमहिला कहती है - "आज तुम लड़के हो, कल तुम्हीं युवा पुरुष हो जाओगे, यदि चाहोगे तो अपने हाथ से इस गिरे हुए देश की बहुत कुछ भलाई कर सकोगे।"[2]

---

1. बंगमहिला - भाई - बहन, बंगमहिला रचना समग्र, (सं) अस्मिता तिवारी, पृ. 69
2. वही, पृ. 70

4.3.3.1 बाल विवाह

समाज जिन जिन कुरीतियों से गुज़र रहा था उनसे बालक भी बचा नहीं था। खेल-कूद के समय में विवाह करके परिवारिक ज़िम्मेदारी को निभाना, पति सेवा करना पत्नी को खुश करना आदि बालकों के मानसिक विकास केलिए हानिकारक थे। इसलिए बाल-विवाह जैसे कुप्रथाओं को समाज से दूर करना सामाजिक विकास केलिए बहुत अनिवार्य था।

रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखित कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' में बालविवाह पर तीव्र प्रहर किया गया है। कहानी की नायिका बालविवाह के दुष्परिणामों को भोगने वाली नारी है। 10 साल की उम्र में उसका विवाह हुआ था और एक दुर्घटना की वजह से वह पति से, अलग हो जाती है। पति के बिना रहने वाली स्त्री को समाज से बहुत यातना सहनी पड़ती है। समाज में कोई इज़्जत भी नहीं होती, चाहे वह 10-12 साल की बालिका हो या 25-30 साल की औरत। इसकी नायिका अपने उस पति की स्मृति में रहती है, जिसका चेहरा तक उसको याद नहीं। जब 11 साल के बाद उन दोनों का मिलन होता है तो वह उसको पहचान नहीं पाती। यह कहानी इसलिए बालविवाह की त्रासदियों की ओर इशारा करती है। बालविवाह उस समय में एक साधारण सी बात थी। अगर दुर्भाग्य से पति का देहान्त हो जाये तो पत्नी यानी छोटी उम्र की लड़की को विधवा के समान जीना पड़ता था।

4.3.3.2 बाल श्रम

बाल विवाह अगर धार्मिक कुप्रथा है तो बाल श्रम सामाजिक कुप्रथा है। इन दोनों में समानता यह है कि दोनों में बच्चे शिकार होते हैं।

बाल-श्रम के विरोध में लिखी गयी कहानी है 'वे बच्चे'। मोहनलाल मेहतो की इस कहानी में जीविका चलाने केलिए दिन-भर काम करने वाले दो बच्चों को प्रस्तुत किया गया है। बाज़ार में तेल की जलेबियाँ और कचौरियाँ बेचने केलिए हर दिन दो कोस चलकर वे बच्चे आते थे। बारह साल के 'जग्गान' और छः साले के सुक्कन' भूके रहने पर भी कभी कचौरियों पर हाथ नहीं डालते थे। क्योंकि उन्हें पता था कि इससे उनके परिवार का पालन-पोषण होता था। इनके बारेम में लेखक इस प्रकार कहते हैं-"दोनों दुर्बल और रोगी, जैसे नंगधड़ंग बच्चे आम तौर पर, आधा पेट खाकर जीवन का दुर्वह भार ढोने वाले, देहातों में, गाँव के खेतों में या तो ढोरों के साथ या गलियों में ईंट-पत्थर चलाते हुए और गालियाँ बकते हुए नज़र आते हैं।"[1] एक बार लू और गर्मी के जेठ महीने में जलेबियाँ और कच्चौरियाँ बेचकर उन्होंने जल्दी घर वापस जाना चाहा। क्योंकि उनकी माँ बीमार थी। बच्चे होने के कारण उन्हें पता नहीं था कि तडपती धूप में जाना अपने जान केलिए खतरा होगा। सिर पर भारी खोन्च रखकर 'जग्गन' और अपनी लटपटी धोती को संभालता हुआ 'सुक्कन' बिना छाता और जूतों से जेठ के महीने की धूप खाकर निकल पडे वे ज़्यादा चल नहीं सके। दोनों धूप

1. मोहनलाल मेहतो - वे कच्चे, सरस्वती कहानी खंड, (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 332

में गिरे और मर गये। इस प्रकार छोटी उम्र में भारी काम करने के कारण वे बच्चे इस दुनिया से दूर चले गये। इन बच्चों की दर्दनाक कहानी की पूरी संवेदना 'वे बच्चे' शीर्षक से मिलती है।

4.3.4 सामजिक व्यवस्था

हर एक व्यवस्था नागरिक के हित केलिए होती है। व्यवस्थाओं का फायदा तब होगा जब इसका ठीक से इस्तेमाल हो जाएगा। लेकिन व्यवस्थाओं के संचालक वर्ग अपनी स्वार्थता केलिए इनका उपयोग करते हैं तो ये नागरिक पर बुरा असर डालेंगे। नवजागरणकालीन समाज भी विभिन्न व्यवस्थाओं से आगे चलती है। लेकिन इसका फाइदा उठाने वाले मात्र उच्च वर्ग था और निम्न वर्ग इससे पीडित था - "देश का शासन धनवानों के द्वारा धनवानों केलिए चलाया जा रहा था। कानून शक्तमानों, बडे-बडे भू-स्वामियों तथा धनिकों के पक्ष में बनते थे, सामान्य जनता की उपेक्षा की जाती थी।"[1]

4.3.4.1 समन्तीय व्यवस्था

नवजागरणकालीन समाज की सबसे बडी चुनौती थी सामन्तवाद को खत्म करना। सामन्तों से पीडित एक समाज और जनता की मुक्ति उस समय की बडी सपना थी। गरीब हमेशा पीडित और शोषित थे और सामंत इससे हटकर राजा के समान जीवन बिताते थे। उनके मन में आम जनता के प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी। गरीब हमेशा उनके इशारों पर नाचने वाले थे।

1. डॉ. ताराचन्द - भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, पृ. 2

सामन्तवाद पर घोर प्रहार करने वाली कहानी है प्रेमचन्द की ठाकुर का कुआ'। सामन्त ने अपने अधिकार को कायम रखने केलिए जाति-व्यवस्था को जकड़ रखा था। इस जाति-व्यवस्था के अनुसार निम्न जाति के लोग उच्च जाति से दूर रहते थे। उच्च वर्ग के रस्ते से निम्न वर्ग को दूर रहना पड़ता था। इन्हीं अनाचारों को स्वाभिमान से पालन करने वाला है सामन्त वर्ग। क्योंकि इसका फायदा सिर्फ उनको ही मिलेगा। 'ठाकुर का कुआ' का ठाकुर भी इसी तरह का व्यक्ति है। ठाकुर अपने कुएँ से किसी और को पानी भरने नहीं देता। ठाकुर की अमानवीयता के बारे में कहानी का नायक 'जोखू' कहता है- "गरीबों का दर्द कौन समझता है।.. ठाकुर लाठी मारेंगे... हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई दुआर पर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बडी बात है। ऐसे लोग कुएँ से पानी भरने देंगे?"[1] यहाँ बीमारी से पीडित 'जोखू' को एक बूँद शुद्ध पानी पीने नहीं देता है ठाकुर। इसके अलावा ठाकुल के अन्य दुर्गुणों पर भी इशारा करती है 'जोखू' की पत्नी 'गंगी'- "चोरी ये करें, जाल-फरेब ये करें, जूठे मुकद्दमें ये करें। अभी इस ठाकुर ने तो उस दिन बेचारे गडरिये की एक भेंड चुरा ली थी और बाद में मार कर खा गया। इन्हीं पण्डित जी के घर में बारहों मासा जुआ होता है।.. घी में तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करा लेते हैं, मजूरी देते नानी मरती है। किस बात में हैं हमसे ऊँचे।"[2] इस प्रकार सामंती व्यवस्था से तंग आकर अपना विद्रोही भाव प्रकट करती है गंगी। यह विद्रोही भाव आने वाले बदलाव की सूचना देता है।

---

1. प्रेमचन्द - ठाकुर का कुआँ, प्रेमचन्द्र रचनावली - 15 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 55
2. वही

समाज के निम्न वर्ग के साथ दुर्व्यवहार करने वाले सामन्त अपने परिवार में भी भिन्न बर्ताव का नहीं। सामन्तीय हृदयहीनता को प्रस्तुत करने वाली कहानी है, 'प्लेग की चुडैल'। मास्टर भगवानदास की इस कहानी में प्लेग की बीमारी वाली अपनी पत्नी को मरा हुआ समझकर, ठीक से अंतिम संस्कार भी न करके छोड देने वाला ठाकुर विभवसिंह को प्रस्तुत किया गया है। प्लेग की बीमारी से तड़पने वाली उस स्त्री को अकेले छोडने केलिए ठाकुर तैयार हो जाता है। यह देखकर एक पडोसी कहती है- "... क्या इसकी सुन्दरता, सहृदयता और अपूर्व पतिव्रत धर्म का कुछ भी असर उस पर नहीं हुआ, क्या इस क्रूर काल को किसी के भी सद्‌गुणों पर विचार नहीं होता।"[1] इस प्रकार अपनी पत्नी का अन्तिम कर्म नौकरों से करवाता है ठाकुर। लेकिन कहानी के अंत में ठाकुर को पश्चाताप होता है। यह पश्चाताप आने वाले बदलाव की सूचना देता है।

4.3.4.2 महाजनी सभ्यता

सामन्तवादी व्यवस्था में महाजनों की उपस्थिति नवजागरणकालीन समाज को और परेशान करती थी। महाजनों की विशेषता यह थी कि समाज के सभी स्तर के लोग इनके शिकार थे। चाहे वह अमीर हो या गरीब। सबको कंगाल बनाने में वे निपुण थे। महाजनों से पीडित जनता की मार्मिक प्रस्तुति नवजागरणकालीन कहानियों में देखी जा सकती है।

---

1. मास्टर भगवानदास - प्लेग की चुडैल, आरंभिक हिन्दी कहानियाँ, (सं) विजयदेव झारी, पृ. 125

जयशंकर प्रसाद की कहानी 'ग्राम' में महाजनी सभ्यता से कंगाल होने वाले एक ज़मीन्दारी परिवार प्रस्तुत है। महाजन किस प्रकार अपनी महाजनी चाल में दूसरों को फँसाता है। इसका उदाहरण इस कहानी की खासियत है। गाँव के बडे प्रांत के भूस्वामी और उच्च वंशी ज़मीन्दार, कुंदन्लाल नामक एक महाजन से कुछ ऋण लिया गया। जल्दी ही उनका रुपया बढ़ गया और ज़मीन्दार प्रयास करके धन जुटाकर कुंदनलाल के पास ले गए, तब उसने कहा- "क्या हर्ज है बानू साहब! आप आठ रोज़ में आना, हम रुपया ले लेंगे, और जो घाटा होगा, उसो छोड देंगे, आपका इलाका फिर जाएगा, इस समय रेहननामा भी नहीं मिल रहा है।"[1] यह उस महाजन का चाल था। उसका विश्वास करके ज़मीन्दार संचित धन का व्यय करने लगा। इसी अवसर पर कुंदनलाल ने ज़मीन्दार का इलाका थोडे रुपये में नीलाम करा लिया। अपने इलाके के नष्ट होने के कारण से ज़मीन्दार को बहुत चोट लगी और इसी से उनकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार ज़मीन्दार का पूरा परिवार गरीब हो गया।

महाजन रिश्तों को महत्व नहीं देते। उन केलिए पैसा ही प्रमुख है। अपने ही भाई पर महाजनी चाल का प्रयोग करने वाले महाजन की प्रस्तुति है प्रेमचन्द की कहानी 'दो-भाई' में। ऐसा एक महाजन है 'केदार'। केदार का छोटा भाई माधव आर्थिक कठिनाइयों से परेशान है और अपनी बेटी की शादी केलिए पैसे की ज़रूरत थी। इसलिए वह बडे भाई केदार से सहायता

---

1. जयसंकर प्रसाद - ग्राम, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ. 11

माँगता है। वह जवाब देता है - "हमारे पास होता तो कोई बात न थी परन्तु हमें भी दूसरे से दिलाना पडेगा और महाजन बिना कुछ लिखाये पढाये देते नहीं।"[1] वास्तव में केदार माधव का घर छीनना चाहता था। यह बात चुपाकर वह माधव को किसी और महाजन से पैसा लेना का वादा करता है और उसका घर अपने नाम लिखवाता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि महाजनों केलिए सखी-संबंधों की परवा नहीं, उन केलिए सिर्फ पैसा ही प्रमुख है।

बाबू केशवप्रसाद सिंह की कहानी 'चन्द्रलोक की यात्रा' का नायक 'हंसपाल' महाजनों से तंग आकर आत्महत्या करने केलिए तैयार हो जाता है। आर्थिक संकटों से परेशान 'हंसपाल' को महाजनों का एक संघ और परेशान करता था। वह कहता है - "महाजनों का इतना तगादा आरंभ हुआ कि सांस लेना भी कठिन हो गया।"[2] इसलिए वह चन्द्रलोक जाना चाहता है। प्रेमचन्द की कहानी 'बाँका ज़मीन्दार और उपदेश' भी इसी कोटी की कहानी हैं। इसप्रकार महाजनों की क्रूरता का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करके महाजनी सभ्यता को तोड डालने का प्रयास किया है नवजागरणकालीन कहानीकारों नें।

4.3.4.3 पूँजीवादी व्यवस्था

सामन्तवाद से टकराकर सामने आयी नयी अर्थव्यवस्था थी 'पूंजीवाद'। लेकिन इन पूंजीवादी व्यवस्था से पूंजीपतियों का जन्म हुआ। यह वर्ग

1. प्रेमचन्द - दो-भाई, प्रेमचन्द्र रचनावली - 15 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 381
2. केशवप्रसाद सिंह - चन्द्रलोक की यात्रा, सरस्वती कहानी खण्ड, (सं) महावीर प्रसाद द्विवेदी, पृ. 147

सामन्तों और महाजनों की तरह लोगों को तंग करने लगा। इसलिए इसका भी दुष्परिणाम होने लगा।

विदेशी पूँजी के प्रसार ने याने औपनिवेशिक अर्थनीति भारतीय उद्योगों का भविष्य अंधकार में डाल दिया था। दियासलाई, कंधी जैसी छोटी-छोटी चीज़ें भी विदेशों से मँगायी जाती थीं और भारतीय पूँजी बाहर जाती थी। इसका असर भारतीय समाज में भी पड़ने लगा। इन पूंजीवादी व्यवस्थाओं के फलस्वरूप आम जनता गरीब और कंकाल हो गयी बंगमहिला की कहानी 'भाई-बहन' में। बडे भाई श्रीराम इस पूँजीवादी व्यवस्था के दुष्परिणाम अपने छोटो भाई और बहन को समझाता है। वह कहता है- "हम सब अपनी करनी से दीन से दीन, गरीब से गरीब, अधम से अधम हो रहे हैं। पर तब भी चेत नहीं होता।"[1] उनके अनुसार यह विदेशी प्रेम हमारे सामाजिक व्यवस्थाओं के नाश का कारण बनेगा। इसलिए इन आदतों से दूर रहना समाज की उन्नति केलिए ज़रूरी है।

पूँजीपति प्रथा का विरोध करने वाली कहानी है 'पशु से मनुष्य'। प्रेमचन्द की इस कहानी में पूँजीपति प्रथा का विरोध करने के साथ इसका कल्याणकारी रूप भी दिखाया गया है। 'डॉक्टर मेहरा' एक ऐसा पूँजीपति था जो दिन-रात नौकरों से अपने बागवानी में काम कराता था। लेकिन ठीक से वेतन और भोजन नहीं देता था। उसके यहाँ काम करने वाला 'दुर्गा' अपनी गरीबी से बचने केलिए डॉक्टर साहब के बगीचे से छोरी करता है और

1. बंगमहिला - भाई-बहन, बंगमहिला रचना समग्र, (सं) अस्मिता तिवारी, पृ. 70

डॉक्टर उसे काम से निकालता है। महीनों बाद जब डाक्टर अपना मिल प्रेमशंकर के बाग की सैर करने गये तो वहाँ काम करने वाले दुर्गा को देखा। डॉक्टर ने प्रेमशंकर से बताया की वह चोर है, तब प्रेमशंकर उत्तर देता है - "दिन भर में जो कुछ आमदनी होती है, वह शाम को मुझे दे देता है और कभी एक पाई का भी अंतर नहीं पड़ता।.. यहाँ किसी को वेतन नहीं दिया जाता। सब लोग लाभ में बराबर के साझेदार हैं। महीने भर में आवश्यक व्यय के पश्चात जो कुछ बचता है, उनमें से दस रुपये प्रति सैकडा धर्मखाते में डाल दिया जाता है, शेष रुपये समान भागों में बाँट दिये जाते हैं। पिछले महीने में एक सौ चालीस रुपये की आमदनी हुई थी। मुझे मिलाकर यहाँ सात आदमी हैं। बीस रुपये हिस्से पडे। अबकी नारंगियाँ खूब हुई है, मटर की फलियों, गन्ने, गोभी, आदि से अच्छी आमदनी हो रही है।"[1] इसमें गाँधी-विचार का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त है। यह सब सुनकर डॉक्टर मेहरा चैंक जाता है। ये सब बातें उनकी समझ में नहीं आती थी। क्योंकि वह उन पूँजीपतियों का प्रतीक था जो गरीबों को सिर्फ तंग करना जानता है। यहाँ प्रेमशंकर के माध्यम से एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था प्रेमचन्द प्रस्तुत करता है जिससे समाज के सभी स्तर का विकास हो जाएगा।

4.3.4.4 ज़मीन्दारी प्रथा

ब्रिटीश पूँजीवाद के बाद ज़मीन्दारों की सहायता से अंग्रेज़ों ने अपनी सत्ता को बढ़ाने की कोशिश की। वास्तव में यह ज़मीन्दारी वर्ग कंपनी

---

1. प्रेमचन्द - पशु से मनुष्य, प्रेमचन्द्र रचनावली - 12 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 178

का संरक्षक था। ज़मीन्दार भूमि के स्वामी थे और भूस्वामित्व वसूल करना उनका मुख्य दायित्व था। लेकिन साथ ही उनको ऐसे अलिखित अधिकार भी थे, जिनसे वे गरीबों और निम्न वर्गों के ऊपर अत्याचार करते थे।

अधिकार के बल पर सारी व्यवस्थाओं और न्यायों को तोडने वाला एक ज़मीन्दार की कहानी है 'एक टोकरी भर मिट्टी।' माधवराव सप्रे की इस कहानी का ज़मीन्दार अपने महल का हाता बढ़ाने केलिए पडोसी अनाथ विधवा की झोंपडी पर धन और षड्यन्त्र के बल पर कब्जा कर लेता है। कहानी में ज़मीन्दारों की क्रूरता दिखाने केलिए सप्रे जी ने 'ज़मीन्दारी चाल' शब्द का प्रयोग किया। इससे स्पष्ट है कि उस समय के ज़मीन्दार निम्न वर्ग को लूटने में निपुण थे। बाद में विधवा को ज़मीन्दार द्वारा अन्याय से हासिल की गयी अपनी ही झोंपडी से एक टोकरी भर मिट्टी लेने की इजाजत लेनी पड़ती है। विधवा आगे ज़मीन्दार को चेतावनी देती है - "... इस झोंपडी में तो हज़ारों टोकारियाँ मिट्टी पड़ी है। उसका भार आप जन्म-भर क्योंकर उठा सकेंगे? आप ही इस बात पर विचार कीजिए।"[1] यह एक चेतावनी है कि लूटे गये या अन्याय से हासिल किया गया कुछ भी स्थिर नहीं रहेगा। विधवा के इन शब्दों से ज़मीन्दार का पश्चाताप दिखाकर सप्रे जी प्रतिरोध का एक नया तरीका प्रस्तुत करते हैं।

ज़मीन्दारों के यह परिवर्तन प्रेमचन्द की कहानी 'नशा' में भी देखा

---

1. माधवराव सप्रे - एक टोकरी भर मिट्टी, 'आरंभिक हिन्दी कहानियाँ, (सं) विजयदेव झारी, पृ. 252

जा सकता है । इसमें एक बडे ज़मीन्दार का बेटा 'ईश्वरी' और गरीब क्लर्क का बेटा 'वीर' की दोस्ती दिखाया गया है। अमीर ज़मीन्दार के बेटा होने के कारण वीर उसके बारे में कहता है - "मैंने उसे कभी गर्म होते हुए नहीं देखा।"[1] यह ईश्वरी के शान्त भाव को द्योतक है। ईश्वरी की दया और सहानुभूति की झलक भी इसमें जाहिर होती है। दशहरे की छुट्टियों में जब वीर के पास किराया देने केलिए पैसा नहीं था, तब उसे अपना घर ले जाता है ईश्वरी। इस प्रकार जयशंकर प्रसाद की कहानी 'शरणागत' में अपने इलाके के लोगों को प्रजा के रूप में मानने वाला एक ज़मीन्दार 'किशोरसिंह' को उभारा गया है। प्रसाद की ही कहानी 'दुखिया' में 'मोहन' भी ऐसा एक ज़मीन्दार है, जिसने अपने अश्रय में रहने वालों पर सहानुभूति दिखायी है। इस परिवर्तन की हवा ज़मीन्दारी प्रथा को अंत करने में सक्षम थी।

4.3.4.5 किसानी जीवन

हमारी संस्कृति एवं हमारा प्रमुख धंधा कृषी प्रधान थे। कृषि प्रधान देश होने के कारण किसानों की उन्नति भारतीय समाज की उन्नति थी। उपनिवेशवाद के बाद कृषि व्यवस्थाएँ तहस-नहस हो गयीं। बडे-बडे कारखानों के आगमन से किसान अपनी खेती से दूर होने लगे। अधिकांश किसान खेती छोडने में मज़बूर हो गये। बाकी लोग खेती के अलावा कुछ काम-धंधे न जानने के कारण खेती करने की कोशिश करते थे।

प्रेमचन्द की कहानी 'पूस की रात' का हल्कू भी अपनी मज़बूरी से

1. प्रेमचन्द, नशा, प्रेमचन्द रचनावली - 15 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 233

खेती कर रहा है। दिन-रात मेहनत करने पर भी हल्कू और पत्नी मुन्नी को पेट भर खाना खाने केलिए नहीं मिलता। पूस की ठंठी रात से बचाने केलिए एक सम्बल खरीदने केलिए भी उसके पास पैसा नहीं। कम्बल केलिए इकट्ठा गया पैसा भी साहूकारों को देना पड़ता है। इससे तंग आकर मुन्नी कहती है- "तुम छोड दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी।"[1] परिश्रम करने वाले किसानों के लाभ लूटने वाले ज़मीन्दारों और साहूकारों के बारे में व्यंग्यपूर्ण भाव से हल्कू कहता है - यह खेती का मजा है! और एक -एक भगवान ऐसे पडे हैं, जिनके पास जाडा जाय तो गर्मी से घबराकर भागे।..मजूरी हम करे, मज़ा दूसरे लूटे।"[2] इन शब्दों में व्यंग्य भी है, दर्द भी। इसलिए जीवन भर मेहनत करने पर भी अपनी खेती का सर्वनाश देखकर वह मालगुज़ारी के बोझ से परेशान नहीं हो रहा है, बल्कि वह सोचता है - "रात की ठण्ड में वहाँ सोना तो न पडेगा।"[3]

4.3.4.6 मध्यवर्गीय जीवन

नवजागरणकालीन कहानीकार मध्यवर्गीय जीवन की ओर भी प्रकाश डाला है। मध्यवर्ग निम्न कोटी का ही नहीं और उच्च कोटी का भी नहीं है। लेकिन वे आर्थिक शोषण का शिकार थे। इसी कारण उसका विकास नहीं हो रहा था।

इलाचन्द्र जोशी की 'कहानी 'अनाश्रित' मध्यवर्गीय परिवार की ओर

1. प्रेमचन्द - पूस की रात, प्रेमचन्द्र रचनावली - 14, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 208
2 वही
3. वही - पृ. 210

इशारा करती है। 'द्वारिका बाबू, उसका बेटा 'दीनदयाल' बेटियाँ, 'दामिनी', 'वृन्दा', 'राधा' आदि लोग दीनदयाल की दफ्तरी नौकरी की सहायता से जीते थे। इन बच्चों के अलावा बडी लड़की 'मंगला' बीस वर्ष की उम्र में विधवा होकर घर में वापस आयी थी। इन सारे लोगों का बोझ द्वारिका बाबू के कन्धे पर था। दिन भर मेहनत करने पर भी वे गरीबी से मुक्त नहीं होते। स्त्री की वीमार का कर्ज, दो लड़कियों के विवाह से नष्ट होनेवाली उनकी पैतृक संपत्ति, बेपरवाह बेटा आदि सब के सारण वह हमेशा परेशान रहता है। अपने साथ ही साहूकार उसको और परेशान कर रहे थे। इस प्रकार मध्यवर्गीय परिवार का यथातथ्य चित्र व्यक्त किया है लेखक ने।

4.3.4.6.1 मज़दूर

किसानों की तरह मज़दूर भी समाज में पीडित थे। पूंजीवाद के उदय से शुरु हुई विभिन्न कंपनियों और कारखानों के माध्यम से मशीनों का संचालन होने लगा। मानव के स्थान पर मशीनों का प्रयोग मज़दूरों की रोज़ी-रोटि बन्द कर दी। इस प्रकार वे भी गरीब होने लगे। इसके अलावा रोज़-रोज़ के छोटे वेतन से उनको जीवन बिताना मुश्किल है।

प्रेमचन्द की कहानी 'कफन' के 'घीसू' और 'माधव' ऐसी एक सामाजिक व्यवस्था से तंग आकर रहते हैं, जिनको दिन भर काम करने पर भी भूखी रहनी पड़ती है। इसलिए घीसू एक दिन काम करता है तो तीन दिन आराम करता और उसका बेटा माधव आधे घंडे काम करता है और तो घंडे

1. जयसंकर प्रसाद - ग्राम, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ. 11

-भर चिलम पीता। माधव की पत्नी प्रसव पीडा से मर रही थी, तब वह पत्नी के पास भी जाने को तैयार नहीं होता। उसके मन में घीसू द्वारा खाने वाले अपने हिस्से की आलू की चिन्ता थी। ये लोग ऐसे होने का कारण प्रेमचन्द कहता है - "जिस समाज में रात-दिन मेहनत करने वालों की हालत उनकी हालत से कुछ बहुत अच्छी न थी, और टिकानों के मुकाबले में वे लोग, जो किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं ज़्यादा संपन्न थे, वहाँ इस तरह की मनोवृत्ति का पैदा हो जाना कोई अचरज की बात न थी।"[1] आगे पत्नी की मृत्यु के बाद उसके कफन खसीटने केलिए लोगों द्वारा इकट्ठा किये गये पैसे को से वे पेट भर खाना खाते हैं और शराब भी पीते हैं। इस प्रकार जीवन भर दुख मिलने वालों को मृत्यु के बाद अंतिम प्रक्रियाओं से संपन्न करने वालों पर व्यंग्य करते हैं लेखक। साथ ही मज़दूरों का यथार्थ चित्रण हुआ है।

प्रेमचन्द जी की कहानी 'पशु से मनुष्य' में भी दिन रात काम करने वाला मज़दूर 'दुर्गा' को देखा जा सकता है। 'दुर्गा' डॉक्टर मेहरा के बाग का माली था। कठिन मेहनत करने पर भी पाँच रुपये के वेतन से उसके परिवार आगे नहीं चलता था। इसलिए उसने बाग से फूल-फल चोरी करके बेचना शुरु किया। डॉक्टर से वेतन बढ़ाने केलिए प्रार्थना की गई तो वह जवाब देता है - "भाई मैं तुम्हें बाँधे तो हूँ नहीं। तुम्हारा निर्वाह नहीं होता, तो और कहीं चले जाओ, मेरे लिए मालियों का अकाल नहीं है।"[2] एक दिन दुर्गा की चोरी

1. प्रेमचन्द - कफन, प्रेमचन्द्र रचनावली - 15, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 402
2. प्रेमचन्द - पशु से मनुष्य, प्रेमचन्द्र रचनावली - 12, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 173

पकडी जाती है और उसे काम से निकाल देता है। यहाँ कम वेतन से पीडित दुर्गा को चित्रित है तो आगे वह प्रेमशंकर नामक व्यक्ति के बाग में काम करने लगा। वहाँ 'दुर्गा' बहुत खुश थी, उन्हें चोरी करने की ज़रूरत नहीं थी। क्योंकि प्रेमशंकर अपना लाभ बराबर बाँटे थे और नौकरों को अपने हिस्से का पैसा मिल जाता है। इससे आमदनी भी बढ़ जाते हैं। प्रेमशंकर कहता है - "मैं इन्हीं आदमियों का-सा कपडा पहनता हूँ, इन्हीं का-सा खाना खाता हूँ.... यहाँ बीस रुपये मासिक उन औषधियों का खर्च है, जो गरीबों को दिया जाता है।"[1] इस प्रकार मज़दूरों की समस्याओं का समाधान सामाजिक संगठन के इस रूप से सफल होता है।

इस प्रकार मज़दूरों के दर्दनाक जीवन की ओर संकेत करने वाली कहानियाँ हैं 'सवा सेर गेहूँ', इलाचन्द्र जोशी की कहानी 'अनाश्रित' का द्वारिका बाबू', बदरीनाथ भट्ट की कहानी 'ग्रेजुएट की नौकरी' का 'ग्रेजुएट', सुदर्शन की कहानी 'प्रलय की रात्रि' का 'साधुराम' आदि।

4.3.5 धर्म और समाज

धर्म की प्रगतिशील भूमिका सामाजिक विकास केलिए सहायक बनता है। सामाजिक समन्वय केलिए भी धर्म का उपयोग किया जाता है। इसकेलिए धर्म को अंधविश्वासों से मुक्त होना चाहिए। धर्म के नाम पर प्रचलित सारे अंधविश्वासों को दूर करना नवजागरणकालीन समाज सुधारकों और कहानिकारों का मुख्य दायित्व रहा था।

---

1. प्रेमचन्द - पशु से मनुष्य, प्रेमचन्द्र रचनावली - 12 (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 180

4.3.5.1 धर्म निरपेक्षता

धर्म निरपेक्षता भारत के समन्वय का सुत्र है। विभिन्न प्रकार के धर्मावलंबियाँ यहाँ समन्वय के साथ रहते हैं। हिन्दू, बौद्द, इस्लाम, सिक्ख, जैन, ईसाई और फार्सी जैसे प्रमुख धर्म के लोग यहाँ प्रेम से रहते हैं। कोई एक दूसरों के विश्वास पर बाधा नहीं बनता, साथ ही दूसरों का सम्मान भी करता है। यह भारत की विशेषता है।

उग्र की कहानी 'ईश्वरद्रोही' में एक मुसलमानी औरत को आश्रय देने के कारण 'म्लेच्छ' कहकर समाज से दूर करने वाले ईश्वरद्रोही को देखा जा सकता है। यह व्यक्ति अपने धर्म के पक्के होते हुए भी दूसरे धर्म और धर्मावलंबियों का सम्मान करते हैं। समाज में धार्मिक भेद-भाव पैदा करने की कोशिश करने वाले लोगों को धर्मनिरपेक्षता का मार्ग दिखाने की कोशिश करता है वह। वह कहता है - "लुंगी.... लगाने वाला दोती पहनने वाले को काफिर नहीं कह सकता। पगडी पहनने वाला तुर्की टोपी वाले को म्लेच्छ नहीं कह सकता। अपनी अपनी पसन्द है।"[1] इसप्रकार वह समाज में संघर्ष पैदा करने वालों के विरुद्ध युद्ध करता है। अपनी बेटी की तरह मानने वाली उस मुसलमानी औरत जीवन भर में उसका साथ रहती है।

प्रेमचन्द की कहानी 'पंच परमेश्वर' में 'जुम्मन शेख' और 'अलगू चैधरी' की गहरी दोस्ती दिखाके धार्मिक समन्वय की ओर इशारा करते हैं

---

1. पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, ईश्वरद्रोही, https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-ईश्वरद्रोही,.CSPX

प्रेमचन्द्र। सुभद्राकुमारी चौहान की कहानी 'हींगवाला' भी हिन्दू-मुस्लिम के मुद्दे पर केन्द्रित है। 'हींगवाला' का पठान दंगे के समय अपनी हिन्दू ग्राहक जिसे वह अपनी माँ समान समझता है उसके बच्चों की रक्षा कर उन्हें सही-सलामत घर पहूँचाता है। लेखिका ने धर्मनिरपेक्षता द्वारा लोगों के सम्मुख मानवता का रूप प्रस्तुत किया है।

एक दूसरे के धार्मिक विश्वासों का सम्मान करके दोस्ती करने वाले श्रीयुत सेठ 'गोविन्ददास' की कहानी 'ईद और होली' के बच्चो 'राम' और हमीदा भी उदाहरण है। 'ईद और होली' में आपस मिठाइयाँ देकर वे समन्वय की भावना जागते हैं।

इस प्रकार धार्मिक ऐक्य से आगे चलने वाला एक समाज देश की उन्नति केलिए सहायक बनता है।

4.3.5.2 पुरोहित वर्ग का खोखलापन

लोगों के धार्मिक विश्वासों का फायदा उठाके समाज में अंधविश्वास फैलाने वाले पुरोहित वर्ग के खोखलेपन की ओर इशारा करते हैं नवजागरणकालीन कहानीकार। समय-समय पर पैसे केलिए धार्मिक मूल्यों को बदलने वाले पुरोहित वर्ग की असलियत मास्टर भगवानदास की कहानी 'प्लेग की चुडैल में देखी जा सकती है। कहानी का पुरोहित, ठाकुर जी से अपनी मरी हुई पत्नी का अन्तिम कर्म नौकरों से करवाने का इजाज़त देता है। इस केलिए

वह धर्म-शास्त्रों का सहारा लेता है। नौकरों ने ठीक काम न किया तो भी उनका साथ देने केलिए भी वह तैयार हो जाता है। उन्होंने कहा- "ठाकुर साहब तो छोड ही भागे, अब हम लोगों को इन पचडों से क्या मतलब है।"[1] इस प्रकार धर्म का सत्यनाश करने वाले पुरोहित वर्ग को पहचानना और उसके विरुद्ध आवाज़ उठाना सामाजिक समन्वय केलिए अनिवार्य है।

4.3.5.3 भाग्यवाद विरोध

जनता में प्रचलित धार्मिक अंधविश्वासों में एक था 'भाग्यवाद'। भाग्य-निर्भाग्य, शकुन आदि के माध्यम से समाज में बहुत अंधविश्वास प्रचलित थे। इस केलिए अनेक प्रतीकों को भी रूपायित करते थे, जैसे कावा बिल्ली, कौआ, झाडू से सामने आने वाली औरत, वेश्या आदि। लोगों के अनुसार यह सब आपत्तियाँ लाता है।

विदेशी वातावरण के सहारे विदेशी देश में फैले ऐसे एक अंधविश्वास को प्रस्तुत करता है जैनेन्द्र अपनी कहानी 'अपना-अपना भाग्य' में। नैनीताल की बर्फीली रात में दस वर्ष का एक पहाडी बालक मर गया, क्योंकि दूकानदार ने उसे नौकरी से निकाल दिया; बहुत कम कपडों में खुले एक बेंच पर उसे सोना पडा। लोगों ने उसकी सहायता नहीं की। उसी तरह मरना भाग्य समझने वाले एक समाज के खोखलेपन प्रस्तुत करते हैं लेखक। लेखक के अनुसार - "...पिछली रात एक पहाडी बालक सडक किनारे ठिठुर कर मर

1. मास्टर भगवानदास - प्लेग की चुडैल, आरम्भिक हिन्दी कहानियों, (सं) विजयदे झारी, पृ. 126

गया। मरने केलिए उसे वही जगह, वही दस वर्ष की उम्र और वही काले चिथडों की कमीज़ मिली।... गरीब के मुह पर, छाती, मुट्ठियों और पैरों पर बरफ की हल्की -सी चादर चिपक गई थी, मानो दुनिया की बेहयाई ढकने केलिए प्रकृति ने शव केलिए सफेद और ठण्डे कफन का प्रबन्ध कर दिया था।"[1] यहाँ उस बच्चे के ऐसे मरने को भाग्य समझकर लोग अपने आपको सफाई देते हैं। यह बच्चा हज़ारों बच्चों का प्रतीक था, जो घर, कपडे और खाने के बिना बरफ में पडे मर जाते हैं। ऐसे एक भयानक आर्थिक संकट को दूर करने के बजाय, उसे 'भाग्य' समझकर आंखें मूँदना धर्म का इस्तेमाल करना था।

4.3.6 साहित्यकारों का दायित्व

समाज को उन्नति की ओर ले जाना हर एक साहित्यकार का दायित्व है। इसलिए ही समाज और देश के हर पहलू को उजागर करने में वे सफल होते हैं। सहानुभूति और स्वानुभूति के बल पर लिखने वाले सभी विषय समाज को पढ़ने और समझने में सहायक बनता है। इसलिए ही साहित्य को समाज का तर्पण कहा जाता है।

सामाजिक यथार्थ से भागने वाले साहित्यकारों की ओर इशारा करके साहित्यकारों के दायित्व पर प्रकाश जालने वाली कहानी है, अज्ञेय की 'नई कहानी का प्लाट'। इसमें एक संपादक है, जो कहानी विशेषांक

---

1. जैनेन्द्र - अपना अपना भाग्य, कहानी कुंज, (सं) अरुणप्रभा एम.ए, पृ. 105

निकालने केलिए एक अच्छी कहानी के इन्तज़ार में रहते हैं। उन्होंने 'मियां अब्दुल लतीफ' नाम के मशहूर कहानी लेखक से कहानी लिखने का काम सोंप दिया है। मियां लतीफ रोमांटिक कहानी लिखने का इरादा बनाता हैं। लेकिन वह लिख नहीं पाता। उसने सोचा कि यह यथार्थवाद का ज़माना है, उनके मन स्पेन युद्ध, इटली, ब्रिटन चीन की लडाई, रूस की क्रांति आदि संसार की यथार्थवादी घटनाओं की और जाता है। वह सोचता है - "संसार भर में अशान्ति है। एक नहीं, असंख्य कहानियाँ के प्लाट यहाँ है, कोई लिखने वाला हो!"[1] लतीफ मिया सामाजिक यथार्थ को अपनी कहानी क विषय बनाता है और संपादक को देता है। लेकिन संपादक उसे वापस भेजते हैं और फिर लिखने की आज्ञा देते हैं। यहाँ साहित्यकार संपादक के दबाव पर आ जाता है। लेखक साहित्यकार को यह चेतावनी देते हैं कि सिर्फ काल्पनिक प्रेम कथा नहीं, बल्कि समाज और देश केलिए कल्याणकारी रचनाएँ लिखना साहित्यकार का दायित्व है।

जयशंकर प्रसाद की कहानी 'पत्थर की पुकार' में साहित्य और साहित्यकारों के दायित्व पर चर्चा करनेवाले दो दोस्तों को प्रस्तुत किया गया है। 'नवल' और 'विमल' की चर्चा से वे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि साहित्य और साहित्यकार अतीत और करुणा का काल्पनिक रूप मात्र नहीं प्रस्तुत करते, बल्कि "...दुखी हृदय के नीरव क्रंदन को भी अंतरात्मा की

---

1. अज्ञेय - नई कहानी का प्लाट, 'छोडा हुआ रास्ता कहानी संग्रह, पृ. 361

श्रवणेंद्रियों को सुनने देते है, जो करुणा का काल्पनिक नहीं, किन्तु वास्तविक रूप है।"[1] इस प्रकार लेखक यह सिद्ध करते हैं कि साहित्य को यथार्थ से हटकर कोई अस्तित्व नहीं हैं।

निष्कर्ष

नवजागरणकालीन सामाजिक संकल्पना में समाज की प्रत्येक इकाई को खास स्थान दिया गया है। व्यक्ति, परिवार, स्त्री, दलित, बालक, किसान, मज़दूर से लेकर उन महाजनों और ज़मीन्दारों को भी स्थान दिया गया था। क्योंकि राष्ट्र संकल्पना को रूपायित करने केलिए समाज के हर व्यक्ति को समान अधिकार और महत्व देना ज़रूरी था। इस सामाजिक संकल्पना की प्रतिष्ठा करने केलिए मानवीय मूल्यों पर बल दिया गया। मानवीय मूल्यों के बिना व्यक्ति विकास नहीं होता है। व्यक्ति के विकास से सामाजिक विकास शुरु होता है। इसलिए समाज में व्याप्त सारी कुरीतियों और अंधविश्वासों को रोककर मानवीय मूल्यों पर आधारित व्यक्तियों पर भारत की सामाजिक संकल्पना निर्भर है।

❖ ❖ ❖

1. जयशंकर प्रसाद - पत्थर की पुकार, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ. 18

पाँचवाँ अध्याय

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सांस्कृतिक संकल्पना

नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में सांस्कृतिक संकल्पना

भूमिका

भारत की संस्कृति बहुलता की संस्कृति है। भारत जैसे एक सामाजिक सुसंस्कृत देश में उपनिवेशवाद के बाद पैदा हुई पाश्चात्य संस्कृति भारतीय परंपरा और आधुनिकता में द्वंद्व का कारण बना। दूसरे शब्दों में यह द्वन्द्व शिक्षित और लोकसंस्कृति का द्वन्द्व था। पाश्चात्य संस्कृति के दबाव में पड़े भारतीय सांस्कृतिक अस्मिता कायम रखने केलिए जनता ने भारत की लोक संस्कृति की प्रतिष्ठा करने की कोशिश की। नवजागरणकालीन कहानिकारों ने भी इस लोक संस्कृति के माध्यम से प्रकृति, धर्म, भाषा, त्योहार, आचार-विचार जैसी हमारी खूबियों को प्रमुखता दे दी।

5.1 परंपरा और आधुनिकता में द्वन्द्व

अंग्रेज़ी शासन में शिक्षा, नीति, विधि, न्यायालय, प्रशासन सबकुछ अंग्रेज़ी ढंग के होने के कारण भारतवासियों में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव होने लगा। विदेशों में जाकर शिक्षा करना, विदेशी वस्त्र पहनना, खाना-पीना जैसे सबकुछ विदेशी तरीके से होना शुरु हुआ। लेकिन वे भारतीय संस्कृति से दूर नहीं थे। अपनी परंपरा के प्रति वे हमेशा सजग रहे थे। आधुनिकता और परंपरा का यह द्वन्द्व दूर करके भारतीय परंपरा को प्रतिष्ठित करने में नवजागरणकालीन कहानीकार सफल हुए हैं।

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से गोरे रंग के भारतवासियों को 'साहब' बुलाने की प्रणाली भारतवासियों में थी। अपने नाम के बदले 'साहब' बुलाने से भारतवासी गर्व करते थे। बंगमहिला की कहानी भाई-बहन' के बच्चे को भी लोग 'साहब बुलाते थे। बालक का परिचय देते हुए लेखिका यों लिखती हैं - "भाई का नाम शायद जो कुछ हो, पर रंग खूब गोरा होने से उसे सब लोग साहब कह कर पुकारते थे।"[1] साहब और बहिन 'सुन्दर' दोनों मेले में जाकर एक-एक खिलौना खरीदते हैं। सुन्दर एक पैसे का मिट्टी का खिलौना लेती है तो 'साहब' पाँच आने का खिलौना, खरीदता है। दोनों के बडे भैय्या 'श्रीराम' साहब को समझाते हैं कि हमें देश में बनी चीज़ों से प्यार होना चाहिए। हमारे नाम में भी देशी भाव होना चाहिए। नहीं तो हमारी कोई अस्मिता नहीं होगी उन्होंने कहा - "तुम चाल चलन में पढने लिखने में अच्छे हो, पर बडे ही अभिमानी हो। शायद यह दोष तुम्हारे नाम से उत्पन्न हुआ होगा। अच्छा सबसे तुम अपने असली नाम से 'हरिराम' कहकर पुकारने जाओगे।"[2] 'साहब' नाम पर गर्व होने वाले ग्यारह साल के उस बालक को अपना असली नाम 'हरिराम' पसन्द आने लगा। इसलिए जब वह बडा हो जाता है, शहर का एक नामी वकील बन जाता है और बाबू हरिराम वर्मा. बि.एल नाम से जाना जाता है। देश की भलाई केलिए मुकद्दमें चलाने वाला हरिराम 'मातृ भंडार' नाम की दूकान खोलता है जिसमें स्वदेशी चीज़ें मिलती थीं।

---

1. बंगमहिला - भाई -बहन, बंगमहिला रचना समग्र (सं) अस्मिता तिवारी, पृ. 68
2. वही - पृ. 69

विदेश में रहकर भी अपने देश की चिन्ता में रहने वाले व्यक्ति की कहानी है 'यही मेरा वतन है'। प्रेमचन्द की इस कहानी में अमेरिका में सपरिवार रहने वाले आदमी की ओर उल्लेख किया गया है। अमेरिका में आधुनिक सुख-सुविधाओं में रहने वाला यह व्यक्ति अपने देश के बारे में सोचकर दुखित हो जाता है। अमेरिका में रहकर उसके मन में जो दर्द हो रहा है, वह यों प्रकट करता है -"धन मेरा था, बीवी मेरी थी, लड़के मेरे थे और जायदादें मेरी थीं, मगर जाने क्यों मुझे रहकर अपनी मातृभूमि के टूटे-फूटे झोंपडे, चार-छः बीघा मौरूसी ज़मीन और बचपन के लंगोटिया यारों की याद सताया करती थी और अकसर खुशियों की धूमधाम में भी यह ख्याल चुटकी लिया करता कि काश अपने देश में होता।"[1] अपने देश की यादों में रहनेवाला वह व्यक्ति अपने बीवी-बच्चे और धन-दौलत को छोडकर स्वदेश वापस आता है। यहाँ आधुनिकता और परंपरा का द्वन्द्व दिखाई दे रहा है। जीवन भर विदेश में रहकर भी वह आदमी स्वदेश की याद में रहता है। इसलिए वह जीवन-भर परेशान है।

पाश्चात्य संस्कृति से आकृष्ट होकर भारतीय संस्कृति से दूर होने वाले भारतीयों की ओर भी नवजागरणकालीन कहानिकार ने इशारा किया है। लेकिन अपनी संस्कृति से अलग होकर वे पराजित हो जाते हैं। बंगमहिला की कहानी 'मन की दृढ़ता' कहानी का 'सोहनलाल' ऐसा एक व्यक्ति है। पाश्चात्य संस्कृति से आकर्षित होने के कारण उनके मन में एक

---

1. प्रेमचन्द - यही मेरा वतन है, सोजेवतन, पृ. 40

विदेशी स्त्री से शादी करने की इच्छी था। लेकिन उनकी माता ने एक भारतीय नारी के साथ उनका विवाह करवाया था। इसी बीच उसका एक मित्र 'मोहनलाल' बैरिस्टरी की परीक्षा पास करके एक गोरी बीवी से शादी करके आया था। तब 'सोहनलाल' के मन में उत्पन्न विदेश और स्वदेश का द्वन्द्व इसप्रकार व्यक्त किया गया है - "भग्नमनोरथ सोहन अपने अदृष्ट के अनुकूल चलने का प्रयत्न कर रहे थे कि इतने में मित्रवधु 'रोज' बीबी ने आकर उनसे हाथ मिलाया। सोहन के सारे शरीर में बिजली सी दौड गई।"[1] सोहन मोहन की गोरी पत्नी को अपनाने की कोशिश करता है और साथ ही अपनी पत्नी को छोड देने की। अपनी बातों से रोज को आकर्षित करने वाला सोहन, फिरउसे शादी करता है। लेकिन जब रोज को पता चलता है कि सोहन शादी-शुदा है, तो वह उसे छोड देता है। इसप्रकार आधुनिकता के पीछे जाने वाला सोहन पराजित हो जाता है।

ग्रामीण संस्कृति से दूर होकर आधुनिक सुख-सुविधाओं से आकर्षित होने वाला हर व्यक्ति अपने आपसे दूर चला जाता है। प्रेमचन्द की कहानी 'विषम समस्या' का गरीब ऐसा ऐक व्यक्ति है। उसके घर में दो हलों की खेती है, हज़ारों लेन-देन होते हैं, कई भैंसे भी हैं, लेकिन वह शहर में आकर चपरासी का काम करता है। क्योंकि उसकेलिए खेती करना नहीं, बल्कि दफ्तर में काम करना और शहरीय जीवन बिताना बडी बात था। इसलिए वह सब लोगों का डाँट-फटकार सुनने केलिए तैय्यार था। शहरीय जीवन से

1. बंगमहिला - मन की दृढ़ता, बंगमहिला रचना समग्र, (सं) अस्मिता तिवारी, पृ. 104

परिचित होने वाला सीधा-साधा, आज्ञाकारी, अपने काम में चौकस रहनेवाला 'गरीब' में परिवर्तन आने लगा। कहानी में इसके बारे में यों व्यक्त किया गया है- "यह वही गरीब है जो कई महीने पहले सत्यता और दीनता की मूर्ति था। मुझे यह स्वभावांतर देख कर अत्यंत खेद हुआ... सरलता के बदले अब उसमें काइयाँपन आ गया.. इस काइयाँपन से जो दूसरों का गला दबाता है, वह भोलापन क्या बुरा था जो दूसरों का अन्याय सह लेता था।"[1] परंपरा से आधुनिकता के पीछे जाने वाले व्यक्ति में यही परिवर्तन होता है। लेकिन कहानी में एक ओर आधुनिकता की ओर आकर्षित गरीब की प्रस्तुति है तो दूसरी ओर ग्रामीण जीवन चाहने वाले बडे बाबू और अन्य कर्मचारियाँ भी हैं। यह उम्मीद की बात है।

परंपरा की प्रतिष्ठा करने के साथ रूढिवादी परंपरा का विरोध भी करते हैं नवजागरणकालीन कहानिकार। सुदर्शन की कहानी 'विश्वास का फल' में मात्र पूजा-पाठ से अपनी गरीबी मिटाने की प्रतीक्षा में रहने वाली माँ से प्रश्न पूंछने वाला बालक को देखा जा सकता है। यहाँ बेटा आधुनिकता का प्रतीक है तो माँ रूढीवादी परंपरा की। बंगमहिला की कहानी 'कुम्भ में छोटी बहु' में भी कुम्भ मेला में स्त्रियों को रोकने वाली उस रूढिवादी परंपरा पर प्रश्न चिह्न लगाती है। इससे स्पष्ट है कि हमें पूर्ण रूप से आधुनिकता और परेपरा को नकारना भी नहीं चाहिए और अपनाना भी।

---

1. प्रेमचन्द - विषम समस्या, प्रेमचन्द रचनावली, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 257

5.2 लोक संस्कृति

लोक संस्कृति से मतलब परम्परागत मनोवृत्तियों से है। हमारी बृहद संस्कृति की रूपायति में लोक संस्कृति की अहम भूमिका है। इसमें एक भूभाग पर रहनेवाले सरल एवं स्वाभाविक जन समूह आते हैं, जो बाह्य सजावट और नागरिक सभ्यता से बिलकुल दूर हैं। लोक संस्कृति प्रकृति से जुड़ी हुई उस ग्रामीण जनता की जीवन पद्धति है, जिसमें उनकी जीवन प्रणाली, रीति-रिवाज़, त्योहार-मेला, आचार-विचार, वेश-भूषा, भाषा-बोलियाँ जैसे सभी प्रकार के तौर-तरीके आते हैं। इसलिए ही भारत की लोक संस्कृति प्रकृति की है। लोक जीवन की अनुभूतिमयी अभिव्यंजना लोक कथाओं, लोक नृत्यों और लोकगीतों में मिलता है। यह देश के इतिहास को रूपायित करने में सहायता प्रदान करता है।

ग्रामीण जीवन से संबंधित सारे तत्व लोकसंस्कृति में समाहित हैं। ग्रामीण जनता की जीवन-शैली भी इसमें मुख्य है। डॉ. कृष्णदेव के अनुसार -"लोक संस्कृति से हमारा अभिप्राय जनसाधारण की उस संस्कृति से है जो अपनी प्रेरणा लोक से प्राप्त करती थी, जिसकी उत्सभूमि जनता थी और जो बौद्धिक विकास के निम्न धरातल पर उपस्थित थी।"[1] प्रेमचन्द की कहानी 'यही मेरा वतन है' में यह ग्रामीण संस्कृति पाई जाती है। अपने गाँव की यादों में रहने वाला नायक अमेरिका से वापस आकर गांव की सैर करता है । वह गाँव में आये बदलावों को देखकर चौक उठता है और साथ ही अपनी गाँव

1. राहुल साकृत्यायन (सं) हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास पृ. 4

की पुरानी यादें एक के बाद एक होकर उसके सामने आता है जो लोक संस्कृति का स्पष्ट उदाहरण है - "अहा, यह वो नाला है जिसमें हम रोज़ घोडे नहलाते और खुद गोते लगाते थे... वह अखाडा जिसकी मेरे हाथों ने बुनियाद डाली थी... उस बरगद के पेड... जिसकी सुहानी छाया में हमने बचपन के मज़े लूटे थे... यह प्यारा बदगद है जिसे फल हमें सारी दुनिया की मिठाइयों से ज़्यादा मज़ेदार और मीठे मालूम होते थे.. उस चौपाल जहाँ शाम को पिताजी गाँव के और बडे-बूढों के साथ हुक्का पीते... कभी कभी वहाँ पंचायत भी बैठती थी... एक गोशाला थी और हम यहीं बछडों के साथ कुलेलें किया करते थे।"[1] इसप्रकार एक के बाद एक-एक याद उन्हें सताती है। यह एक सच्ची ग्रामीण तस्वीर थी। इसके अलावा जाडे के दिनों ईख पेरी और गुड़ की महक, कच्चा रस और पक्का दूध मिलाकर पीना, गंडेरियाँ काटने वाले मज़दूरों के हाथों की तेज़ी पर अचरच करना, रस भरवाने केलिए घटे लेकर आने वाले औरतें और बच्चे, गरीबों केलिए धर्मशाला आदि एक संपूर्ण ग्रामीण चित्र सामने रखते हैं प्रेमचन्द।

ग्रामीण जीवन के यथार्थ की स्थिति का चित्रण प्रस्तुत करती है बंगमहिला की कहानी 'कुम्भ में छोटी बहु' में। एक भोजपुरी गाँव के चित्रण करके वहाँ के रहन-सहन, खान-पान से लेकर तमाम संवेदनाओं पर प्रकाश डालती हैं लेखिका। 'पड़रा' नामक भोजपुरी गाँव के हर परिवार हमारे सामने कहानी में आ जाता है - "...जाड़े का मौसम है, सबेरे का वक्त है। घर की

---

1. प्रेमचन्द - यही मेरा वतन है, सोजेवतन, पृ. 41-42

मालकिन आंगन में बैठी घाम ले रही है। बोळवा की माँ (मजदूरनी) गाय की सानी में लग रही है। ... रसोईघर में बडी बहु रसोई बनाती है। छोटी बहु एक थाल में रखकर चावल चावल बीन रही है। दोनों देवरानी जेठानी में, इधर-उधर की बातें हो रही हैं।"[1] यहाँ उस गाँव के एक परिवार के दैनिक जीवन की पूरी प्रणाली सामने आती है। बंगमहिला की कहानी 'दुलाईवाली' भी एक आँचलिक दृष्टि प्रस्तुत करती है। मिरजापुर, मुगलसराय, काशी, आरा और इलाहाबाद के खान-पान, रहन-सहन आदि एक समान है। इसका स्पष्ट चित्रण देती हैं लेखिका।

5.2.1 उदारता की भावना

भारतीय संस्कृति को तेजस्वी बनाने में उदारता की भावना सहायक बनती है। सबको सहायता देने वाली और सबको स्वीकारने वाली यह संस्कृति भारत की उदारता का उदाहरण है। उदारता की यह भावना भारत को हिंसात्मक प्रवृत्तियों से दूर करती है और अहिंसा को अपनाने में सहायता देती है।

उग्र की कहानी 'सिक्ख सरदार' में भारतीय संस्कृति की उदारता का द्रष्टव्य है। जब अंग्रेज़ी लेफ्टिनेंट 'विडल्प' को सिक्ख सिपाहियाँ बंदी बनाकर सरदा के पास लाये, तब विडल्प को देखकर सरदार कहता है - "हम लोग बंदियों से बदला नहीं लेते। हमारा बदला सशक्त शत्रुओं के साथ

---

1. बंगमहिला - कुम्भ में छोटी बहु, बंगमहिला रचना समग्र (सं) अस्मिता तिवारी, पृ. 29

संग्राम स्थली में ही होता है। जाओ वीर, तुम मुक्त हो।"[1] इसप्रकार सरदार अँग्रेज़ को छोड देता है। इससे प्रभावित होकर वह अफ्सर भारतीय सैनिकों से युद्ध करना छोड देता है। युद्ध स्थल में भी निरस्त्रों को छोडना और अपनी नीति का पालन करना, यह सब भारतीय संस्कृति की विशेषता है।

उग्र की कहानी 'रेन ऑफ टेरर' में अंग्रेज़ों के साथ युद्ध करते वक्त भी अंग्रेज़ी औरत को आश्रय देने वाले वृद्ध पंडित को देखा जा सकता है। भारतीय सैनिक और अंग्रेज़ों के साथ जब युद्ध हो रहा था, तब पूरे ग्राम के लोग अंग्रेज़ों के खिलाफ थे। उस वक्त प्राण भय से अपने पास आने वाली स्त्री की रक्षा करना अपना दायित्व मानकर वह वृद्ध उसको आश्रय देता है। क्योंकि अबला नारी की रक्षा करना भारतीय उदार संस्कृति की विशेषता है। वह कहता है - "शंकरजी साक्षी हैं, यद्यपि मेरी अवस्था अस्सी वर्ष की है, फिर भी बिना दो-एक की जान लिए उस अबला पर विपत्ति न आने दूँगा।"[2] अपने आश्रय में रहने वालों केलिए अपना जीवन त्याग करने केलिए वह तैय्यार होता है। जयशंकर प्रसाद की कहानी 'शरणागत' में भी अपनी पत्नी को यमुना में डूबने से बचाने वाले अंग्रेज़ी दंपतियों को आश्रय देने वाला ठाकुर किशोरसिंह को देखा जा सकता है। वह अपनी पत्नी को बचाने के बदले में उन दोनों के प्राण बचाने का वादा करता है और उसे आश्रय देता है।

---

1. पांडेय बेचन शर्मा उग्र -सिक्ख सरदार- https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-सिक्ख-सरदार -CSPX
2. उग्र - रेन ऑफ टेरर, मेरी माँ, पृ. 95

5.2.2 रीति-रिवाज़

भारत में विभिन्न प्रकार के रीति-रिवाज़ प्रचलित हैं। रीति-रिवाज़ सामाजिक स्तर से विकसित होकर सांस्कृतिक हिस्सा बन जाता है। पीढ़ि दर पीढी से चले आये रीति-रिवाज़ कभी-कभी सांस्कृतिक समन्वय का कारण बन जाता है। लेकिन अंधविश्वास को प्रेरणा देने वाले रीति-रिवाज़ों को रोकना भी ज़रूरी था। प्रेमचन्द की कहानी 'यही मेरा वतन है' में भारत की परंपरा और रीतियों पर प्रकाश डाला है। भारत से दूर अमेरिका गए प्रवासी नायक अपनी देश की स्मृतियों में जीता है। वह अपना देश वापस आना चाहता है। उनके मत में - "यह आरजू कुछ आज ही मेरे मन में पैदी नहीं हुई है, उस वक्त भी था.. जब कि मेरे नौजवान बेटे सवेरे आकर अपने बूढे बाप को उदब से सलाम करते थे, उस वक्त भी मेरे जिगर में एक कांटा-सा खटकता था और वह कांटा यह था कि मैं अपने देश से निर्वासित हूँ।"[1] यहाँ अपने देश का रीति-रिवाज़ उसको देश वापस आने केलिए प्रेरणा देता है। बडे लोगों के 'पैर छूना', अदब से सलाम करना और इसप्रकार उनके आशीर्वाद पाना एक रीति-रिवाज़ था जो हमारी संस्कृति की विशेषता भी थी।

कुछ रीति-रिवाज़ अंधविश्वासों और अनाचारों को बढ़ावा देने के कारण उनके खिलाफ भी कहानिकार आवाज़ उठाते है। प्रेमचन्द की कहानी 'पेपुजी' में विवाह के दिन कन्या के पिता द्वारा वर की पाँव पूजा करने वाली

---

1. प्रेमचन्द - यही मेरा वतन है, सोजेवतन, पृ. 40

उस प्राचीन प्रथा के विरुद्ध आवाज़ उठायी गई है। अपने दोस्त के पुत्र की शादी में भाग लेने वाला नायक यह दृश्य देखकर चौंक उठता है - "इस वक्त कन्या के पिता को एक युवक के चरणों की पूजा करते देखकर मेरी आत्मा को चोट लगी। यह हिन्दु विवाह का आदर्श है या उसका परिहास? जामाता एक प्रकार से अपना पुत्र है, उसका धर्म है कि अपने धर्मपिता के चरण धोये...। कन्या का पिता वर के पांव पूजे यह तो न शिष्टता है, न धर्म, न मर्यादा।"[1] जब नायक इसके विरुद्ध आवाज़ उठाता है, तब उसका दोस्त उसे समझाता है - यह अपमान नहीं, भाई साहब, प्राचीन प्रथा है।' दहेज प्रथा के विरोध में लिखी इस कहानी में ऐसे रीति-रिवाज़ों का भी विरोध होता है।

ऐसे कुछ रीति-रिवाज़ भी हैं जो हमारे संस्कृति को अन्य संस्कृतियों से अलग बनाते हैं। परिवार में शुभ कार्य जब संपन्न होता है तब घर वाले 'झलमला' दिखाता है और वापस में उनको पैसा देता है। ऐसे एक रीति-रिवाज़ को एक बच्चे के माध्यम से प्रस्तुत करती है पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की कहानी 'झलमला'। घर के बडे लोगों की इस आदत से परिचित होने वाला बच्चे ने अपनी भाभी के पास झलमला के अभाव में एक मोमबत्ती लेकर जाने और भाभी से पैसा माँगने की कथा प्रस्तुत की है। ऐसे रीति-रिवाज़ पारिवारिक दृढ़ता केलिए सहायक बनते थे। विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की कहानी रक्षाबन्धन में भी भाई-बहन के रिश्ता को दृढ बनाने वाली प्रथा के रूप में रक्षाबन्धन को उतारा गया है।

---

1. प्रेमचन्द - पेपुजी, प्रेमचन्द रचनावली - 15, रामविलास शर्मा (सं) पृ.289

5.2.3 लोक गीत

लोक गीत ग्रामीण संस्कृति का वाहक है। इससे लोक जीवन का परिचय मिलता है। जीवन के खुशी, दर्द, संघर्ष जैसे विभिन्न संदर्भों में लोक गीतों में भिन्नताएँ होती हैं। 'सिक्ख सरदार' कहानी में अंग्रेज़ों द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों के खिलाफ लोकगीत के ज़रिए अपना विद्रोह प्रकट करते हैं लोग। वे गाते हैं-

'कलिंदनंदिनीतटे न नंदनंदनंदनम
अधरं मधुरं हृदयं मधुरं
मधुराधिपते रखिलं मधुरम्

एक दम नीरस कंठ से 'अड्डड़ धम्मा! अड्ड्ड़ धम्म!!' गरज रही थी।"[1]

अपने खेत की रखवाली करने वाले किसान अंधेरे में नींद को भगाने केलिए गीतों का सहारा लेते हैं। प्रेमचन्द की कहानी 'अंधेर' में इसकी ओर इशारा किया गया है।

"मैं तो तोसे नैना लगाय पछतारी रे।"[2]

उसीप्रकार नागपंचमी के दिन अपने वीर इतिहास की कहानियाँ लोक गीतों के माध्यम से सुनाते थे। एक दूसरे के जोश सुनाने केलिए 'साठे'

1. पांडेय बेचन शर्मा उग्र -सिक्ख सरदार- https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी-सिक्ख-सरदार -CSPX
2. प्रेमचन्द्र - अंधेर, प्रेमचन्द्र रचनावली - 11, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 279

और पाठे वर्ग के लोग ये गीत गाते थे। पाठे वाले गाते थेः-

"साठे वाले कायर सगरे पाठे पाळे सरदार।"[1]

साठे वाले जवाब देते थे-

"साठे वाले साठ हाथ के जिनके हाथ सदा तरवार।
उन लोगन के जनम नसाये जिन पाठे मान लीन अवतार।"[2]

इन दोनों वर्ग के जोश के बारे में लेखक यों कहते हैं - "गैरज आपसी होड का यह जोश बच्चों में माँ के दूध के साथ दाखिल होता था और उसके प्रदर्शन का सबसे अच्छा और ऐतिहासिक मौका यही नागपंचमी का दिन था।"[3]

ग्रामीण औरतें काम करते वक्त जो गीत गाती हैं, उसकी ओर इशारा किया है प्रेमचन्द की कहानी 'सिर्फ एक आवाज़' में। इस कहानी के ठाकुर दर्शनसिंह और ठाकुराइन श्याम को गाँव से होकर चलते हैं तो औरतों के गीत से प्रभावित होते हैं-

"चाँद सूरज दूनो लोक के मालिक
एक दिन उनहूँ पर बनती
हम जानी हमही पर बनती।"[4]

इस प्रकार इन लोक गीतों में ग्रामीण जनता की जीवन शैली का खुलासा होता है। एक देश का इतिहास इसमें समाहित है।

---

1. प्रेमचन्द्र - अंधेर, प्रेमचन्द्र रचनावली - 11, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 279
2. वही
3. वही
4. प्रेमचन्द्र - सिर्फ एक आवाज़, प्रेमचन्द्र रचनावली - 11, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 287

5.2.4 अतिथिदेवो भव:

अतिथियों को देवता समान मानना भारतीय संस्कृति की विशेषता है। उग्र की कहानी 'रेन ऑफ टेरर' में अंग्रेज़ी औरत को आश्रय देने वाला बुद्ध पंडित उसको देवता से समान मानते हैं। जब अन्य लोग एक विदेशी स्त्री को आश्रय देने पर सवाल करते हैं और खाने-पीने के बारे में पूछते हैं, तब पण्डित जवाब देता है - "जो मैं खाता हूँ, उससे अच्छी चीज। उसके लिए मैं रोज़ अहीर से मक्खन मँगवाता हूँ। और कोई तो मेरे घर में है नहीं, मैं ही उसका बावर्ची हूँ।"[1] अपने जीवन को खतरे में डालकर अपने अतिथि की देख-भाल करने वाले इस पण्डित के समान है प्रसाद की कहानी 'शरणागत' का ठाकुर 'किशोरसिंह'। सिपाहियों से बचकर आने वाले 'एलिस' और 'विल्फर्ड' से किशोरसिंह और उनकी पत्नी कहते हैं- "घबराओ मत, हम लोगों के रहते तुम्हारा कोई अनिष्ट नहीं हो सकता।"[2] किशोरसिंह की पत्नी उन लोगों को अपने हाथ से खिलाती है। यह सब देखकर अंग्रेज़ी दंपति भारतीय संस्कृति से आकृष्ट होते हैं।

अपनी मृत्यु के वक्त भी आतिथ्य सत्कार न करने पर दुखित एक सिपाही को प्रस्तुत किया गया है। प्रेमचन्द की कहानी 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' में। कहानी का नायक दिलफ़िगार इस घायल सिपाही के पास जाकर कहता है कि वह एक मुसाफिर है। तब सिपाही कहता है "अगर तू मसाफिर है तो आ मेरे खून से तर पहलू में बैठ जा क्योंकि यही दो अंगुल

1. उग्र - रेन आफ टेरर, मेरी माँ कहानी संग्रह, पृ. 96
2. प्रसाद - शरणागत, प्रतिनिधि कहानियों, पृ. 14

ज़मीन है जो मेरे पास बाकी रह गयी है और जो सिवाय मौत के कोई नहीं छीन सकता। अफसोस है कि तू यहाँ ऐसे वक्त में आया जब हम तेरा आतिथ्य-सत्कार करने के योग्य नहीं।"[1] इन शब्दों में स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति में अतिथियों को कितना महत्व है।

विदेशी संस्कृति से संपर्क होने से यानि पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से भारतीय संस्कृति में होने वाले बदलाव दिखाया जाता है 'जैनेन्द्र' की कहानी 'आतिथ्य' में। एक साथ कॉलेज में पढने वाले दो दोस्तों की कहानी है यह। इसका नायक प्रसाद और अमीर दोस्त के बीच गहरी दोस्ती थी। कॉलेज के दिनों में सारी सुख-सुविधाओं से जीने वाले अमीर दोस्त (जिसका नाम नहीं दिया गया है) सारे साथियों को अपने कमरे में बुलाकर अपने नौकर से खाना बनवाके खिलाते थे और आतिथ्य सत्कार में वह निपुण था। लेकिन विदेश में जाकर पढ़ाई करके वह वापस आता है और एक 'डायरी' और 'फार्म' का मालिक बन जाता है, तब उसके निमत्रण में वहाँ आये प्रसाद और उसके परिवार वालों को भूखा पेट वापस जाना पडता है। दूध और फलों से भरे उस डायरी की सभी चींज़ 'दोस्त' केलिए व्यापार की चीज़ें मात्र थीं। विदेश में जाकर उन्होंने खूब व्यापार करने का तरीका सीखा था। यही पाश्चात्य व्यापारी संस्कृति का कुप्रभाव है।

5.2.5 वेश-भूषा

भारत विभिन्न संस्कृतियों का देश है। विभिन्न धर्मों, जातियों, वर्गों

1. प्रेमचन्द्र - दुनिया का सबसे अनमोल रतन, सोजेवतन, पृ. 17

के लोगों के इस देश में विभिन्न प्रकार के पोशाक का उपयोग भी प्रचार में है। उग्र की कहानी 'ईश्वरद्रोही' में विभिन्न धर्मावलंबियों के वेश-भूषा का परिचय मिलता है। धार्मिक समन्वय को कायम रखने केलिए 'ईश्वरद्रोही' कहता है - "लूंगी लगाने वाला धोती पहनने वाले को काफिर नहीं कह सकता। पगडी पहनने वाला तुर्की टोपी वाले को म्लेच्छ नहीं कह सकता। अपनी अपनी पसन्द है।"[1] यहाँ धार्मिक ऐक्य के माध्यम से विविध वेश-भूषा का वर्णन भी हाता है जो भारत की विविधता में एकता का प्रमाण है।

वेश-भूषा देश की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। इसलिए भारत की राष्ट्रीय क्रांतियों में विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार हो रहा था। बंगमहिला अपनी कहानी 'दुलाईवाली' में भी विदेशी वस्त्र के खिलाफ आवाज़ उठाती हैं और स्वदेशी वस्त्र की प्रतिष्ठा भी करती हैं। अपने दोस्त 'नवलकिशोर' से मिलने केलिए जाने वाले वंशीधर अपनी विदेशी धोती को देखकर कहता है - "एक देशी धोती पहिनकर आना था, सो भूलकर विलायती ही पहिन आए।"[2] इससे स्पष्ट होता है कि वेश-भूषा हर एक देश की संस्कृति का प्रतीक है। प्रेमचन्द की कहानी 'सुहाग की राडी' में भी देश की संस्कृति की प्रतिष्ठा करने केलिए विलायती वस्त्रों की उपेक्षा करने वाले दंपतियों को देखा जा सकता है। अपनी कीमती विदेशी कपडों की उपेक्षा करने को हिचकने वाली 'गौरा' से पति रतन कहता है - "स्वदेशी साडियों

---

1. पांडेय बेचन शर्मा उग्र - ईश्वरद्रोही, https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी- ईश्वरद्रोही - CSPX
2. बंगमहिला - दुलाईवाली, बंगमहिला रचना समग्र, अस्मिता तिवारी (सं), पृ. 48

में से जो चाहे रख लो, लेकिन इस विलायती चीज़ को मैं न रखने दूँगा। इसी कपडे की बदौलत हम गुलाम बने...।"[1] इस प्रकार अपनी सुहाग की साडी तक निकालकर देती 'गौरा'। एक देश की संस्कृति वहाँ के पोशाक से आँका जा सकता है।

5.2.6 त्योहार और मेला

विभिन्न संस्कृतियों के होने के कारण भारत में विभिन्न त्योहार भी होते हैं। प्रत्येक त्योहार समन्वय और मानवीयता का संदेश देता है। सेठ गोविन्ददास की कहानी 'ईद और होली' समन्वय की भावना का सच्चा उदाहरण है। इसमें 'राम' और 'हमीदा' अपने-अपने त्योहारों में एक दूसरे को मिठाइयाँ बाँटते हैं। दोनों केलिए ये त्योहार हिन्दू-मुसलमान का नहीं, बल्कि अपनी दोस्ती की थी, मिलन की थी। दोनों बच्चों की दोस्ती से उनके माँ-बाप की आपसी घृणा भी दूर हो जाती है। प्रेमचन्द की कहानी 'विचित्र होली' में भी 'होली' बनाने वाले विभिन्न धर्मों और वर्गों के लोगों के आदर्शोन्मुख जीवन का बयान प्राप्त है। इसमें नौकर भी है और सेठ उजागरमल जैसे धन भी। इन लोगों के समन्वय की भावना को लेखक इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं - 'साईस, अर्दली, मेहतर, भिश्ती, ग्वाला, धोबी सब होली मना रहे थे।"[2]

"कुम्भ में छोटी बहु' कहानी में कुम्भ मेला की ओर इशारा करती

---

1. प्रेमचन्द्र - सुहाग की साडी, प्रेमचन्द्र रचनावली - 11, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 329
2. प्रेमचन्द्र - विचित्र होली, प्रेमचन्द्र रचनावली - 12, (सं) रामविलास शर्मा, पृ. 257

हैं बंगमहिला। कुम्भ मेला केलिए तैय्यार होने वाले पूरे परिवार का चित्रण देती हैं लेखिका। 'कुम्भ' केलिए एक साथ रसोई बनाने और रोजे रखने वाली स्त्रियाँ पारिवारिक दृढ़ता के मिसाल बनती है। इसप्रकार मेला और त्योहार हमारी संस्कृतिक पहचान होने के साथ सांस्कृतिक उन्नति केलिए सहायक बनते हैं।

5.2.7 कला का महत्व

कला और कलाकार भारत की संस्कृति का हिस्सा था। लेकिन मुगल सल्तनत के समाप्त होने पर कला की मौलिकता समाप्त हो गयी। समाज में फैले भेद-भाव कला के क्षेत्र में भी नज़र आने लगा। नृत्य, संगीत, चित्रकला जैसी कलाओं को सीखने का अधिकार सिर्फ उच्च वर्ग को ही था। जो कुछ शेष था, वह पाश्चात्य संस्कृति की आँधी में समाप्त हो गया। लेकिन नवजागरण के फलस्वरूप कला और कलाकारों का महत्व बढ़ने लगा।

कला और कलाकार जीवन के सुख-दुख को अपनी कला में उतारकर उसे और मीठी बनाती है। प्रेमचन्द की कहानी 'बाँसुरी' ने कला की इस विशेषता की ओर इशारा किया है। रात को खेत की रखवाली करते वक्त बाँसुरी बजाने वाले किसानों की ओर संकेत करके लेखक कहते है इस बाँसुरी की आवाज़ से सन्नाटे ने सुरीलापन और अंधेरे ने आत्मिकता का आकर्षण दे दिया है। इसी ठंठी और घोर अंधकार से बचने केलिए यह

बाँशुरी उसे सहायता देती है। इरा आवाज़ में उन किसानों का दर्द भी था, जिसको लेखक ने यों व्यक्त किया है- "....जैसे कोई पवित्र आत्मा नदी के किनारे बैठी हुई पानी की लहरों से या दूसरे किनारे के खामोश और अपनी तरफ खींचने वाले पेडों से अपनी ज़िन्दगी की ग़म की कहानी सुना रही है।"[1] लेखक यह जाहिर करता है कि किसानी जिवन में कला की अहमियत होती है। प्रकृति के ताल-लय एवं सहजता उनके जीवन के भी है, वह कलात्मक या रचनात्मक रूप धारण कर उसे आनंद में डूबा देता है। यही उसका लक्ष्य है।

निम्न जाति में जन्म होने के कारण छुआछूत का शिकार होने वाला 'सौभाग्य के कोडे' कहानी का 'नाथुराम' जब बडा संगीत आचार्य बन जाता है, तब समाज उसका सम्मान करने लगता है। संगीत प्रस्तुति केलिए देश-विदेश में सैर करने वाला नाथुराम अपने देश का नाम रोशन करता है। वह सिर्फ संगीत में ही नहीं बल्कि अन्य कलाओं में भी निपुण था - "वह केवल एक गुणी नहीं, सर्वगुणी था, गाना, शहनाई-बजाना, पखावज, सारंगी, तम्बूरा, सितार-सभी कलाओं में दक्ष हो गया।"[2] इस प्रकार कला के माध्यम से अपनी संस्कृति का महत्व विश्व भर में फैलाने में वह सफल हो जाता है। इसका मतलब है कि कला जाति, धर्म जैसे संकुचित भेद-भावों के परे है। वह हमारे भौतिक जीवन को आध्यात्म धरातल तक पहुँचा देता है।

---

1. प्रेमचन्द्र - बाँसुरी, प्रेमचन्द्र रचनावली - 12, (सं) रामविलास शर्मा,पृ. 173
2. प्रेमचन्द्र - सौभाग्य को कोडे, प्रेमचन्द रचनावली - 13,(सं) रामविलास शर्मा, पृ. 62

5.2.8 प्रकृति एवं मानव की अवस्थिति

भारत की परंपरा और संस्कृति में प्रकृति और मानव के बीच अटूट संबंध रहा है। प्रकृति और मानव की अवास्थिति से मनुष्य में जो सामूहिक बोध उत्पन्न है, वह सबको स्वीकार करने और हर की अस्मिता को बनाए रखने में सहायक है। इसलिए भारत की संस्कृति प्रकृति की संस्कृति है, जो सरल सहज, सादगीऔर विविधता की है। नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में मानव और प्रकृति के अटूट संबंध के अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं।

माधवराव सप्रे की 'एक पथिक का स्वप्न' इस कोटी की कहानी है। तीन भागों में विभाजित इस ऐतिहासिक कहानी का आरंभ नायक के 'कन्दहार' के घने जंगलों से गुज़रने से होता है। घने जंगल के चित्रण से स्वच्छंद वातावरण का भी परिचय मिलता है। जंगल की अपूर्व शोभा के कारण उसे भय नहीं, बल्कि शांति महसूस हो रही थी। जंगल में भयानक शेर की आवाज़ से वह डरता है, लेकिन वह सुरक्षित रह जाते है। आगे रास्ते में हरिणी और उसके बच्चे का प्यार मार्मिक ढंग से प्रस्तुत हुआ है। इन दृश्यों के प्रस्तुतीकरण से लेखक एक ऐसी पारिस्थितिक व्यवस्था (Eco system) प्रस्तुत करते हैं, जिसमें पृथ्वी के पेड, पौधे, लता, प्राणी, जीवन-जंतु, मानव सब शामिल है और इसके बिना पृथ्वी का अस्तित्व नहीं और पृथ्वी का संतुलन नष्ट होता है। आगे नायक जंगल पार करके कुछ लोगों के पास पहुँचा और वे उसके साथ झगडते रहते हैं और पथिक घायल हो जाता है।

घने जंगल या प्रकृति और जानवर ने उसे घायल नहीं किया, बल्कि संरक्षक बने। लेकिन मानव ने उसके घायल किया। यहाँ प्रकृति और मानव का आपसी रिश्ता दिखाया गया है।

माधवराव सप्रे की कहानी 'आजम' में भी प्रकृति और मानव का परस्पर रिश्ता और दोनों एक दूसरे केलिए सहायक बनने की ओर संकेत किया गया है। इसका नायक 'आजम' अपनी संपन्नता की स्थिति में दूसरों की सहायता करता था। लेकिन जब वह गरीब हो गया तो इसकी सहायता केलिए सिर्फ प्रकृति ही थी। जब मालूम पड गया कि संपत्ति के बिना अब उसे कोई मान्यता नहीं देगी तो वह वनचरों का समागम श्रेष्ठ समझता है। 'तारस' नामक पर्वत के गगन चुम्बी शिखर पर वह पहुँच गया। हिंस्र जंतु वास करने वाले एक घन वन में एक छोटी-सी गुफा में सुरक्षित था। कहानी में लेखक स्पष्ट करते हैं - "मनुष्य के समान अन्य जीवों को भी यहाँ रहने का हक है। अन्य प्राणी और मनुष्य में जो संबंध हो, अब मनुष्य में क्या संबंध है, सो देखना चाहिए।"[1] प्रकृति में हर जीव-जंतु को अपना मूल्य एवं स्थान है। इसप्रकार मनुष्य और प्रकृति के आपसी रिश्ते का उदाहरण है यह कहानी।

5.2.8.1 स्त्री और प्रकृति का रिश्ता

स्त्री और प्रकृति में अनेक प्रकार की समानताएँ हैं। अनेक कार्यों को साथ करने की स्त्री की विशेष क्षमता संसार के अन्य प्राणियों या वर्गों

---

1. माधवराव सप्रे - आजम, माधवराव सप्रे की कहानियाँ, देवी प्रसाद वर्मा (सं) पृ. 69

में नहीं देखा जा सकता। उसी प्रकार संसार की हर धडकन प्रकृति पर निर्भर है। यही समानता स्त्री और प्रकृति को एक दूसरे के पास लाती है। प्रकृति के कण-कण जैसे मिट्टी, पत्थर, पेड, पौधा, पर्वत सब उन के लिए आत्मरक्षा के मार्ग बनते हैं। माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' की बूढ़ी ऐसी एक औरत है, जिसको अपनी मिट्टी के प्रति अधिक चाहता है। पड़ोसी ज़मीन्दार द्वारा हासिल की गयी अपनी झोंपडी से वह एक टोकरी भर मिट्टी लेना चाहती है, ताकि उस मिट्टी से वह चूल्हा बनाकर अपनी पोती केलिए रोटी पका सके। टोकरी सिर तक उठाने केलिए ज़मीन्दार से वह सहायता माँगती है, लेकिन ज़मीन्दार पराजित हो जाता है।

तब बूढी ने कहा कि एक टोकरी भर मिट्टी न उठा पाने वाले ज़मीन्दार वहाँ पडी हज़ारों टोकरी भर मिट्टी कैसे उठा पायेगा। इस से मनपरिवर्तित ज़मीन्दार बूढी की झोंपडी वापस कर देता है। कहानी में अपनी मिट्टी के प्रति उस औरत की - गहरी चाह के दो रूप मिलते हैं। एक तो देशप्रेम की और इशारा करता है तो दूसरा प्रकृति से अटूट रिश्ता दिखाता है। बूढी औरत का कथन इस बात को स्पष्ट करता है-"जब से यह झोंपडीछुटी है, तब से मेरी पोती ने खाना पीना छोड दिया... अब मैं यह सोचा कि इस झोंपडी में से एक टोकरी-भर मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊँगी।"[1] यहाँ लेखक यह दिखा रहे हैं कि औरत कहीं भी रहती हो, वहाँ के मिट्टी, पौधे, घास, वृक्ष, लता सब से एक आत्मीय रिश्ता

1. माधवराव सप्रे - एक टोकरी भर मिट्टी, आरंभिक हिन्दी कहानियों, विजयदेव झारी (सं) पृ. 251

बनाती है। शुक्ल जी की कहानी 'ग्यारह वर्ष का समय' में भी स्त्री और प्रकृति का संबंध देखा जा सकता है। ग्यारह वर्ष के बाद अपनी पत्नी को ढूँढने वाले एक पति की कहानी है यह। पति पहाडी प्रदेश के एक खण्डहर में पत्नी से मिलता है। जिस प्रदेश में वह औरत ग्यारह वर्षों तक रहती थी, उस प्रदेश के बारे में कहानी में ऐसा परिचय दिया गया है - "एक पगडण्डी के आश्रय में अब तक हम लोग चल रहे थे, जिस पर उगी हुई घास इस बात की शपथ खा के साक्षी दे रही थी कि वर्षों से मनुष्यों के चरण इस ओर नहीं पडे हैं।"[1] ऐसे घन-घोर जंगल में अकेली रहती थी वह औरत और प्रकृति की गोद में अत्यधिक सुरक्षित थी। प्रकृति के साथ मिल जुलकर रहने की स्त्री के अपार प्राकृतिक गुण का अच्छा उदाहरण है यह कहानी।

स्त्री की निर्जीवता को जीवंत बनाने में नदी, पेड, पौधे, चिडियाँ, फल-फूल सब सहायक बनते हैं। 'प्लेग की चुडैल' भी इस प्रकृति से ओतप्रोत है। मरे हुए समझकर नदी में फेंकने वाली औरत प्रकृति की गोद में आकर किस प्रकार अपना प्राण वापस लेती है, इसका जिक्र कहानी में हुआ है- "वह बहते-बहते ऐसी जगह आ पहुँची जहाँ करौंदे का एक बडा भारी पेड तट पर खडा था और उसकी एक घनी डाली झुककर जलमें स्नान कर रही थी। ... उस डाली में एक काँटा बहु जी की गिल्टी में इस तरह चुभ गया जैसे किसी फोडे में नश्तर।... झट उन्होंने अपना मुँह फेरकर देखा तो

1. रामचन्द्र शुक्ल - ग्यारह वर्ष का समय, आरम्भिक हिन्दी कहानियाँ, विजयदेव झारी (सं) 149

अपने को उस हरी शाखा की शीतल छाया में ऐसा स्थिर और सुखी पाया जैसा कोई श्रांत पथिक हिंडोले पर सोता हो।"[1] आगे पक्षीगण के कलरव स्वर से ऐसी अनुभूति हो रही है कि वह स्वर्गलोक में है। उस औरत ने अपने पूरे जीवन में इतने शांति और आनन्द महसूस नहीं किया था, जितने, प्रकृति के निकट आकर उसको मिला था।

5.3 भाषा

औपनिवेशिक शक्तियों ने भारत की एकता को रोकने केलिए विभिन्न प्रकार के षड्यंत्र रचे थे। उनमें से एक थी 'भाषा' की समस्या। एक सशक्त अभिव्यक्ति के माध्यम होने के कारण भाषायी समस्या लोगों के बीच गहरा खाई पैदा की थी। लेकिन नवजागरणकालीन कहानिकारों ने इसके विरुद्ध अपनी लेखनी चलाई और सभी भारतीय भाषाओं को समान अधिकार देने की कोशिश की। उनके अनुसार प्रत्येक भाषा का अपना महत्व है और प्रत्येक भाषा सांस्कृतिक उन्नति केलिए सहायक बनता है। इसलिए उन्होंने हिन्दी, उर्दू, फार्सी, अंग्रेज़ी संस्कृत जैसी सभी भाषाओं को कहानियों में स्थान दिया था।

'पण्डित और पण्डितानी' का 'पण्डित' अंग्रेज़ी, संस्कृत, हिन्दी आदि भाषाओं में ज्ञानी है तो उग्र की कहानी 'ईश्वरद्रोही' में 'रामजी' अंग्रेज़ी, संस्कृत, हिन्दी और फारसी पढ़ते थे। इसके बारे में कहानी में यों व्यक्त किया

1. मास्टर भगवानदास - प्लेग की चुडैल, आरम्भिक हिन्दी कहानियाँ, विजयदेव झारी (सं) पृ. 132

गया है - "कालेज में उसने अंग्रेज़ी के साथ संस्कृत ले रखी थी और गर पर गोपाल जी के एक पुराने मित्र मौलवी साहब उसे फारसी पढाया करते थे।"[1]

ज्वालादत्त शर्म के मिलन में सभी भाषाओं को प्रमुखता देने के साथ-साथ मातृभाषा को उच्चतर स्थान दिया जाता है। हिन्दी भाषा की उन्नति को बढ़ावा देने वाली इस कहानी के नायक रामनंद को हिन्दी से बडा प्रेम था। कहानी में इसकी ओर इशारा किया गया है - "समय मिलने पर वह हिन्दी के उत्तमोत्तम ग्रंथ पढ़ता और समाचार -पत्रों में सबसे पहले हिन्दी के अखबार देखा करता था। हिन्दी की गरीबी पर वह दुखी थी। ज्यों-ज्यों वह अन्य भाषाओं के ग्रन्थ पढ़ता त्यों-त्यों उसके मन में हिन्दी की हीनता का संताप अधिक होता जाता।.... व्रजभाषा बनाम खडीबोली का व्यर्थ झगडा जब उठा था तब उसने कल्पित नाम देकर अनेक युक्तिपूर्ण लेख खडीबोली के पक्ष में लिखे थे।... उसने यह बात खूब अच्छी तरह जान ली कि बिना मातृभाषा की उन्नति के देश की यथार्थ उन्नति होना संभव नहीं।"[2]

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की कहानी 'कमला' में भी वे हिन्दी को प्रमुख स्थान देते है लेकिन साथ ही अन्य भाषाओं पर भी। कहानी की नायिका कमला के बारे में यों बताया गया है - "शिक्षा हिन्दी की मिलती थी। पर मराठी और गुजराती बालिकाओं में रहने के कारण उन दोनों भाषाओं पर

---

1. पांडेय बेचन शर्मा उग्र - ईश्वरद्रोही, https://www.hindisamay.com/content/1605/1/2 रचनाकार - पांडेय - बंचन शर्मा - उग्र की- कहानी- ईश्वरद्रोही -CSPX
2. ज्वालादत्त शर्मा - मिलन, सरस्वती (कहानी खण्ड), पृ. 206

भी दखल पा गई है। तीनों भाषायें पढ लेती, तीनों में पत्र लिख लेती है।"[1]

इसप्रकार नवजागरणकालीन कहानिकार सभी भाषाओं का महत्व दिखाने के साथ भारत एक राष्ट्र होने के नाते वहाँ एक राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी को प्रमुख स्थान देने की कोशिश की गई है।

5.3.1 लोक भाषा

जिस प्रकार गांव से देश की उन्नति मानी जाती है। उसी प्रकार ग्रामीण भाषा देश की संस्कृति को आगे बढाती है। बंगमहिला की कहानी 'दुलाईवाली' में ग्रामीण भाषा जैसे 'भोजपुरी' का प्रयोग हुआ है। मिरजापुर में प्रयुक्त भोजपुरी की संवेदना यों प्रस्तुत है। -'मसलन-अरे, इत कर मइई तो नाही अईलेन।"[2] इसके अलावा अवधी भाषा का प्रयोग भी इसमें प्राप्त है। 'कुम्भ में छोटी बहु' में भी भोजपुरिया गाँव के चित्रण के साथ भोजपुरी भाषा का प्रयोग भी देखने को मिलता है- "का हो बहु, का सल्लाह होत बाय? पयाग जी नहाए चल जावः का? है भाई हम हूँ के लिआवत चलः।"[3]

बंगमहिला की कहानी 'संसार-सुख' में घर की मज़दूरिन लोकभाषा का इस्तेमाल करती है - "देख बेटा रामो। हमारा एक बात सुन, बहु के अब एक्को घंटो कहाँ मति रख। काल ओके अपने संगे लियाए जा, अब हो ओके नैहर पहूँचाय दे।"[4] कहानी का नायक रमानाथ से अपनी पत्नी को साँस से

1. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला - कमला - सरस्वती पत्रिका कहानी खण्ड, पृ. 266
2. बंगमहिला - दुलाईवाली - बंगमहिला रचना समग्र, आस्मिता तिवारी, पृ. 50
3. बंगमहिला - कुम्भ में छोटी बहु -बंगमहिला रचना समग्र, आस्मिता तिवारी, पृ. 29
4. बंगमहिला - संसार सुख, बंगमहिला रचना समग्र, आस्मिता तिवारी, - पृ. 113

बचाने का उपदेश देती है मज़दूरिन। इस प्रकार लोक भाषा उस ग्रामीण जनता की भाषा है जो देश की संस्कृति से अधिक निकट रहती है। लोक भाषाओं की प्रतिष्ठा के बिना देश की उन्नति नहीं होगी।

5.3.2 मुहावरे और लोकोक्ति

प्रत्येक देश में प्रचलित मुहावरे और लोकोक्तियाँ वहाँ की संस्कृति का परिचय देते हैं लोक भाषा में मुहावरे और लोकोक्ति का प्रयोग होते हैं। बंगमहिला की कहानी 'दुलाईवाली' में मुगलसाय, मिरजापुर और काशी को खान-पान, रहन-सहन के साथ भाषा-बोली में वहाँ की लोकोक्तियों और कहावतों का प्रयोग प्राप्त है। लोकोक्तियों के उदाहरण हैं - "छूछे को कौन पूछे।"[1] और "अटकाव होना"[2] आदि। इसके अलावा भोजपुरी भाषा की जुगलबन्दी भी खूब हुई है - 'कपडा - कपडा', 'बांध-बूध', 'रोती-धोती' आदि।

निष्कर्ष

भारत की सांस्कृतिक संकल्पना ग्रामीण जनता की संस्कृति से जुडी हुई है। भारत की आत्मा गाँवों में निर्भर होने के कारण सांस्कृतिक समन्वय का ढ़ाँचा गाँवों से शुरु करने की अपेक्षा नवजागरणकालीन कहानिकार करते हैं। प्रकृति से जुडकर रहने वाली यह लोक संस्कृति विभिन्न रीति-रिवाज़ों,

---

1. बंगमहिला - दुलाईवाली, बंगमहिला रचना समग्र, पृ. 48
2. वही - पृ. 50

लोक गीत, वेश-भूषा, त्योहार-मेला और लोक भाषाओं को एक साथ उन्नत और समन्वित प्रदान करने में सहायता देती है। लेकिन इस संस्कृति के स्थान पर उपभोग की संस्कृति शुरु होने लगी, यह स्वतंत्र भारत की स्वदेशी भावना केलिए खतरनाक स्थापित होती है।

❖ ❖ ❖

उपसंहार

उपसंहार

भारत बहुलता का देश है। 'विविधता में एकता' भारत का मूल स्वर है। सबको स्वीकारने वाला यह सहिष्णुता भाव ही विश्व स्तर के अन्य देशों से भारत को अलग करता है। भारत की इस संस्कृति ने आर्यों से लेकर मुगलों तक के लोगों को यहाँ आने, अपना देश मानकर यहाँ की उन्नती केलिए काम करने लायक बनाया। लेकिन बाद में आये अंग्रेज़ों ने भारत को लूटकर तहस नहस करने की कोशिश की। 'जेम्स मिल' (The History of British India) 'कैथरिन मेयो' (Mother India) और रुडयार्ड किप्लिंग की रचनाएँ भारतीय संस्कृति और भारतीय वैभव को निचला स्थापित करने में उद्यत हुए थे। लेकिन अपने ही देश में गुलाम बननेवाली जनता अपनी अस्मिता और स्वतंत्रता के बारे में सजग हुई। भारत का हर व्यक्ति अपने देश की खूबियों को समझकर सभी दृष्टियों से एक स्वतंत्र राष्ट्र रूपायित करने को तैयार हुआ। देश की स्वतंत्रता और राष्ट्र संकल्पना का एक नया स्वरूप सामने आया। भारत के नवजागरणकालीन साहित्यकार का लक्ष्य राष्ट्र निर्माण केलिए ज़रूरी प्रत्येक पहलू की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट करना रहा था। यह लक्ष्य उस समय की अधिकांश हिन्दी कहानियों के तेवर और आत्मा में प्राप्त है। जितना संभव है उतनी कहानियों को एकत्रित कर इस शोध कार्य में विश्लेषित कर राष्ट्र संकल्पना की अवधारणा को प्रमाणित करने की कोशिश की गयी है। इसमें तत्कालीन

चर्चित कहानियों के साथ अचर्चित कहानियों को भी बटोर लिया गया है।

राष्ट्र संकल्पना की अवधारणा के लिए विभिन्न पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों के विचारों को सम्मिलित किया गया। राष्ट्र संकल्पना में मुख्यतः सुसंस्कृत, पुष्ट एवं स्वतंत्र राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियाँ या पूर्ण स्वावलंबन अनिवार्य है। एक देश की अर्थ व्यवस्था पर निर्भर है उस देश की राजनैतिक स्वतंत्रता और दृढ़ता।

भारत की राजनैतिक संकल्पना की शुरुआत गुलामी से पीड़ित स्वाभिमान जनता की अपने देश के स्वशासन की मांग से हुयी। भारत की इस राजनैतिक संकल्पना से लोगों ने यह महसूस किया कि सच्ची स्वतंत्रता वही है, जहाँ सबका स्वातंत्र्य सुरक्षित रह सके और सबको अपनी उन्नति का समान अधिकार हो। व्यक्ति-व्यक्ति से शुरू होनेवाला रह स्वातंत्र्य खाने-पीने, वस्त्र पहनने से लेकर समान आर्थिक सुविधाओं पर भी निर्भर है। अतः यह संविधान सभी नागरिकों को समान अधिकार देता है। भारत के संविधान में लिखित कानूनों की बुनियाद पर चालू राजनैतिक शासन व्यवस्था भारत की राष्ट्र संकल्पना का पहला पड़ाव थी।

भारत की सामाजिक संकल्पना व्यक्ति विकास से शुरू होती है। व्यक्ति समाज का एक हिस्सा बनकर उसका सृष्टा और सृष्टि की भूमिका निभाता है। इससे विभिन्न वर्ग, वर्ण, जाति, धर्म, लिंग आदि भेद-भाव नष्ट

होकर समाज में समन्वय पैदा हो जायेगा। मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा ही यहाँ प्रमुख है। इस 'विभिन्नता में एकता' का भाव ही भारत की सामाजिक संकल्पना का मूल स्वर है जो मानवीय मूल्यों पर स्थित है।

सामूहिक बोध जो भौम सदाचार एवं साकल्यता पर स्थित है, उस प्रकृति की संस्कृति ही भारत की सांस्कृतिक संकल्पना की विशेषता है। प्रकृति के समान भारत की संस्कृति भी विभिन्न भाषाएँ, त्योहार, वेश-भूषा, रीति-रिवाज़, आचार-विचार से संकलित है। यही भारत की सांस्कृतिक संकल्पना है।

राष्ट्र संकल्पना में भौगोलिक सीमा का भी स्थान है। अतः राष्ट्र संकल्पना से मतलब है एक भौगोलिक सीमा के अंतर्गत एक केन्द्रीय राजनीतिक, आर्थिक और प्रशासनिक व्यवस्था के अधीन रहनेवाली जनता, वहाँ की प्रकृति और सभी जीव-जंतुओं और प्राणियों की सहस्थिति है। आज तक भारत में यह स्वप्न सदृश्य स्थिति आयी नहीं। भारत में स्वदेशी भावना से शुरु हुए स्वतंत्रता आन्दोलन ने धीरे-धीरे विदेशी चोला पहनकर अपनी सहजता को नष्ट कर दिया। अब उस खोई हुई की पीड़ा हम अनुभव करते हैं। इसलिए नवजागरणकालीन कहानियों के पुनर्पाठ से उस राष्ट्र को हम टटोलते हैं जो असल में रूपायित होना था और अब भी हमारे पैर के नीचे से फिसल रहा है।

❖ ❖ ❖

संदर्भ ग्रंथसूची

संदर्भ ग्रन्थ सूची

मूलग्रन्ध

1.	अपना अपना भाग्य	जैनेन्द्रकुमार http://www/hindikunj.com /2017/07/apna-apna- bhagya.html
2.	अपूर्व प्रतिज्ञा पालन	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016
3.	अनाश्रित	इलाचन्द्र जोशी सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
4.	आजम	माधवराव सप्रे हिन्दुस्तानी अकादमी, अलहाबाद, सं. 1982
5.	आतिथ्य	जैनेन्द्रकुमार सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
6.	आश्चर्य जनक घंटी	सत्यदेव परिव्राजक सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
7.	आश्रयदाता	मुनीश्वर दत्त सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904

8.	इस्तीफा	प्रेमचन्द जनवाणी प्रिंटिंग सर्वीस दिल्ली, सं. 1996
9.	ईदगाह	प्रेमचन्द जनवाणी प्रिंटिंग सर्वीस दिल्ली, सं. 1996
10.	ईद और होली	श्रीयुद सेठ गोविन्ददास सरस्वती पत्रिका, नागरी प्रचारिणी सभी, काशी, सं. 1904
11.	ईश्वर द्रोही	पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र http:// www.hindisamay.com/ content/1605/1/2/ रचनाकार - पांडेय-बेचन- शर्मा-उग्र- की कहानी- ईश्वरद्रोही .CSPX
12.	ईश्वरीय न्याय	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1996
13.	ऋणी परिशोध	मुनीश्वर दत्त सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
14.	एक पथिक का स्वप्न	माधवराव सप्रे जैमिनी प्रिंटिंग सर्विस दिल्ली, सं. 2016

15. एक टोकरी भर मिट्टी	माधवराव सप्रे जैमिनी प्रिंटिंग सर्वीस दिल्ली, सं. 2016
16. एक भीषण स्मृति	पांडेय बेचन शर्मा उग्र प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990
17. अंधेर	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
18. कफन	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
19. कमला	सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
20. कायर	श्रीमति विपुला देवी सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
21. कुरबानी	शिवरानी देवी शिल्पायन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स दिल्ली, सं. 2016
22. कुंभ में छोटी बहु	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016

23. कुसुम	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
24. खुदाराम	पांडेय बेचन शर्मा उग्र प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990
25. खेल	जैनेन्द्रकुमार - खेल, https://www.bharatdarshan.co.nz/lit-collection/literature/783/khel-story-jainedra-html
26. गरीबों का स्वर्ग	श्रीनाथ सिंह सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
27. ग्राम	जयशंकर प्रसाद राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1990
28. ग्रैजुएट की नौकरी	बदरीनाथ भट्ट सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
29. ग्यारह वर्ष का समय	रामचन्द्र शुक्ल जैमिनी प्रिंटिंग सर्विस दिल्ली, सं. 2016
30. घमंट का पुतला	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996

31. चन्द्रलोक की यात्रा	केशवप्रसाद सिंह सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
32. चिकित्सा का चक्कर	कृष्णदेव प्रसाद दौड सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
33. झलमला	पदुमलाल पुन्नलाल बख्शी सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
34. ठाकुर का कुआँ	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
35. दहीबडे	पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र http:// www.hindisamay.com/ content/1605/1/2/ रचनाकार - पांडेय-बेचन- शर्मा-उग्र- की कहानी-दहीबडे .CSPX
36. दान - प्रतिदान	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016
36. दान-प्रतिदान	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016

37. दो भाई	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
38. दुराशा	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
39. दुनिया का सबसे अनमोल रतन	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
40. दुलाईवाली	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016
41. देश-द्रोह	पांडेय बेचन शर्मा उग्र प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990
42. देशद्रोही	गिरिराजदत्त शुक्ल गिरीश सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
43. धर्मदृष्टि	मुनीश्वर दत्त सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
44. नमक का दारोगा	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996

45.	नरक का मार्ग	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
46.	नर-नारी	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016
47.	नई कहानी का प्लाट	अज्ञेय http://www.hindikahani-hindi-kavita.com/Nayi Kahani Ka Plot Agyeya
48.	नशा	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
49.	निहलिस्ट	पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र ए.पी.एन. पब्लिकेशन, दिल्ली, सं. 2017
50.	पण्डित और पण्डितानी	गिरिजादत्त वाजपेयी जैमिनी प्रिंटिंग सर्वीस दिल्ली, सं. 2016
51.	पत्नी	जैनेन्द्र https://www.bharatdarshan.co.nz/lit-collection/literature/427/patni-jainedra-html
52.	पत्थर की पुकार	जयशंकर प्रसाद राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1990

53. पशु से मनुष्य	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
54. पूस की रात	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
55. पंच परमेश्वर	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
56. पैपुजी	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
57. प्रलय की रात्री	सुदर्शन सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
58. प्लेग की चुडैल	भगवान दास जैमिनी प्रिंटिंग सर्विस दिल्ली, सं. 2016
59. भग्न हृदय	चतुर्सेन शास्त्री सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा सं. 1904
60. भाई-बहन	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016

61. बडे घर की बेटी	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
62. बलिदान की भावना	मुनीश्वर दत्त सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
63. बीमार बहिन	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
64. बूढी काकी	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
65. बाँसुरी	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
66. फाँसी	कौशिक http:// www.hindisamay.com/ content/447/:/रचनाकार - विश्वंभरनाथ- शर्मा - कौशिक - की कहानी-फाँसी .CSPX
67. मन की दृढ़ता	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016
68. ममता	जयशंकर प्रसाद राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1990

69.	मातृहीना	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016
70.	मास्टरजी	जैनेन्द्र भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली, सं. 1998
71.	मेरी माँ	पांडेय बेचन शर्मा उग्र प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990
72.	मिलन	ज्वालादत्त शर्मा सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
73.	मंत्र	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
74.	यही मेरा वतन है	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
75.	रज्जू का सौदा	पृथ्वीराज शर्मा सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
76.	रक्षाबन्धन	कौशिक सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904

77.	रात का सफर	श्री. लक्ष्मी झा सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
78.	रेन ऑफ टेरर	पांडेय बेचन शर्मा उग्र प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990
79.	रंगीन सपना	लक्ष्मीनारायण मिश्र सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
80.	विचित्र होली	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
81.	विधवा	ज्वालादत्त शर्मा सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
82.	विमाता	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
84.	विवशता	भगवतीचरण वर्मा सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904

85. विश्वास का फल	माधव प्रसाद मिश्र http:// www.hindisamay.com/ content/805/1/रचनाकार - माधव - प्रसाद- मिश्र- की कहानी-विश्वास का फल.CSPX
86. वीर कन्या	पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र ए.पी.एन पब्लिकेशन्स दिल्ली, सं. 2017
87. वे बच्चे	मोहनलाल मेहतो सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
88. शत्रु	अज्ञेय http://gadhyakosh.org/gk/ शत्रु -/-अज्ञेय
89. शरणागत	जयशंकर प्रसाद राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1990
90. सच का सौदा	सुदर्शन सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
91. सद्गति	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996

92. सवा सेर गेहु	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
93. सिक्ख सरदार	पांडेय बेचन शर्मा उग्र प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990
94. सुख	विनोदकुमार ब्यास सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904
95. सुहाग की साडी	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
96. सौत	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
97. सौतेली माँ	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
98. सौभाग्य के कोडे	प्रेमचन्द जनवाणी प्रकाशन दिल्ली, सं. 1996
99. संसार सुख	बंगमहिला आयुष पब्लिशिंग हाउस उत्तर प्रदेश, सं. 2016

100. हींगवाला	सुभद्राकुमारी चौहान सरस्वती पत्रिका नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं. 1904

सहायक ग्रन्थ

1.	औपनिवेशिक भारत में संस्कृति और विचारात्मक संघर्ष	डॉ. के.एन पणिक्कर अनु. आदित्य नारायण सिंह ग्रन्थ शिल्पी, नई दिल्ली, सं. 2003
2.	इतिहास और संस्कृति	वीरेन्द्र मोहन शिल्पायन, दिल्ली, सं. 2014
3.	गाँधी, अम्बेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्साएँ	डॉ. रामविलास शर्मा वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
4.	गाँवों की हालत (1885 से 1985)	वाई. बी. माथुर नेशनल इस्टीट्यूट ऑफ रूरल डिवलपमैंट हैदराबाद, 1985
5.	जालियाँवाला बाग हत्याकांड	रामपाल सिंह, विमला देवी, ग्लोरियस पब्लिशर्स नई दिल्ली, सं. 2016
6.	काव्य और कला	जयशंकर प्रसाद भारती भण्डार लीडर प्रेस इलाहाबाद, सं. 1999

7.	डॉ.अंबेडकर -आर्थिक विचार एवं दर्शन	डॉ. नरेन्द्र जादव प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
8.	धर्म और सांप्रदायिकता	नरेन्द्र मोहन प्रभात प्रकाशन, दिल्ली सं. 1996
9.	नवजागरणकालीन पत्रकारिता और भारत	नंददुलारे वाजपेयी अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, सं. 2008
10.	परिवार के सौहार्द	क्षमा गोस्वामी सं. 2005
11.	परंपरा इतिहास बोध और संस्कृति	श्यामचरण दुबे राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1991
12.	प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था और राजशास्त्र	डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार नई दिल्ली
13.	प्राचीन भारत का परिचय	रामशरण शर्मा ओरियेंट ब्लैकस्वैन प्रा. लि नई दिल्ली, सं. 2009
14.	प्राचीन भारत की संस्कृति और समाज	दामोदर धर्मानन्द कोंसबी राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2014
15.	भारत में राजनीति कल और आज	रजनी कोठारी वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2010

16.	भारतीय संस्कृति के स्वर	महादेवी वर्मा राजपाल प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2011
17.	भारत की संस्कृति की कहानी	डॉ. भगवती चरण उपाध्याय राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, सं. 2012
18.	भारतीय क्रांतिकारी आन्दोलन और हिन्दी साहित्य	डॉ. विश्वमित्र उपाध्याय प्रगतिशील जन प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1989
19.	भारतीय राष्ट्र और राष्ट्रवाद	डॉ. मधुकर गंगाधर मुकुल प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2013
20.	भारतीय राष्ट्रवाद और प्रेमचन्द	जितेन्द्र श्रीवास्तव प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली, सं. 1979
21.	भारतीय संस्कृति का इतिहास	सत्यकेतु विद्यालंकार श्री सरस्वती सदन नई दिल्ली, सं.1979
22.	भारतीय अर्थतंत्र इतिहास और संस्कृति	अमर्त्य सेन राजपाल एण्ड सन्ज़ नई दिल्ली, सं. 2002
23.	भारतीय नवजागरण और पुनरुत्थानवादी चेतना	मोहितकुमार हालदार अनुवादः कर्णसिंह चौहान ग्रन्थशिल्पी (इंडिया) प्र.लि नई दिल्ली, सं. 2002

24.	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और हिन्दी नवजागरण की समस्यायें	डॉ. रामविलास शर्मा वाणी प्रकासन, नई दिल्ली, सं. 2000
25.	भारत के किसान विद्रोह - 1850-1900	एल. नटराजन स्वर्ण जयन्ती, नई दिल्ली, सं. 1998
26.	भारत में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्‌भव और विकास	विपन चन्द्र अनामिका पब्लिशर्स एण्ड टिस्टिब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड नई दिल्ली, सं.2018
27.	भारतीय सामंतवाद	रामशरण शर्मा राजकमल प्रकाशन दिल्ली, सं. 1998
28.	भारतीय नवजागरण एवं राष्ट्रीय आन्देलन	प्रो. (डॉ) सोहन राज तातेड डॉ. विद्यासागर सिंह साक्षर भारत, जयपुर सं. 2016
29.	भारत में अंग्रेज़ी राज्य	अनिल कुमार द्विवेदी आविष्कार प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2015
30.	भारत तब से अब तक	भगवान सिंह शब्दकार, नई दिल्ली, सं.1996
31.	भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास	मन्मथलाल गुप्त आत्माराम एण्ड संज़ नई दिल्ली, सं. 1986

32.	भारत का समाजवादी आन्दोलन	डॉ. युगेश्वर यश पब्लिकेशन्स मुम्बई, सं. 2004
33.	भारत की सांस्कृतिक चेतना	डॉ. गणेश खरे शांति प्रकाशन, इलाहाबाद, सं. 1989
34.	भारतीयता की पहचान	विद्यानिवास मिश्र वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2008
35.	भारतीय दर्शन	डॉ. एस राधाकृष्णन राजपाल एण्ड संज़ दिल्ली, सं. 1969
36.	भारतीय संस्कृति	नरेन्द्र मोहन प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1997
37.	भारत में सांप्रदायिकता का इतिहास और परंपरा	असगर अली एनजीयर साहित्य उपक्रम, दिल्ली, सं. 2003
38.	भारतीय समाज में प्रतिरोध की परंपरा	मैनेजर पाण्डेय वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2013
39.	भारतीय संस्कृति कुछ विचार	डॉ. सर्वपल्लि राधाकृष्णन राजपाल एण्ड संज़ा नई दिल्ली, सं. 1996
40.	भाषा की राजनीति और राष्ट्रीय अस्मिता	ज्ञानतोष कुमार झा सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2014

41.	बाज़ार और सामाजः विविध प्रसंग	गिरीश मिश्र स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2009
42.	बीसवीं सदी की महिला कहानिकारों की कहानियाँ	सुरेन्द्र तिवारी (सं) नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2010
43.	मध्यकालीन भारत का इतिहास	डॉ. वीरेन्द्र सिंह बघेल नीलकिरी प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2015
44.	राजनीतिक सिद्धांत की रूपरेखा	ओम प्रकाश गाबा मथुर पेपर बुक्स नई दिल्ली, सं. 1979
45.	राष्ट्र और मुसलमान	नासिरा शर्मा किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2011
46.	राष्ट्र राष्ट्रीयता नवराष्ट्रीयता	डॉ. के. वनजा वाणी प्रकाशन दिल्ली, सं 2020
47.	राष्ट्रीयता	बाबू गुलाबराय किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1996
48.	राष्ट्रवाद का संकट	मदन कश्यप प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली, सं. 2014
49.	राष्ट्रीयता की अवधारणा और भारतेन्दुयुगीन साहित्य	प्रमोद कुमार अनुझा बुक्स, नई दिल्ली, सं. 2014

50.	राष्ट्रीय साहित्य तथा अन्य निबंध	नन्ददुलारे वाजपेयी नई दिल्ली, सं. 2012
51.	लोक साहित्यः सिद्धांत और प्रयोग	डॉ. श्रीराम शर्मा विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, सं. 1973
52.	समाज और संस्कृति	सुभाष शर्मा किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2008
53.	सामाजवाद, धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक न्याय	सुरेन्द्र मोहन राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2006
54.	सामाजिक क्रांति का दस्तावेज (भाग1)	शंभूनाथ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2006
55.	सामाजिक क्रांति का दस्तावेज (भाग2)	शंभूनाथ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2006
56.	साहित्य इतिहास और संस्कृति	शिवकुमार मिश्र वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2009
57.	साहित्य और संस्कृति	मोहन राकेश राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1975
58.	साहित्य का समाजशास्त्र	बच्चनसिंह लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, सं. 1997

59.	संस्कृति के चार अध्याय	रामधारी सिंह दिनकर लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, सं. 2007
60.	संस्कृति और समाजवाद	सच्चिदानंद सिन्धा वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2004
61.	संस्कृति की उत्तरकथा	शंभूनाथ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2000
62.	सांप्रदायिकता अतीत और वर्तमान	अरुण कुमार प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली, सं. 1996
63.	सांप्रदायिक राजनीतिक तथ्य एवं मिथक	राम पुनियानी अनु. रामकिशन गुप्ता वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली सं. 2005
64.	स्वतंत्रता आन्दोलन (1857-1947)	डॉ. वीना अग्रवाल एजुकेशनल पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, सं. 2011
65.	स्वतंत्रता संग्राम में अछूतों का योगदान	डी.सी. डीन्कर तुला चंदानी उत्तर प्रदेश, सं. 1986
66.	स्त्री अस्मिता के प्रश्न	सुभाष संतिया नई दिल्ली, सं. 2013
67.	स्त्री संघर्ष का इतिहास (1800-1990)	राधा कुमार वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2009

68.	हमारी सांस्कृतिक एकता	रामधारी सिंह दिनकर नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, सं. 2006
69.	हरित भाषा वैज्ञानिक विमर्श	डॉ. के. वनजा वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2015
70.	हिन्दी स्वराजः शताब्दी विमर्श	कन्हैया त्रिपाठी (सं) वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2010
71.	हिन्दी साहित्य उद्‌भव और विकास	हज़ारी प्रसाद द्विवेदी राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2012
72.	हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास	बच्चनसिंह राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1996
73.	हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, सं. 2009
74.	हिन्दी नवजागरण और संस्कृति	शंभूनाथ आनंद प्रकाशन कोलकत्ता, सं. 2004
75.	1857 और नवजागरण के प्रश्न	प्रदीप सक्सेना नेहा प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2015
76.	1857 का पहला मुक्ति संग्राम	देवेन्द्र चौबे, बद्रीनारायण, हितेन्द्र पटेल (सं) प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, सं. 2008

77.	1857 का मुक्ति संग्राम, भ्रम, भ्रान्तियाँ और सत्य	डॉ. धर्मेन्द्र नाथ राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, सं. 2011
78.	1857 विरासत से जिरह	राजीव रंजन गिरी (सं) सामयिक बुक्स नई दिल्ली, सं. 2009
79.	1857 बिहार-झारखंड में महायुद्ध	प्रसन्न कुमार, चौधरी श्रीकान्त राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2008
80.	20 वीं सदी का नवजागरण और हिन्दी साहित्य	डॉ. सूर्यनारायण सरणसुभे ज्योति पब्लिकेशन दिल्ली, सं. 2013

अंग्रेज़ी पुस्तकें

1.	Colonialism and Neo Colonialism	Jean Paul Sartre Edited Gallimard Paris, 1964 Translation by Azzedine Haddour, 2001
2.	Culture and society	Reymond Williams Chatto & Windus Ltd London, First Edition 1950
3.	Imagined Communities: Reflection on the origin and spread of Nationalism	Benedict Anderson Verso Books, London, 1991

4.	Nation and Narration	Homi.K. Bhabha Routledge, London 1990
5.	Nation Building in India	J.P. Narayan Bhahmanad Navachetna Prakashan, Varanasi, 2006
6.	Nation and Nationalism	Ernest Gellner Basic Black Well, 1986
7.	Nationalism	Ravindra Nath Tagore Macmillians Co. London, 1923
8.	What is Nation	Ernest Renan Conference faith en Sorbonne, Sorbonne, 1882
9.	The Argumentative Indian	Amartya Sen Penguin Books, London, 2005
10.	The National Culture of India	S. Abid Hussain National Book Trust, India, New Delhi Ed. 2014
11.	The study of Indian Society	Hans Nagpaul S. Chand & Co. Ltd, New Delhi, Ed. 1972

पत्र-पत्रिकाऐं

1. वर्तमान साहित्य - अक्तूबर 2014
2. वर्तमान साहित्य - अक्तूबर 2015
3. दस्तावेज़ - जनवरी -मार्च 1991
4. दस्तावेज़ - अप्रैल -जून 1991
5. दस्तावेज़ - अक्तूबर -दिसंबर 2003
6. नया ज्ञानोदय - जून 2008
7. नया ज्ञानोदय - जुलाई 2014
8. नया ज्ञानोदय - अगस्त 2014
9. मधुमति - अप्रैल 2001
10. मधुमति - जून 2013
11. मधुमति - अगस्त 2016
12. मधुमति - फरवरी 2017
13. वाङ्मय - जनवरी- मार्च 2004
14. वाङ्मय - अक्तूबर-दिसंबर 2005
15. वागर्थ - जनवरी 2003
16. वागर्थ - मार्च 2004
17. साक्षात्कार - अगस्त - सितंबर 2004
18. साक्षात्कार - अप्रैल - मई 2005
19. हंस - जुलाई 2002
20. हंस - जनवरी 2003
21. हंस - अगस्त 2006

कोश ग्रन्थ

1.	हिन्दी पर्यायवाची कोशी	भोलानाथ तिवारी तक्षशिला प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 1985
2.	हिन्दी साहित्य कोश	डॉ. सत्येन्द्र शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा सं. 1971

परिशिष्ट

परिशिष्ट

शोध छात्रा के प्रकाशित शोध लेख

1. हिन्दी की प्रारंभकालीन कहानियों में नवजागरण की चेतना, अनुशीलन, जनवरी 2017 (सं) प्रो. (डॉ.) के. वनजा, हिन्दी विभाग, कोच्चिन विज्ञान व प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, कोच्ची, आई.एस.एस.एन - 2249-2844
2. समकालीन कहानी के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्र की संकल्पना, नूतनवाग्धारा, दिसंबर 2018 (सं) अश्विनी कुमार शुक्ल -आई.एस.एस.एन
3. सावित्री बाई फुले की कवितायेंः नवजागरण का सच्चा दस्तवेज़, अनुशीलन, (सं) प्रो. (डॉ.) के. वनजा, हिन्दी विभाग, कोच्चिन विज्ञान व प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, कोच्ची, आई.एस.एस.एन - 2249-2844

प्रपत्र प्रस्तुति

अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी

1. भूमण्डलीकरण और आज की कहानी, समकालीन हिन्दी साहित्य और विविध विमर्श विषय पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, हिन्दी विभाग, एस. एस.वी, महाविद्यालय, वलयंचिरंगरा, पेरुम्बावूर, केरल, 14-15, जनवरी, 2018
2. कहानी के नएपन में राष्ट्र की तलाश, नए साहित्य प्रश्न विषय पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, हिन्दी विभाग, सरकारी महिला महाविद्यालय, तिरुवनंतपुरम, केरल, 10-12, जुलाई, 2018

3. स्वच्छन्दतावाद की व्यवस्था संकल्पनाः प्रेमचन्द और प्रसाद की कहानियों के परिप्रेक्ष्य में, हिन्दी का स्वच्छंदतावादी साहित्यः एक पुनर्पाठ विषय पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, हिन्दी विभाग, सरकारी महाराजास महाविद्यालय, एरणाकुलम, केरल, 5-7, सितंबर, 2018

4. नवजागरणकालीन हिन्दी कहानियों में स्त्री और प्रकृति, पारिस्थितिक विमर्शः भारतीय दर्शन, संस्कृति एवं साहित्य का परिप्रेक्ष्य विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी, हिन्दी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय, पांडिच्चेरी, 20-21, मार्च, 2019

राष्ट्रीय संगोष्ठी

1. विभाजन की त्रासदी में कृष्णा सोबती की कहानियाँ - कृष्णा सोबती का रचना संसार विषय पर यू जी सी राष्ट्रीय संगोष्ठी - हिन्दी विभाग, कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कोच्ची, 16, 17 मार्च, 2018

2. नवजागरणकालीन अल्पज्ञात आलोचक - नवजागरणकालीन हिन्दी और मलयालम आलोचना, विषय पर यू.जी.सी. राष्ट्रीय संगोष्ठी - हिन्दी विभाग, कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्विविद्यालय, कोच्ची, 25-27, फरवरी, 2019